अद्भुत सीताचरितमानस
(भावार्थ सहित)

हिंदी काव्यान्तरण
डॉ यतेंद्र शर्मा

आधार मूल संस्कृत ग्रन्थ
महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित श्री अद्भुत रामायण

श्री राम कथा संस्थान पर्थ, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः |
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत् ||

अद्भुत सीताचरितमानस

(भावार्थ सहित)

हिंदी काव्यान्तरण

डॉ यतेंद्र शर्मा

आधार मूल संस्कृत ग्रन्थ

महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित श्री अद्भुत रामायण

प्रकाशक

श्री राम कथा संस्थान

३५ मायना स्ट्रीट, हिलरीज़, पर्थ

ऑस्ट्रेलिया – ६०२५

Website: https://shriramkatha.org

Email: srkperth@outlook.com

क्रमांक

समर्पण 7
अस्वीकरण 8
प्रार्थना 9
माता श्री सीता महात्म्य 13
वन्दना 20
अद्भुत सीताचरितमानस 21
प्रथम सर्ग राम जानकी का परब्रह्मरूप-प्रतिपादन 21
द्वितीय सर्ग सम्राट अम्बरीष को नारायण का वरदान 27
तृतीय सर्ग राज सभा में नारद तथा पर्वत का आगमन 38
चतुर्थ सर्ग भगवान् राम के जन्म का हेतु 46
पंचम सर्ग कौशिकादि वैकुण्ठ गमन 62
षष्ठ सर्ग हरिमित्रोपाख्यान 74
सप्तम सर्ग ब्रह्मऋषि नारद को गान विद्या प्राप्ति 93
अष्टम सर्ग माँ सीता जन्म वर्णन 107
नवम सर्ग परशुराम को राम का विश्वरूप दिखाना 116
दशम सर्ग रामचंद्र का महावीर को चतुर्भुज रूप दिखाना 123
एकादस सर्ग राम का सांख्य योग वर्णन करना 128
द्वादश सर्ग उपनिषद कथन 140
त्रयोदश सर्ग राम का भक्तियोग कथन 146
चतुर्दश सर्ग रामचंद्र और महावीर संवाद 153
पंचदश सर्ग हनुमान जी का रामचंद्र की स्तुति करना 163
षोडश सर्ग रामचंद्र का रावण को मार राज्य पाना 169
सप्तदश सर्ग जानकी जी द्वारा सहस्रमुख रावण का वृतांत 174
अष्टादश सर्ग रावण की सेना का निकलना 188
नवदश सर्ग सहस्त्रमुखी रावण के पुत्रों का युद्ध को चलना 201
विंशति सर्ग संकुल युद्ध वर्णन 210
एकविंशति सर्ग रावण का राम की सेना को विक्षेप करना 217
द्वाविंशति सर्ग रामचंद्र का मूर्छित होना 222
त्रयोविंशति सर्ग जानकी द्वारा सहस्रमुख रावण का वध 233
चतुर्विंशति सर्ग देवताओं का राम को आश्वासन देना 246

पञ्चविंशति सर्ग रामचंद्र का सहस्त्रनाम से जानकी की स्तुति करना..... 256
षड्विंशति सर्ग श्री राम विजय वर्णन 295
सप्तविंशति सर्ग श्री राम का अयोध्या में आना....................................305
कवि: डॉ यतेंद्र शर्मा..315

समर्पण

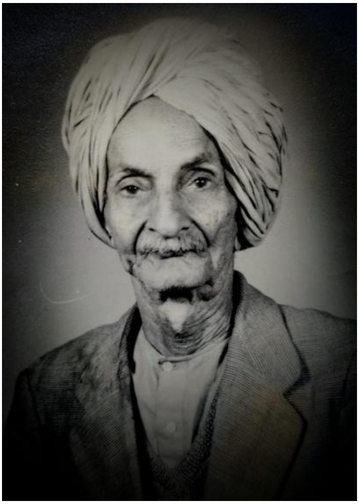

परम पावन अति पूजनीय पितामह गुरूदेव श्री भगवान दास जी

हे अति पूजनीय गुरुदेव पितामह अति पावन |
हे श्री संत महान करें हम आपको शत शत नमन || (१)
प्राज्ञ सभी वेद वेदांत पुराण सनातन दर्शन |
किए समर्पित हेतु धर्म सनातन अपना जीवन || (२)
हुए हम धन्य हैं सुभग पा आपका दिव्य पथ निर्देशन |
करो स्वीकार आभार हे स्वरूप संत अति पावन || (३)
हम अभग लौकिक भूजन पड़े भव सागर बंधन |
यद्यपि लिप्त त्रिगुण पर किया आपने मार्ग दर्शन || (४)
हो रहित अघ संभव पा सकें हम मुक्ति जन्म-मरन |
करें हे महात्मा हम आपका स्मरण नमन अभिनन्दन || (५)
डॉ यतेंद्र शर्मा

अस्वीकरण

इस काव्य पुस्तक की सामग्री जनहित एवं सामान्य ज्ञान के लिए प्रदान की गई है। हमारा तद्भाव पाठक को कोई परामर्श देने का नहीं है| इस काव्य पुस्तक की सामग्री किसी भी तरह से विशिष्ट परामर्श का विकल्प नहीं है| आपको इस ज्ञान के आधार पर कोई भी निर्णय लेने से पहले प्रासंगिक निपुण या विशेषज्ञ का परामर्श प्राप्त कर लेना चाहिए|

इस काव्य पुस्तक के रचयिता, प्रकाशक और उनका कोई प्रतिनिधि किसी भी विषय में इस काव्य पुस्तक से सम्बंधित कोई प्रत्याभूति नहीं लेते| इस काव्य पुस्तक का पठन-पाठन-गायन-श्रवण पाठक स्वयं के संज्ञान से दायित्व ले कर ही करें|

यद्यपि हमने इस काव्य पुस्तक में सटीक ज्ञान देने का पूर्ण प्रयास किया है लेकिन किसी भी प्रकार कोई त्रुटि अथवा अकृता रह गई हो तो उसके लिए रचयिता एवं प्रकाशक क्षमा प्रार्थी हैं और इसके परिणाम स्वरूप किसी विधि, सामाजिक, धार्मिक, इत्यादि का दायित्व नहीं लेते|

प्रार्थना

भारतीय सनातन धर्म के ज्योतिस्वरूप त्रिकालदर्शी परम ब्रह्म महर्षि वाल्मीकि ने दो रामायणों की संस्कृत भाषा में रचना की| प्रथम उन्होंने श्री रामायण जिसे श्री वाल्मीकि रामायण के नाम से भी जाना जाता है, की रचना की| श्री रामायण में उन्होंने भगवान् श्री राम के आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक, तीनों ही स्वरूपों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया| भगवान् श्री राम के रूपों से अभिभूत भगवद्स्वरूप आदिगुरु शंकाराचार्य जी कहते हैं कि उन्होंने श्री रामायण का १८ बार अध्ययन किया| प्रत्येक बार उन्हें श्री रामायण का एक भिन्न ही अर्थ दिखाई दिया| सारांश में कहते हैं कि श्री राम का आध्यात्मिक रूप सत्यता में सीता से भिन्न नहीं है| दोनों एक ही हैं|

तीर्त्वा मोहार्नवम् हत्वा कामक्रोधादिराक्षसम् |
शान्तिसीता समायुक्तः आत्मारामो विराजते ||

सीता श्री राम से अभिन्न ही नहीं स्वयं श्री राम कहते हैं कि सीता ही परमात्मा हैं|

त्वमेव परमं व्योम महाज्योतिर्निरञ्जनम् |
शिवं सर्वगतं सूक्ष्मं परं ब्रह्म सनातनम् ||

‘सीता ही परमाकाश महाज्योति निरंजन हैं| वह सूक्ष्म, सर्वगत, परब्रह्म और सनातन हैं| ‘

माँ सीता के इसी स्वरुप का वर्णन करने के लिए ज्योतिस्वरूप त्रिकालदर्शी परम ब्रह्म महर्षि वाल्मीकि जी ने एक दूसरी रामायण 'अद्भुत रामायण' की संस्कृत श्लोकों में रचना की| माँ सीता का महात्मय भगवान् श्री राम से कहीं अधिक है, इसका विस्तार पूर्वक वर्णन इस ‘अद्भुत रामायण’ में किया| भगवान् श्री राम ने लंकेश दशानन का वध तो अवश्य किया परन्तु वह सहस्त्रमुख रावण का वध करने में असमर्थ रहे, उसका वध माँ सीता ने किया| इससे माँ सीता के पराक्रम, शक्ति और अद्भुतता का अनुभव होता है|

लौकिक चर्चा में लंकेश दशानन के दो भ्राता, कुम्भकर्ण और विभीषण एवं एक भगिनी सूपर्णखा की ही चर्चा होती है| लेकिन सत्यता में महर्षि विश्रवा की पत्नी कैकसी ने पांच संतानों को जन्म दिया था| चार पुत्र - सहस्त्रानन रावण, दशानन रावण, कुम्भकर्ण और विभीषण तथा एक पुत्री सुपर्णखा| बचपन में ही सहस्त्रानन और दशानन के मध्य स्पर्धा के कारण उन्होंने इन्हें एक दूसरे से पृथक कर दिया| सहस्त्रानन मानसरोवर के उत्तर में पुष्कर द्वीप का सम्राट बना और दशानन लंका द्वीप का| दोनों ही ब्रह्मदेव के वरदान से अभिभूषित अत्यंत शक्तिशाली थे| सर्व विदित है कि श्री राम ने दशानन का वध किया और विजय पश्चात वह अयोध्या लौटे| अयोध्या लौटने पर उनका राज्याभिषेक हुआ| उस समय महर्षि अगस्त्य आदि उनकी प्रशंसा कर रहे थे तब माँ सीता हंस पड़ीं| ‘अवश्य मेरे स्वामी श्री राम ने दशानन का वध किया है परन्तु उसका भ्राता सहस्त्रानन जो उससे भी अधिक शक्तिशाली है, देवताओं का महान शत्रु है, पुष्कर द्वीप का सम्राट है, अभी भी जीवित है| राम राज्य स्थापित करने से पहले उसका वध करना आवश्यक है|’

यह सुन श्री राम अपनी सेना एवं सीता को साथ लेकर पुष्कर द्वीप उसका वध करने हेतु पहुंचे| उसे युद्ध को ललकारा| दुर्भाग्य से उसके तीक्ष्ण बाण से घायल हो श्री राम मूर्छित हो गए| तब माँ ने युद्ध क्षेत्र में रूद्र रूप धारण कर अकेले ही सहस्त्रानन का उसके परिवार और सेना सहित वध किया| मूर्छा जागने पर श्री राम को माँ सीता के पराक्रम और शक्ति का भान हुआ| वह स्तुति करने लगे|

ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिः प्राणशक्तिरिति त्रियम |
सर्वासामेव शक्तीनां शक्तिमन्तो विनिर्मितः ||

‘हे सीता, आप ही सर्वशक्तिमान हैं| सृष्टि निर्माण, पोषण एवं संहार की शक्ति आप में ही निहित है|’

यदि ‘अद्भुत रामायण’ को वर्तमान विश्व के परिपेक्ष में देखा जाए तो सर्वतः सत्य पाया जाएगा| धार्मिक क्षेत्र में शक्ति की उपासना अवश्य प्रबल है लेकिन राजनैतिक क्षेत्र में सहस्त्रानन जैसे अनेक क्रूर प्रशासकों द्वारा देश की संपत्ति को लूटने के साथ नारी पर अत्याचार की कथाएं दिन प्रतिदिन सुनने में आती हैं| नारी को पुरुष की अपेक्षा निर्बल समझा जाता है| यद्यपि यह दृश्य धीरे धीरे बदल रहा है| आज नारियां पुरुषों

के साथ हर क्षेत्र में कंधा मिलाकर चल रहीं हैं और यही इस ‘अद्भुत रामायण’ का सार है| यह ग्रंथ भारतीय सनातन संस्कृति का एक प्रतीक है| एक पति जो अवध का सम्राट ही नहीं स्वयं भगवान् का अवतार है, उनके द्वारा अपनी पत्नी की स्तुति, उनको अपने समान परब्रह्म परमात्मा स्वरुप मानना, उनके चरणों में झुक कर उन्हें नमन करना, उनसे वरदान मांगना, आज की युवा पीढ़ी के लिए विशेषकर एक उदाहरण है कि किस प्रकार अपनी संगिनी का मान-सम्मान करते हुए इस जीवन नैया को आगे बढ़ाना है| जहां नारी का सम्मान नहीं होता वहां दरिद्रता, पराधीनता, भ्रष्टता और विनाशता वास करती है|

परम ब्रह्म महर्षि वाल्मीकि रचित ‘श्री रामायण’ (श्री वाल्मीकि रामायण) तो स्वयं ही अत्यंत प्रचलित है तत्पश्चात महागोस्वामी श्री तुलसी दास जी ने उस पर आधारित श्री रामचरितमानस की रचना कर ‘श्री रामायण’ का सन्देश घर घर पहुंचा दिया| परन्तु किन्हीं अज्ञात कारणों से सीता महात्म्य वाली ‘अद्भुत रामायण’ उतनी लोकप्रिय और प्रचलित नहीं हो पाई जब कि स्वयं भगवान् श्री राम ने ‘अद्भुत रामायण’ की तुलना ‘श्री वाल्मीकि रामायण’ से करते हुए कहा है कि ‘अद्भुत रामायण’ का केवल एक बार का पठन और श्रवण ‘श्री वाल्मीकि रामायण’ के सहस्त्र बार पठन और श्रवण के समान फल देता है| इस महारत्न को घर घर तक पहुंचाने के लिए गुरुदेव ने मुझे आदेश दिया कि इस महान ग्रन्थ का मैं हिंदी भाषा में काव्यान्तरण कर उसे प्रचलित करने का प्रयास करूँ| काव्यान्तरण ही क्यों, सरल गद्य अनुवाद क्यों नहीं? आप सभी जानते हैं कि काव्य उच्चारण से वातावरण में तरंगे उत्पन्न होती हैं जो भक्त के हृदय को तुरंत प्रभु के हृदय से मिला देती हैं| अतः सभी धार्मिक ग्रन्थ काव्य में ही हैं, गद्य में नहीं|

गुरुदेव के आदेश से मैंने मूल संस्कृत भाषा में परम ब्रह्म महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित 'अद्भुत रामायण' का हिंदी छंद में काव्यान्तरण कर इस अमूल्य रत्न महाकाव्य ‘अद्भुत सीताचरितमानस’ की रचना की है| आशा है कि आपको मेरा प्रयास रुचिकर लगेगा| श्री राम कहते हैं कि इस महारत्न काव्य का एक या दो छंद भी प्रतिदिन पढ़ अथवा सुन लिया जाए तो इहलोक में धन-धान्य, ऐश्वर्यता आदि मिलती है और मरण पश्चात मोक्ष की प्राप्ति होती है|

जो पाठक परम ब्रह्म श्री महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित संस्कृत मूल ग्रन्थ 'अद्भुत रामायण' का अध्ययन करना चाहते हैं वह ग्रन्थ की मूल प्रति निम्न वेबसाइट से प्राप्त कर सकते हैं|

https://www.mahakavya.com/adbhut-ramayan-in-hindi/

ॐ शांतिः शांतिः शान्तिः

आपका अपना,

डॉ यतेंद्र शर्मा
सीता नवमी, ५ मई २०२५

श्री राम कथा संस्थान

कार्यालय: ३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज, पर्थ, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
वेबसाइट (Website): https://shriramkatha.org
ई-मेल (Email): srkperth@outlook.com
WhatsApp: +61 410 641543

माता श्री सीता महात्म्य

तप सिद्धि ऐश्वर्य रूप माँ सीता सर्वगुण संपन्न |
गुणातीत गुणात्मिका ब्रह्म युक्त बुद्धि पावन || (१)

भावार्थ: सीता माँ तप सिद्धि, ऐश्वर्य रूप, सर्वगुण संपन्न, गुणातीत, गुणात्मिका, ब्रह्म और शुद्ध बुद्धि युक्त हैं|

जानें जब चरित्र माँ हो हिय अज्ञान ग्रंथि विघटन |
सृष्टि व्याप्त परम तत्व माँ हुईं अवतरित भुवन || (२)

भावार्थ: माँ (सीता) के चरित्र को जानने से हृदय की अज्ञान ग्रंथि नष्ट होती है (अर्थात परमात्म तत्व की प्राप्ति होती है)| सृष्टि में व्याप्त परम तत्व माँ ने इस पृथ्वी पर अवतार लिया|

था लक्ष्य करें नाश अधर्म हो स्थापित धर्म सनातन |
किया धन्य जीवन साधु संत और हरि भक्त भूजन || (३)

भावार्थ: उनका (अवतार हेतु) लक्ष्य अधर्म का विनाश और सनातन धर्म की स्थापना करना था| उन्होंने (अवतरित होकर) साधु, संत और हरि भक्त प्राणियों के जीवन को धन्य किया|

जब किया रावण तप गहन हेतु अमर्त चतुरानन |
माँगा वर हो जाऊं अमर न हो कोई मेरे सम सुर जन || (४)

भावार्थ: जब अमरत्व प्राप्त करने के लिए रावण ने ब्रह्मदेव का गहन तप किया और वरदान मांगा कि मैं अमर हो जाऊं एवं मेरे समान कोई देवता और प्राणी न हो|

न करे सकें वध मेरा सुर असुर यक्ष तुरङ्गवदन |
पिशाच उरग प्रमत अप्सरा और इनके साथी गन || (५)

भावार्थ: मेरा वध सुर, असुर, यक्ष, किन्नर, पिशाच, उरग (पेट के बल चलने वाले जंतु सर्प आदि), बुद्धिमान, अप्सरा एवं उनके सहयोगी गण न कर सकें|

हो जाऊं प्रेरित काम जब स्व-सुता हो मेरा मरन |
हूँ प्रमत है बोध घोर अघ भाव काम कन्यकाजन || (६)

भावार्थ: जब अपनी स्वयं की पुत्री के प्रति काम भावना से प्रेरित हो जाऊं तभी मेरा मरण हो| मैं बुद्धिमान हूँ और जानता हूँ कि पुत्री के प्रति काम की भावना घोर पाप है|

न करूँ यह अपराध कभी पा जाऊं मैं अनश्वर तन |
हो प्रसन्न दिए वांछित वर श्री ब्रह्मदेव दशानन || (७)

भावार्थ: यह अपराध मैं कभी नहीं करूंगा और अमरत्व की प्राप्ति करूंगा| भगवान् ब्रह्मदेव ने प्रसन्न होकर रावण को इच्छित वर दे दिया|

पा वरदान हुआ निरंकुश अभिमानी दुष्ट रावन |
त्राहि त्राहि कर सुर भूजन जब करे आपका वंदन || (८)

भावार्थ: वरदान पाकर जब दुष्ट अभिमानी रावण निरंकुश हो गया तब त्राहि त्राहि कर समस्त संसार आपका वंदन करने लगा|

लीं अवतार आप गर्भ मंदोदरी पत्नी दशानन |
की लीला हो मोहित किया उसने आपका अपहरन || (९)

भावार्थ: तब आप रावण की पत्नी मंदोदरी के गर्भ से अवतार लीं| आपने लीला की जिससे उसने मोहित हो आपका अपहरण किया|

हुईं हेतु अंत दुष्ट रखी लाज आपने वर चतुरानन |
हैं ऋणी आपके कृपालु माँ सब सुर और भूजन || (१०)

भावार्थ: दुष्ट (रावण) के अंत का कारण हो आपने ब्रह्मदेव के वर की लाज रखी| हे कृपालु माँ, समस्त सुरगण एवं प्राणी आपके ऋणी हैं|

हैं आप अग्नि सम रम्य कल्याण स्वरूपी इस भुवन |
हुईं प्रकट गर्भ धरा चलाए जब जनक हलि स्वर्न || (११)

भावार्थ: आप अग्नि के समान तेजस्विनी हैं तथा इस विश्व की कल्याण स्वरूपी हैं| आप पृथ्वी के गर्भ से प्रकट हुईं जब (सम्राट) जनक ने स्वर्ण का हल चलाया|

पत्नी ऋषि विश्रवा नाम   कैकसी पति परायन |
दीं जन्म एक दशमुख और दूजा सहस्त्रमुख रावन || (१२)

भावार्थ: ऋषि विश्रवा की पत्नी कैकसी पतिव्रता थीं| उन्होंने एक दस-मुख और दूसरे सहस्त्र-मुख रावण को जन्म दिया|

किए वध राम दशमुख पर था जीवित सहस्त्रमुख रावन |
दुष्ट सम भ्राता दशमुख था वह पुष्कर द्वीप का राजन् || (१२)

भावार्थ: दशमुख रावण का (श्री) राम ने वध कर दिया परन्तु यह सहस्त्रमुख रावण जीवित था| वह पुष्कर द्वीप का सम्राट अपने भाई दस-मुख रावण के समान दुष्ट था|

चाहा करूँ वध यह दुष्ट पर हुए राम मूर्छित रन |
हुईं क्रुद्ध माँ तब आप धरा रौद्र दिव्य वर्पन् || (१३)

भावार्थ: (श्री) राम ने इस घोर दुष्ट का वध करना चाहा परन्तु युद्ध में मूर्छित हो गए| तब माँ आप क्रोधित हो गईं| आपने दिव्य रौद्र रूप धारण किया|

हैं आप शक्ति देवी लिए जन्म समकाल राम भगवन |
हैं आप परस्पर पूरक जानें ज्ञानी साधु संत भूजन || (१४)

भावार्थ: आप देवी शक्ति हैं जिन्होंने श्री राम के समकाल में जन्म लिया| आप दोनों एक दूसरे के पूरक हैं यह ज्ञानी साधु, संत और प्राणी जानते हैं|

बनीं आप हेतु जब किए वध श्री राम दशमुख रावन |
बने हेतु रघुनन्दन जब कीं आप वध दुष्ट सहस्त्रानन || (१५)

भावार्थ: जब श्री राम ने दशमुख रावण का वध किया तब आप हेतु हुईं| श्री राम हेतु बने जब आपने सहस्त्रमुख रावण का वध किया|

किया वध आपने जब इस दुष्ट सहस्त्रमुख रावन |
हुआ कष्ट दूर करें जय जयकार सभी सुर भूजन || (१६)

भावार्थ: जब आपने इस सहस्त्रमुख रावण का वध किया, देवता एवं प्राणियों के कष्ट दूर हो गए और सभी आपका जय जयकार करने लगे|

डरे देख रौद्र रूप आपका करें तब सब सुर वंदन |
हो प्रसन्न तब आप कीं धारण रूप सौम्य पूर्वतन || (१७)

भावार्थ: आपके रौद्र रूप से डरे देवता आपका वंदन करने लगे| तब आपने प्रसन्न हो पूर्ववत सौम्य रूप धारण किया|

हे पराशक्ति माँ हैं आप ही स्वरूप चतुर् भगवन |
शान्ति विद्या मान और निवृत्ति आप ही के वर्पन् || (१८)

भावार्थ: हे पराशक्ति माँ, ईश्वर के चार रूप - शान्ति, विद्या, मान और निवृत्ति आप ही के रूप हैं|

है संभव कर सकें आप से ही प्राप्त सब तत्व भगवन |
किए वंदन ब्रह्मदेव हैं आप ही हेतु संहार सृजन || (१९)

भावार्थ: आप से सब परमात्म-तत्व की प्राप्ति संभव है| ब्रह्मदेव ने वंदन किया| आप ही संहार और सृजन की हेतु हैं|

हैं आप ही सगुण निर्गुण सत असत रहित त्रिगुण |
हे चन्द्रखण्ड से अंकित विशाल लोचनी करें हम नमन || (२०)

भावार्थ: आप ही सगुण, निर्गुण, सत, असत एवं त्रिगुण से रहित हैं| हे चन्द्रखण्ड से अंकित विशाल नेत्रों वाली हम आपको नमन करते हैं|

हे परम शक्ति अनन्य अविनाशी दृष्टव मुमुक्ष जन |
आसीन ईश्वर पद युक्त प्रकाश पुंज कोटि द्युवन || (२१)

भावार्थ: हे परम शक्ति, अनन्य, अविनाशी, मुमुक्षों से दर्शित (मोक्ष की इच्छा रखने वालों को दिखने वाली), करोड़ों सूर्य के प्रकाश पुंज से युक्त ईश्वर पद पर आसीन हैं|

कर त्रिशूल मस्तिष्क क्रीट जड़ित अमूल्य मणि रत्न |
चिकित् सम कोटि सोम और अति सुन्दर नूपुर चरन || (२२)
कंठ दिव्य माला तन दिव्य वस्त्र दिव्य गंध अनुलेपन |
चक्र गदा शंख अन्य भुज लग रहीं आप शिवा वर्पन् || (२३)

भावार्थ: हाथ में त्रिशूल, मस्तिष्क पर अमूल्य मणि रत्नों से जड़ित करोड़ों चन्द्रमा के समान जगमगाता मुकुट, पैरों में अति सुन्दर नूपुर, कंठ में दिव्य माला, तन पर दिव्य वस्त्र और दिव्य गंध का लेप, अन्य हाथों में चक्र, गदा, शंख, आप शिवा स्वरुप लग रहीं हैं|

मुक्त भेद बाह्य अंदर सर्वाकार शक्ति सनातन |
शांत मुख सर्वज्ञ माँ कर रहे सब देव आपका नमन || (२४)

भावार्थ: बाहर-अंदर के भेद से मुक्त, सर्वाकार, शक्ति (रूप), सनातन, शांत मुख, सर्वज्ञ माँ सभी देवता आपका नमन कर रहे हैं|

साथ ॐकार कर रहे सब सुर भूजन आपका वंदन |
स्तुति में कर रहे एक सहस्त्र आठ नाम का उच्चारन || (२५)

भावार्थ: ॐकार के साथ देवता और प्राणी आपका वंदन कर रहे हैं| स्तुति में (आपके) एक सहस्त्र आठ नामों का उच्चारण कर रहे हैं|

है स्वर्ण कमल सम सुन्दर सुगन्धित आपका तन |
अर्ध चंद्र सम विशाल ललाट है युक्त तेज ज्वलंत || (२६)

भावार्थ: स्वर्ण कमल के समान सुन्दर आपका शरीर है| अर्ध चंद्र के समान विशाल ललाट लक्ष्मी (माँ) के तेज से युक्त है|

हैं कज दल सम नेत्र स्फुरति लाल कर पल्लव चरन |
बिम्ब फल समान लाल अधर है शोभा माँ अवाच्यन || (२७)

भावार्थ: कमल दल के समान नेत्र, झगझगायते लाल मृदु हस्त और चरण, बिम्ब फल के समान लाल अधर, माँ की शोभा अनिर्वाचनीय है|

हो माँ आप ही परमाकाश महाज्योति निरंजन |
शिव पावन और सर्वगत सूक्ष्म परब्रह्म सनातन || (२८)

भावार्थ: माँ आप ही परमाकाश महाज्योति निरंजन, पवित्र, शिव, सर्वगत सूक्ष्म परब्रह्म सनातन हैं|

हैं राम और सीता एक यद्यपि होते प्रतीत दो तन |
हेतु लीला किए धारण भिन्न तन पर हैं आप अभिन्न || (२९)

भावार्थ: राम और सीता एक ही है यद्यपि दो शरीर में प्रतीत होते हैं| लीला के कारण भिन्न शरीर धारण किए परन्तु आप अभिन्न हैं|

होते कृतार्थ संतगण जब करें आपका दर्शन |
पाते श्री यश मान करें भूजन जब आपका वंदन || (३०)

भावार्थ: संतगण आपके दर्शन से कृतार्थ होते हैं| जब प्राणी आपका वंदन करते हैं तब उन्हें श्री (धन-धान्य), यश और सम्मान की प्राप्ति होती है|

दो आशीष हमें माँ आए हम सब आप की शरन |
पा सकें परमात्म तत्व हो तब सफल लक्ष्य मनुज तन || (३१)

भावार्थ: हे माँ, हम आपकी शरण आए हैं, हमें आशीर्वाद दीजिए| परमात्म तत्व की प्राप्ति कर हम मनुष्य जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हों|

ॐ शांतिः शांतिः शान्तिः

वन्दना

करें उच्चारण जय जय नर रूप नरोत्तम नारायन |
बुद्धि दाता माँ सरस्वती और महर्षि व्यास महन || (क)

भावार्थ: नर रूप पुरुषोत्तम नारायण, बुद्धि दाता माँ सरस्वती और महान महर्षि व्यास की जय जय उच्चारण करें|

श्रेष्ठ मुनि श्री युक्त शांत वीतराग भक्त भगवन |
यशस्वी महर्षि वाल्मीकि संत आपको शत शत नमन || (ख)

भावार्थ: भगवद्भक्त, श्री युक्त, शांत, वीतराग, यशस्वी, मुनींद्र महर्षि संत वाल्मीकि, आपको शत शत नमस्कार|

राम रामभद्र रामचंद्र विधाता रघुनाथ भगवन |
हे नाथ सीतापति प्रभु करूँ मैं आपका नमन || (ग)

भावार्थ: हे राम, रामभद्र, रामचंद्र, विधाता, रघुनाथ, ईश्वर, नाथ, सीतापति, प्रभु, मैं आपका नमन करता हूँ|

रघुवंश तिलक माँ कौशल्या हृदय आनंद दामन् |
जय हो रावण वध कर्ता सुत दशरथ कमल लोचन || (घ)

भावार्थ: रघुवंश तिलक, माँ कौशल्या के हृदय को आनंद देने वाले, रावण का वध करने वाले, दशरथ पुत्र कमल लोचन आपकी जय हो|

अद्भुत सीताचरितमानस
प्रथम सर्ग
राम जानकी का परब्रह्मरूप-प्रतिपादन

करें निवास तपस्थली तमसा तीर नद वक्ता निपुन |
जितेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ मुनि गुरु वाल्मीकि महन || (१-१)

भावार्थ: तपस्थली तमसा नदी के तीर पर निपुण वक्ता, जितेन्द्रिय, सर्वश्रेष्ठ मुनि, गुरु वाल्मीकि जी निवास करते हैं|

गए महर्षि भारद्वाज आश्रम कवि प्रथम पावन |
करबद्ध हो अति विनम्र पूछे वह महर्षि एक प्रश्न || (१-२)

भावार्थ: महर्षि भारद्वाज पावन प्रथम कवि (महर्षि वाल्मीकि) के आश्रम में गए और करबद्ध अति विनम्र हो महर्षि (वाल्मीकि) से एक प्रश्न पूछे|

शत कोटि श्लोक रचित ग्रन्थ विस्तृत काव्य महन |
है पूजित त्रिलोक में ग्रन्थ अति पावन रामायन || (१-३)

भावार्थ: सौ करोड़ श्लोकों में विस्तार से रचित आपका महान काव्य ग्रन्थ अति पवित्र रामायण त्रिलोक में प्रतिष्ठित है|

हैं उपलब्ध सहस्त्र पच्चीस श्लोक रामायण भुवन |
करें ब्राह्मण ऋषि पितर देव सब इसका श्रवन || (१-४)

भावार्थ: पृथ्वी पर पच्चीस सहस्त्र श्लोक रामायण उपलब्ध हैं जिनका सभी ब्राह्मण, ऋषि, पितर, देवता श्रवण करते हैं|

श्लोक पच्चीस सहस्त्र रामायण का किए हम श्रवन |
पर महर्षि है क्या विस्तृत शत कोटि श्लोक रामायन || (१-५)

भावार्थः पच्चीस सहस्त्र श्लोक रामायण का हमने श्रवण किया है, हे महर्षि, यह सौ करोड़ श्लोक विस्तार वाली रामायण क्या है?

हे महामुनि श्रेष्ठ करें हम आपका करबद्ध वंदन |
दीजिए संज्ञान शत कोटि श्लोक विस्तृत ग्रन्थ महन ||
सुने महर्षि वाल्मीकि यह भारद्वाज के विनीत वचन || (१-६)

भावार्थः हे श्रेष्ठ महर्षि, हम आपका करबद्ध वंदन करते हैं| हमें आप इस सौ करोड़ विस्तार वाली महान रामायण की कथा का ज्ञान दीजिए| ऋषि भारद्वाज के विनीत वचन महर्षि वाल्मीकि ने सुने|

कर स्मरण सम अमालक शत कोटि श्लोक रामायन |
बोले महर्षि हो शुभ तुम्हारा भारद्वाज ब्राह्मन || (१-७)

भावार्थः अमालक (आंवला) समान कोटि श्लोक रामायण का स्मरण कर महर्षि (वाल्मीकि) बोले, 'हे ब्राह्मण भारद्वाज, तुम्हारा मंगल हो|'

हो दीर्घ आयु मुनि भारद्वाज है मेरा स्वस्त्ययन |
हुआ मुझे शुभ स्मरण श्लोक शत कोटि गुप्त रामायन || (१-८)

भावार्थः हे मुनि भारद्वाज, दीर्घ आयु हो, यह मेरा आशीर्वाद है| मुझे गुप्त शत कोटि विस्तार रामायण का शुभ स्मरण हुआ|

गुप्त शत कोटि श्लोक रामायण में है अद्भुत वर्णन |
निहित इस महासागर चरित सीता राम भगवन ||
परन्तु प्रसिद्ध भू सहस्त्र पच्चीस श्लोक रामायन || (१-९)

भावार्थः इस गुप्त शत कोटि श्लोक रामायण महासागर में भगवान् राम और सीता का समस्त चरित्र वर्णन है, जो अद्भुत है| परन्तु पृथ्वी पर यह २५ सहस्त्र श्लोक रामायण ही प्रसिद्ध है|

है वर्णित राम चरित सम नर श्रेष्ठ इस भू रामायन |
नहीं वर्णित पर महात्म्य सीता इस ग्रन्थ पावन || (१-१०)

भावार्थ: इस पृथ्वी रामायण (२५ सहस्त्र श्लोक रामायण) में राम का चरित्र एक श्रेष्ठ मनुष्य (पुरुषोत्तम) के रूप में वर्णित है परन्तु सीता का महात्म्य इस पवित्र ग्रन्थ में वर्णित नहीं है|

हे ब्राह्मण करो तुम अब वृहद राम चरित श्रवन |
है जिसमें मूल भूति प्रकृति सीता चरित महन || (१-११)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, अब तुम वृहद राम चरित का श्रवण करो जिसमें मूल भूति प्रकृति सीता का महान चरित्र है|

है संचित निवास ब्रह्म यह ज्ञान गुह्यतम महन |
पर हो तुम हितैषी परम शिष्य अतैव करूँ वर्णन || (१-१२)

भावार्थ: यह गुप्ततम श्रेष्ठ ज्ञान ब्रह्मदेव के निवास (ब्रह्मलोक) में संचित है परन्तु तुम शुभचिंतक परम शिष्य हो, अतः वर्णन करता हूँ|

समझो सीता प्रकृति मूलभूति महागुण संपन्न |
हैं वह सिद्धि तप अवतरित सती ऐश्वर्य वर्पन् || (१-१३)

भावार्थ: सीता को मूलभूति महागुण संपन्न प्रकृति समझो| वह तप की सिद्धि (तप फल), ऐश्वर्य रूप एवं सती निष्पत्ति हैं|

करें वेद वक्ता सत और असत ज्ञान से उनका गायन |
है वही रिद्धि सिद्धि गुणातीत और सर्वगुण संपन्न || (१-१४)

भावार्थ: वेद वक्ता (ब्रह्मवादी) सत और असत (विद्या और अविद्या) से उनका गायन करते हैं (अर्थात उनका महिमामंडन करते हैं)|वही रिद्धि, सिद्धि, गुणातीत (त्रिगुणों से अलिप्त) और सर्वगुण संपन्न हैं|

हैं समागत ब्रह्म ब्रह्माण्ड सम रूप सर्व भुवन |
हैं हेतु सर्व कारण विश्व प्रकृति विकृति द्वयन ||
वह चिन्मयी चिद्धिलासिनी अनंत महन सनातन || (१-१५)

भावार्थ: ब्रह्म तथा ब्रह्माण्ड समस्त भुवनों में समान रूप से व्यापक हैं| विश्व के सभी कारणों की हेतु हैं| प्रकृति और विकृति दोनों हैं| वह सर्वोच्च चेतना, बुद्धिमान, अनंत, वृहद एवं आदि हैं|

हैं महाकुण्डलिनी सर्वज्ञ ब्रह्म रूप देवी महन |
किया खेल रूप में ही सर्व चर अचर जग का सृजन || (१-१६)

भावार्थ: वह महाकुण्डलिनी, सर्व-व्यापक, ब्रह्म रूप महान देवी हैं| खेल रूप में ही (उन्होंने) समस्त चर और अचर विश्व का सृजन किया है|

हे ब्राह्मण तत्वद्रष्टा जितेन्द्रिय सत योगीगन |
रख हृदय रूप माँ सीता करें मनन सिद्धि साधन ||
होती तब नष्ट अज्ञान ग्रंथि और पाता आनंद मन || (१-१७)

भावार्थ: हे ब्राह्मण (महर्षि भारद्वाज), परमात्म-तत्व एवं सत्य जानने वाले जितेन्द्रिय योगीगण माँ सीता के रूप को हृदय में रख कर (धारण कर) मनन और साधन सिद्धि करते हैं (अर्थात सीता माँ के रूप को हृदय में धारण कर हुए मनन करते हुए साधना में सफलता प्राप्त करते हैं)|तब अज्ञान की ग्रंथि नष्ट होती है (अर्थात सत ज्ञान की प्राप्ति होती है) और मन आनंदित होता है|

हे सुव्रत हो जब धर्म विलुप्त और अधर्म उद्गमन |
होती तब उत्पत्ति प्रकृति करे जो धर्म स्थापन || (१-१८)

भावार्थ: हे सुव्रत (धर्म रक्षक), जब धर्म विलुप्त होता है तथा अधर्म का उदय होता है तब प्रकृति की उत्पत्ति होती है जो धर्म की स्थापना करती है|

हैं राम साक्षात परम ज्योति परम धाम भगवन |
नहीं भेद कोई मध्य राम और सीता हैं वह अभिन्न || (१-१९)

भावार्थ: राम साक्षात परम ज्योति, परम धाम भगवन हैं| राम और सीता में कोई भेद नहीं है, वह अभिन्न हैं|

नहीं अणु मात्र राम सीता जानकी रामभद्र भिन्न |
होते प्रबुद्ध तापस संत जान यह सत्य इस भुवन ||
पा अभय मृत्यु होते मुक्त भव सागर आवागमन || (१-२०)

भावार्थ: राम, सीता, जानकी, रामभद्र अणु मात्र भी भिन्न नहीं हैं| तपस्वी संत (योगी) इस धरा पर यह सत्य जानकर बुद्धिमान हो जाते हैं| मृत्यु से अभय होकर वह भव सागर के आवागमन (जन्म-मरण के चक्र) से मुक्त हो जाते हैं|

हैं श्री राम चित्त रुप करें वास सब के अंतःकरन |
नित्य अचिन्त्य सर्व साक्षी करें वही सृष्टि सृजन ||
समझो उन्हें पालक संहारक और आनन्ददायन ||
संग सीता करें सब योगी सदैव उनका चिंतन मनन || (१-२१)

भावार्थ: श्री राम चित्त रूप, सब के अंतःकरण वासी, नित्य, अचिन्त्य, सर्व साक्षी, सृष्टि के सृजक, पालक और संहारक एवं आनंद देने वाले हैं| सीता के साथ सभी योगी सदैव उनका चिंतन और मनन करते हैं|

हैं वह रहित कर पग पर करें प्रसाद शीघ्र ग्रहन |
हैं रहित नैन पर देख सकें वह सब चर अचर चेतन ||
सुन सकें पद चाप चींटी यद्यपि हैं रहित श्रवन ||
जानें वह जगत परन्तु न जान सके कोई इन भगवन ||
समझो उन्हें पुरुषोत्तम अजर आदि और सनातन || (१-२२)

भावार्थ: (श्री राम) वह हाथ और पैर से रहित हैं परन्तु प्रसाद शीघ्र ही ग्रहण कर लेते हैं| वह चक्षु रहित हैं पर सभी चर और अचर प्राणियों को देख सकते हैं| वह कर्ण

रहित हैं पर चींटी की पद चाप भी सुन सकते हैं| वह विश्व को जानते हैं परन्तु इन भगवान् को कोई नहीं जान सकता| उन्हें पुरुषोत्तम, अजर, आदि और सनातन समझो|

हेतु अवतार सीता और राम करूँ मैं अब विवरन |
यद्यपि निराकार पर लिए अवतार साक्षात नर तन ||
हुई उनकी अत्यंत कृपा हेतु कल्याण सभी भूजन || (१-२३)

भावार्थ: मैं अब जिस कारण सीता और राम ने अवतार लिया, उसका विवरण करूंगा| यद्यपि वह निराकार हैं लेकिन साक्षात नर शरीर में अत्यंत कृपा कर प्राणियों के कल्याण के लिए उन्होंने अवतार लिया|

करे प्राप्त श्रेष्ठता सुने यदि यह कथा ब्राह्मन |
हो निःसंशय भूपति करे क्षत्रिय यदि इसका श्रवन ||
पाए सफलता व्यापार सुने यदि कथा वैश्यगन ||
होगा सम्मानित शूद्र भी करे जो इसका श्रवन || (१-२४)

भावार्थ: यदि ब्राह्मण यह कथा सुनेगा तो श्रेष्ठता को प्राप्त होगा| यदि क्षत्रिय इसको सुनेगा तो निःसंदेह वह पृथ्वी का स्वामी होगा| यदि वैश्य इस कथा को सुनेगा तो उसे व्यापार में सफलता मिलेगी| शूद्र भी इस कथा को सुनकर सम्मान पाएगा|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'राम-जानकी का परब्रह्मस्वरुप-प्रतिपादन' नाम प्रथम सर्ग समाप्त|

द्वितीय सर्ग
सम्राट अम्बरीष को नारायण का वरदान

हे विप्र भारद्वाज सुनो कथा हेतु जन्म राम भगवन |
महामति श्रीमान विष्णु किए इक्ष्वाकु कुल यशस्विन् || (२-१)

भावार्थ: हे विप्र भारद्वाज, (श्री) राम के जन्म का कारण सुनो| बुद्धिमान श्रीपति विष्णु ने इक्ष्वाकु कुल को प्रसिद्ध किया|

हे मुनिश्रेष्ठ सुनो कथा हेतु माँ सीता भू जन्म |
पूर्व उसके सुनो मुझसे श्री राम कथा वर्णन || (२-२)

भावार्थ: हे मुनिश्रेष्ठ, माता सीता के पृथ्वी पर जन्म लेने का हेतु सुनो| उससे पूर्व मुझ से श्री राम कथा का वर्णन सुनो|

सुनो कथा नृप अम्बरीष करे जो सब पाप हरन |
महात्म्य इस पुरुषोत्तम कथा का मनहर पावन || (२-३)

भावार्थ: पाप हरने वाली सम्राट अम्बरीष की कथा सुनो| इस पुरुषोत्तम कथा का महात्म्य मन को हरने वाला एवं पवित्र है|

प्रिय पत्नी नृप त्रिशंकु थीं युक्त सभी शुभ लक्षन |
थीं वह माँ अम्बरीष धर्मवती और अति पावन || (२-४)

भावार्थ: सम्राट त्रिशंकु की पत्नी अम्बरीष की माँ सभी शुभ लक्षणों से युक्त धर्मवती और अत्यंत पवित्र थीं|

योग निद्रा आरूढ़ विष्णु करते शेष शैय्या शयन |
आसीन दिव्य कमल यह चैतन्य करते विश्व सृजन || (२-५)

भावार्थ: योग निद्रा में आरूढ़ (भगवान्) विष्णु शेष (नाग) की शैय्या पर शयन करते हैं| दिव्य कमल पर आसीन यह परमात्मा विश्व का सृजन करते हैं|

हैं उनमें समाहित सत रजस और तमस त्रिगुन |
तमोगुण लक्षण प्रसिद्ध नाम कालरुद्र वर्पन् ||
हो रजोगुण प्रभूत तब हैं वह पद्मज कर्ता सृजन ||
हो जब प्रधान सतगुण हैं विष्णु पालक भुवन || (२-६)

भावार्थ: उनमें सत, रजस और तमस तीनों गुण समाहित हैं| तमोगुण प्रधान होने पर वह कालरुद्र रूप में प्रसिद्ध हैं| रजोगुण प्रधान होने पर वह सृष्टा ब्रह्मा हैं| सतगुण प्रधान होने पर वह विश्व के पालक विष्णु हैं|

भक्त विष्णु त्रिशंकु पत्नी करतीं सतत हरि पूजन |
चढ़ा पुष्प हार करतीं हरि शिल्प स्वयं सुगंध लेपन || (२-७)

भावार्थ: (भगवान्) विष्णु भक्त त्रिशंकु की पत्नी प्रभु का सतत पूजन करती थीं| प्रभु की प्रतिमा पर पुष्प माला चढ़ा वह स्वयं ही उस पर सुगंध लेप लगाती थीं|

सुगन्धित धूप इत्र आदि से करतीं उनका पूजन |
करतीं रुचिर भोग अर्पित युक्त पूर्ण समर्पन || (२-८)

भावार्थ: सुगन्धित धूप, इत्र आदि से वह उनका पूजन करती थीं| पूर्ण समर्पण के साथ वह उन्हें स्वादिष्ट भोग अर्पित करती थीं|

शुभा व्रतधारिणी पद्मावती ले नाम नारायन |
करतीं विनती विनम्र भाव से अनंत हों आप प्रसन्न || (२-९)

भावार्थ: अति पावन व्रतधारिणी पद्मावती (नृप त्रिशंकु की पत्नी) नारायण का नाम लेते हुए विनम्र भाव से विनती करती थीं कि प्रभु आप प्रसन्न हों|

दस सहस्त्र वर्ष तक तन्मय मन से कीं वह हरि पूजन |
करतीं उन्हें सुगन्धित धूप पुष्प इत्र आदि का अर्पन || (२-१०)

भावार्थ: दस सहस्त्र वर्ष तक वह तन्मय मन से सुगन्धित धूप, पुष्प , इत्र आदि का अर्पण करते हुए प्रभु का पूजन करती रहीं|

अघ रहित महात्मा हरि-भक्तों का करें वह पूजन |
दे यथोचित मान सम्मान दें दान उन्हें प्रति दिवन् || (२-११)

भावार्थ: पाप-रहित (पवित्र) भगवान् के भक्त महात्माओं का वह पूजन कर उन्हें यथोचित मान सम्मान देती हुए प्रतिदिन दान देती थीं|

दिवस द्वादसी एक बार कर व्रत सम्मुख नारायन |
कर रहीं थीं वह संग सुभग पति नृप सत्यव्रत शयन || (२-१२)

भावार्थ: एक बार द्वादसी के दिन वह व्रत कर अपने सौभाग्यशाली पति सम्राट सत्यव्रत के साथ नारायण के सम्मुख शयन कर रहीं थीं|

हुए प्रकट उस रात्रि पुरुषोत्तम श्री नारायन |
बोले मधुर वाणी है क्या भद्रे तुम्हारा मन्मन् || (२-१३)

भावार्थ: उस रात्रि को पुरुषोत्तम श्री विष्णु प्रकट हुए और मधुर वाणी में बोले, 'हे भद्रे, तुम्हारी इच्छा क्या है?'

हुईं कृतार्थ सुभग पद्मावती कर हरि का दर्शन |
पड़ पग प्रभु बोलीं दो वरदान मुझे यदि प्रसन्न ||
पाऊँ पुत्र युक्त हरि भक्ति भाव सार्वभौम पावन ||
महा तेजस्वी स्वकर्म-निरत हो विश्व में यशस्विन् || (२-१४)

भावार्थ: नारायण का दर्शन कर सौभाग्यवती पद्मावती कृतार्थ हो गईं| प्रभु के पग पड़कर बोलीं, 'यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो वरदान दीजिए| मैं प्रभु भक्त, सभी भुवनों

का सम्राट, पवित्र, महा तेजस्वी, अपने कर्तव्यों का पालन करने वाला तथा विश्व में ख्याति प्राप्त पुत्र पाऊँ|

दिया एक फल और कहे तथास्तु तब श्री जनार्दन |
जागीं निद्रा देख फल और किया पति से सब वर्णन || (२-१५)

भावार्थ: तब श्री नारायण ने उन्हें एक फल दिया और कहा, 'तथास्तु' (ऐसा ही हो)| फल देख निद्रा से जागीं और अपने पति से सब वर्णित किया|

युक्त श्रद्धा भक्ति प्रसन्न मन से किया वह फल अदन |
योग्य समय तब दीं वह वंश श्री वृद्धक पुत्र जनन || (२-१६)

भावार्थ: श्रद्धा और भक्ति से युक्त हो प्रसन्न मन से तब उन्होंने वह फल खाया| तब उचित समय पर वह कुल की महिमा बढ़ाने वाले पुत्र को जन्म दीं|

था वह युक्त चक्र चिन्ह शुभ आचरण हरि पारायन |
मुख तेजस्वी श्रेष्ठ पुत्र और सभी शुभ लक्षण संपन्न || (२-१७)

भावार्थ: वह शुभ आचरण वाला, हरि भक्त, चक्र चिन्ह से अंकित, तेजस्वी मुख वाला श्रेष्ठ पुत्र सभी शुभ लक्षणों से युक्त था|

किए पिता पूर्ण वैदिक कर्म हुआ जब पुत्र जन्म |
हुए विख्यात वह सुत नाम नृप अम्बरीष त्रिभुवन || (२-१८)

भावार्थ: पुत्र जन्म होने पर पिता ने सभी सनातन संस्कार पूर्ण किए| वह पुत्र तीनों लोकों में सम्राट अम्बरीष के नाम से प्रसिद्ध हुए|

बैठे राज सिंहासन अम्बरीष पश्चात पिता निधन |
पर था मन उनका करूँ तप गहन हों प्रसन्न भगवन ||
अतैव सौंप राज्य मंत्रीगण गए वह तप हेतु वन || (२-१९)

भावार्थ: पिता के निधन के पश्चात अम्बरीष राज सिंहासन पर बैठे| परन्तु उनका मन गहन तप से प्रभु को प्रसन्न करने का था| अतैव वह राज्य मंत्रियों को सौंप कर तपस्या हेतु वन को गए|

एक सहस्त्र वर्ष तक किए जाप वह नाम नारायन |
कमल सम स्व-हिय मध्य कर आसीन रवि रूप जनार्दन || (२-२०)

भावार्थ: एक सहस्त्र वर्ष तक वह अपने कमल समान हृदय के मध्य में रवि रूप हरि को आसीन कर नारायण नाम जपते रहे|

किए नाम जप भगवन जो करें शंख चक्र गदा धारन |
चतुर्भुज मुख कांति सम स्वर्ण भूषित अंग आभरन || (२-२१)

भावार्थ: उन भगवान् का जप किया जो शंख, चक्र, गदा को धारण करते हैं, चतुर्भुज हैं, जिनके मुख की कांति स्वर्ण समान है, अंगों में आभूषणों से सुशोभित हैं|

हैं स्वयं ब्रह्मा विष्णु शिव त्रिदेव मूर्ति पावन |
परिधान पीताम्बरी है वक्ष में श्रीवत्स चिह्न || (२-२२)

भावार्थ: जो स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और शिव, त्रिदेव मूर्ति हैं| पीताम्बरी वस्त्र हैं और वक्ष पर श्रीवत्स चिह्न है|

करें जिन्हें नमन देव है विश्वात्मा गरुड़ वाहन |
होते नत मस्तक त्रिलोक जिनके कमल रूपी चरन || (२-२३)

भावार्थ: विश्वात्मा गरुण वाहन हैं, जिन्हें देवता नमन करते हैं, जिनके कमल रूपी चरण पर त्रिलोक नत मस्तक होता है|

हुए प्रकट सम्मुख नृप रूप इंद्र ऐरावत वाहन |
धारे गरुड़ रूप ऐरावत और स्वयं हरि इंद्र वर्पन् || (२-२४)

भावार्थ: सम्राट (अम्बरीष) के सम्मुख इंद्र के रूप में ऐरावत पर चढ़ प्रकट हुए| गरुड़ ने ऐरावत का और स्वयं भगवान् ने इंद्र का रूप धारण किया हुआ था|

हूँ मैं इंद्र हो कल्याण तेरा बोले तब भगवन |
हुआ प्रकट मैं त्रिलोक ईश करने तेरा संरक्षन || (२-२५)

भावार्थ: तब भगवान् बोले, 'मैं इंद्र हूँ| तेरा कल्याण हो| मैं त्रिलोक का स्वामी तेरा संरक्षण करने प्रकट हुआ हूँ|'

देख इंद्र आसीन ऐरावत प्रमत भक्त नारायन |
नृप अम्बरीष करबद्ध बोले तब अति विनम्र वचन || (२-२६)

भावार्थ: ऐरावत पर सवार इंद्र को देखकर बुद्धिमान विष्णु-भक्त सम्राट अम्बरीष हाथ जोड़कर अत्यंत विनम्र वचन बोले|

नहीं किया तप हेतु प्राप्ति आप हे इंद्र महन |
नहीं चाहता कुछ आपसे कृपया कीजिए गमन || (२-२७)

भावार्थ: हे महान इंद्र, मैंने आपकी प्राप्ति हेतु तप नहीं किया| मुझे आपसे कुछ नहीं चाहिए| कृपया वापस जाइए|

हे देवेश न करें क्षय समय हैं मेरे ईश नारायन |
नहीं लक्ष्य करूँ संतुष्ट आपको छोड़िए मेरा केतन || (२-२८)

भावार्थ: हे देवेश (इंद्र), समय नष्ट मत कीजिए| मेरे स्वामी नारायण हैं| आपको संतुष्ट करूँ, यह लक्ष्य नहीं है| आप मेरा आश्रम छोड़िए|

किए तब हंसकर प्रकट स्वरुप श्री विष्णु भगवन |
थे लिए शारङ्ग चक्र गदा शंख हस्त श्री जनार्दन || (२-२९)

भावार्थः तब हंसकर श्री विष्णु भगवान् ने अपना स्वरुप प्रकट किया| हाथों में नारायण शारङ्ग (दिव्य धनुष), चक्र, गदा, शंख लिए थे|

सम नीलांचल हो रहे भूषित श्री विष्णु भगवन |
था वाहन विश्वात्मा गरुड़ कर रहे देव गन्धर्व वंदन || (२-३०)

भावार्थः नीलांचल (पर्वत) के समान श्री विष्णु भगवान् सुशोभित हो रहे थे| विश्वात्मा गरुड़ पर सवार थे| देव, गन्धर्व स्तुति कर रहे थे|

हो प्रसन्न नृप दर्शन हरि करने लगे उनका वंदन |
हे जनार्दन लोकनाथ मेरे स्वामी होइए प्रसन्न || (२-३१)

भावार्थः भगवान् के दर्शन से प्रसन्न हो सम्राट (अम्बरीष) उनका वंदन करने लगे| हे जनार्दन, लोकनाथ, मेरे स्वामी, प्रसन्न होइए|

हैं आप ही आदि और अनादि वन्दित सर्व भुवन |
हैं आप अनंत पुरुषोत्तम जगन्नाथ कृष्ण भगवन || (२-३२)

भावार्थः आप ही आदि और अनादि हैं| सर्व लोकों में वन्दित हैं| आप अनंत, पुरुषोत्तम, जगन्नाथ, कृष्ण भगवान् हैं|

हैं आप अप्रमेय विभु विष्णु गोविन्द कमल लोचन |
शिव अंश आपके ही आप सार पुष्कर सरस् निर्गन ||
विचरें गगन समान खग मेघ तारक रवि सोम पवन || (२-३३)

भावार्थः आप अप्रमेय, विभु, विष्णु, गोविन्द, कमल लोचन है| महादेव आप के ही अंश हैं| हे ईश्वर, आप पुष्कर सरोवर के सार हैं | आप पक्षी, बादल, सूर्य, चन्द्रमा, तारे और वायु के समान आकाश में विचरते हैं|

आप ही कव्यवाह हव्यवाह कपाली और प्रभंजन |
हैं आदिदेव क्रियानन्द परम दैह्य हेतु सृजन || (२-३४)

भावार्थ: आप ही पितर अर्पण स्वीकार कर्ता (कव्यवाह), यज्ञ अर्पण स्वीकार कर्ता (हव्यवाह), शिव, वायु, आदिदेव, क्रियानन्द (कर्मों के कर्ता) एवं सृजन के हेतु परम आत्मा हैं|

नहीं मेरी कोई और गति अतिरिक्त आप भगवन |
त्राहि त्राहि कमल नयन मैं आया आपकी शरन || (२-३५)

भावार्थ: हे भगवन, आपके अतिरिक्त मेरी और कोई गति नहीं है| हे कमल नयन, मेरी रक्षा कीजिए, मैं आपकी शरण आया हूँ|

रखते तुम नृप कौन सा मन्मन् पूछे तब विष्णु भगवन |
हो सुव्रत तुम भक्त मेरे दूंगा वर जो अनुमत मन || (२-३६)

भावार्थ: तब विष्णु भगवान् ने पुछा, 'हे नृप, तुम्हारी इच्छा क्या है? सुव्रत, तुम मेरे भक्त हो| मैं तुम्हें मनचाहा वर दूंगा|

हैं वह भक्त प्रिय मुझे जो करते पूर्ण समर्पन |
सुन मुख हरि करें वह पूर्ण उनके सब इच्छित मन्मन् || (२-३७)
हुआ गदगद मन नृप तब हर्षित हृदय बोले यह वचन ||
करती रहे सदा मेरी मति रमण हे प्रभु आपके चरन || (२-३८)

भावार्थ: 'जो पूर्ण समर्पण करते हैं, वह भक्त मुझे प्रिय हैं|' भगवान् के मुख से सुन कि उनकी समस्त इच्छाओं को पूर्ण करेंगे, सम्राट का मन गदगद हो गया| हृदय में हर्षित होकर तब यह वचन बोले, 'हे प्रभु, मेरी बुद्धि सदैव आपके चरणों में रमण करती रहे|'

मन वचन कर्म से रहूँ सदा आपका सेवा पारायन |
हो हृदय भाव बना सकूं समस्त जग भक्त भगवन ||
होकर प्रिय प्रजा न्यायोचित करूँ उनका पालन || (२-३९)

भावार्थ: 'मन, वचन और कर्म से सदैव आपका सेवा पारायण रहूँ| समस्त विश्व को भगवान् का भक्त बना सकूं, ऐसा हृदय में भाव हो| प्रजा का प्रिय होकर न्यायोचित उनका पालन करूँ|'

करूँ तृप्त श्रेष्ठ देवगण द्वारा यज्ञ होम अर्चन |
करूँ वध रिपु और सहचर करते हुए धर्म पालन || (२-४०)

भावार्थ: यज्ञ, होम और अर्चन द्वारा श्रेष्ठ देवताओं को तृप्त करूँ| धर्म का पालन करते हुए मैं शत्रु एवं उनके सहयोगियों का वध करूँ|

सुने प्रभु जब भक्तिपूर्ण विनीत नृप के वचन |
बोले हरि नृप श्रेष्ठ करूँ मैं अवश्य पूर्ण मन्मन् || (२-४१)

भावार्थ: प्रभु ने जब विनीत नृप के भक्तिपूर्ण वचन सुने तो भगवान् बोले, 'हे नृप श्रेष्ठ, मैं अवश्य तुम्हारी इच्छाओं को पूर्ण करूंगा|'

दुर्लभ सुदर्शन किया प्राप्त जो रुद्र स्वस्त्ययन |
करेगा नष्ट सब दुष्प्रभाव श्राप मुनि रिपु तिहन् || (२-४२)

भावार्थ: दुर्लभ सुदर्शन (चक्र) जो रुद्र की कृपा से प्राप्त किया है, वह ऋषियों के श्राप, शत्रु, व्याधि के सब दुष्प्रभावों को नष्ट करेगा|

दे वर नृप अम्बरीष हुए तब अंतर्ध्यान भगवन |
कर नमन हरि लौटे तब नृप अयोध्या हो प्रसन्न || (२-४३)
सिंहासनस्थ करने लगे न्यायोचित प्रजा पालन |
किए नियुक्त समुचित कर्मी ब्रह्माणादि चतु वरन || (२-४४)

भावार्थ: सम्राट अम्बरीष को वरदान देकर भगवान् अंतर्ध्यान हो गए| तब नारायण को नमन कर प्रसन्न हो सम्राट (राजधानी) अयोध्या लौट आए| सिंहासन पर आसीन हो तब वह न्यायोचित प्रजा का पालन करने लगे| ब्राह्मणादि चारों वर्ण के उपयुक्त कर्मी नियुक्त किए|

हो अघ रहित करते नृप अम्बरीष नित्य हरि वंदन |
देते मान विशेष वह राज्य शुद्ध भक्त नारायन || (२-४५)
किए शत अश्वमेध और शत वाजपेय यज्ञ अधिराजन् |
घिरी सागर से धरा का करते धर्मवत नृप शासन || (२-४६)

भावार्थ: पाप रहित होकर सम्राट अम्बरीष प्रतिदिन भगवान् की वन्दना करते थे| अपने राज्य में नारायण के शुद्ध भक्तों को वह विशेष सम्मान देते थे| सम्राट ने सौ अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञ किए| समुद्र से घिरी पृथ्वी का नृप धर्मवत शासन करते थे|

होता वेद घोष हर घर और था निवास नारायन |
कर यथोचित यज्ञ प्रजा करती हरि नामोच्चारन || (२-४७)

भावार्थ: हर घर में नारायण का निवास तहत और वेद घोष होता था| यथोचित यज्ञ करती हुए प्रजा प्रभु का नाम जपती थी|

था समान राम राज्य वह काल नहीं था अभाव अन्न |
नहीं पीड़ित प्रजा अकाल आदि प्राकृतिक व्यसन || (२-४८)

भावार्थ: वह काल राम राज्य के समान था| अन्न का अभाव नहीं था| प्रजा अकाल आदि प्राकृतिक आपदाओं से पीड़ित नहीं थी|

थी प्रजा रहित व्याधि उपद्रव आदि पाप कल्पन |
थे अति प्रिय मध्य प्रजा सम्राट अम्बरीष तेजस्विन् || (२-४९)

भावार्थ: प्रजा रोग और उपद्रव आदि पाप कर्मों से रहित थी| तेजस्वी सम्राट अम्बरीष प्रजा के मध्य अति प्रिय थे|

सुदीति सुदर्शन चक्र से थे सुरक्षित नृप महस्विन् |
करते समुद्र पर्यन्त धरा का सम इंद्र उत्तम पालन || (२-५०)

भावार्थ: महात्मा सम्राट शोभायमान सुदर्शन चक्र से सुरक्षित थे| इंद्र के समान वह समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का भली-भांति पालन करते थे|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'सम्राट अम्बरीष को नारायण का वरदान' नाम द्वितीय सर्ग समाप्त|

तृतीय सर्ग
राज सभा में नारद तथा पर्वत का आगमन

थी एक अति सुन्दर सुता अम्बरीष युक्त शुभ लक्षन |
नयन सम कमल विख्यात नाम श्रीमती सब भुवन || (३-१)

भावार्थ: (सम्राट) अम्बरीष की एक अति सुन्दर कमल लोचनी सभी शुभ गुणों से युक्त एक पुत्री थीं जो सब लोकों में श्रीमती नाम से विख्यात थीं|

श्री नारद और महस्विन पर्वत करते हुए भू भ्रमन |
आए एक बार अयोध्या सम्राट अम्बरीष के भवन || (३-२)

भावार्थ: श्री नारद और महातेजस्वी ऋषि पर्वत भ्रमण करते एक बार सम्राट अम्बरीष के महल अयोध्या में आए|

दौड़े द्वार नृप अम्बरीष हेतु करने अभिनन्दन |
किए प्रथम साष्टांग प्रणाम फिर विधिवत पूजन || (३-३)

भावार्थ: सम्राट अम्बरीष उनका स्वागत करने द्वार की ओर दौड़े| उन्हें प्रथम साष्टांग प्रणाम किया फिर उनका विधिवत पूजन किया|

देखे वह एक कन्या समान देव सुता सम्राट भवन |
पूछे ऋषि नारद है कौन यह कन्या हो संसर्पन || (३-४)

भावार्थ: सम्राट के महल में उन्होंने एक देव-सुता समान कन्या देखी| विस्मित हो ऋषि नारद ने पूछा, 'यह कन्या कौन है?'

हे धर्म धुरी धारक सर्व श्रेष्ठ अम्बरीष राजन |
सर्व शुभ लक्षण धारक यह कन्या है अति तेजस्विन ||
कर वंदन तब बोले नृप अम्बरीष अति मधुर वचन || (३-५)

भावार्थ: 'हे धर्म धुरी धारण करने वाले सर्व श्रेष्ठ सम्राट अम्बरीष यह कन्या अति तेजस्वी सर्व शुभ लक्षण धारण करने वाली है|' तब वन्दन करते हुए सम्राट अम्बरीष अति मधुर वचन बोले|

है यह मेरी सुता नाम श्रीमती हे नारद भगवन |
ढूंढ रहा वर हेतु सुता पाई अब यह वय यौवन || (३-६)

भावार्थ: हे नारद भगवन, यह मेरी पुत्री नाम श्रीमती है| अब यह यौवन वय की है अतः मैं इसके लिए वर ढूंढ रहा हूँ|

बोले तब   ब्रह्मऋषि   नारद सुनो मेरा मन्मन् |
दो मुझे तुम सुता श्रीमती जो दैव्य और पावन ||
की यही इच्छा ऋषि पर्वत हुए तब चकित राजन || (३-७)

भावार्थ: तब ब्रह्मऋषि नारद बोले, 'यह मेरी इच्छा है कि तुम दिव्य और पवित्र पुत्री श्रीमती मुझे दे दो| यही इच्छा ऋषि पर्वत ने भी की| तब सम्राट चकित हुए|

देखा नारद हो रहे भ्रमित अम्बरीष अधिराजन् |
बुला एकांत कहा करो शीघ्र मेरी आज्ञा पालन || (३-८)

भावार्थ: नारद ने देखा कि सम्राट अम्बरीष भ्रमित हो रहे हैं| तब एकांत में बुलाकर कहा कि शीघ्र मेरे आदेश का पालन करो|

ऋषि श्रेष्ठ पर्वत भी बुलाए तब एकांत में राजन |
दुहराए शब्द अपने भयभीत हो बोले तब राजन || (३-९)

भावार्थ: श्रेष्ठ ऋषि पर्वत ने भी सम्राट को एकांत में बुलाया और अपने शब्द दोहराए| तब राजन भयभीत हो बोले|

खड़े करबद्ध समक्ष द्वि मृदु वचन बोले तब राजन |
होता प्रतीत चाहें मम सुता दोनों आप स्व-कङ्कन ||
हूँ मैं भ्रमित अवश्य पर सुनो हे नारद मेरे वचन || (३-१०)

भावार्थ: करबद्ध दोनों के समक्ष खड़े होकर तब सम्राट बोले, 'ऐसा प्रतीत होता है कि आप दोनों ही मेरी पुत्री को अपनी सहचर चाहते हैं| मैं भ्रमित अवश्य हूँ पर हे नारद, मेरे वचन सुनो|'

हे प्राज्ञ महन ऋषि पर्वत सुनें आप भी मेरे वचन |
यदि करे मेरी सुता किसी एक का मध्य आप वरन || (३-११)
दूँ मैं उसे स्व-सुता है यह मेरा संकल्प अनिवर्तन ||
अन्यथा नहीं समर्थ मैं कर सकूं निश्चय इस प्रकरन ||
सुन वचन नृप बोले तब द्वि विप्र करें कल विवेचन || (३-१२)

भावार्थ: हे महाज्ञानी ऋषि पर्वत आप भी मेरे वचन सुनें| यदि मेरी पुत्री आप दोनों के मध्य किसी एक का वरण करेगी, उसे मैं अपनी पुत्री दूंगा, यह मेरा दृढ़ संकल्प है| अन्यथा मैं इस विषय पर निश्चय लेने में असमर्थ हूँ| दोनों विप्र ने सम्राट के यह वचन सुन कर कहा कि कल विचार करेंगे|

कह यथा द्वि मुनि श्रेष्ठ तब चले गए हो प्रसन्न मन |
थे वह   दोनों   श्रेष्ठ ज्ञानी   और प्रभु   पारायन || (३-१३)

भावार्थ: ऐसा कह कर मन में प्रसन्न हो तब दोनों श्रेष्ठ ऋषि चले गए| वह दोनों ही श्रेष्ठ ज्ञानी और नारायण के पारायण थे|

मुनि नारद गए तब विष्णु लोक निकट श्री भगवन |
कर प्रणाम बैठ समीप बोले वह अति मृदुल वचन || (३-१४)

भावार्थ: मुनि नारद तब श्री नारायण के समीप साकेत धाम गए| प्रणाम कर उनके समीप बैठ तब वह मधुर वचन बोले|

हे नाथ हे नारायण हे अव्यय सुनो आप मेरे वचन |
हे भुवनेश्वर करूँ मैं आप को बारम्बार नमन || (३-१५)

भावार्थ: हे नाथ, हे नारायण, हे अव्यय, आप मेरे वचन सुनिए| हे भुवनेश्वर, मैं आप को बार बार नमन करता हूँ|

बोले तब हंसकर सर्वात्मा श्री नारायण भगवन |
बोलिए निःसंकोच मुनि श्रेष्ठ जो भी आपके मन ||
देख स्वभाव दयालु प्रभु बोले नारद ऋषि महन || (३-१६)

भावार्थ: तब हंसकर सर्वात्मा श्री विष्णु भगवान् बोले, 'हे श्रेष्ठ मुनि, जो भी आपके मन में है, निःसंकोच कहिए|' प्रभु का कृपालु स्वभाव देख तब महर्षि नारद बोले|

नृप अम्बरीष हैं आपके अनन्य भक्त हे नारायन |
है उसकी एक सुता कमल लोचनी श्रीमती शोभन || (३-१७)
है मेरी इच्छा करूँ मैं इस सुंदरी का वरन |
पर महा तपस्वी ऋषि पर्वत जो आपके परिजन || (३-१८)
करें विवाह इस कन्या है यह उनका भी हिय मन्मन् |
सुन इच्छा हम दोनों कहे विभूत अम्बरीष राजन || (३-१९)

भावार्थ: हे नारायण, सम्राट अम्बरीष आपका अनन्य भक्त है| उसकी एक कमल के समान नेत्र वाली श्रीमती अति सुन्दर पुत्री है| मेरी इच्छा है कि मैं इस सुंदरी से विवाह करूँ| पर महा तपस्वी ऋषि पर्वत जो आपके सेवक हैं, उनके हृदय की इच्छा भी इस कन्या से विवाह करने की है| हम दोनों की इच्छा सुन महान सम्राट अम्बरीष ने कहा है|

कुल पितृ दिए अधिकार कन्या करे स्वयं वर चयन |
अतैव हूँ मैं प्रसन्न करे सुता जिसका भी वरन ||
कहा मैंने सम्राट है यह उचित कुल कर्मवचन || (३-२०)

भावार्थः कुल पूर्वजों ने कन्या को अपना वर चुनने का अधिकार दिया है| अतः जिस किसी का भी वरण पुत्री करेगी, मैं उसमें प्रसन्न हूँ| मैंने सम्राट से कहा कि यह उचित कुल रीति है|

आऊं मैं प्रातः करूँ प्रस्तुत स्वयं हेतु वरन |
कह नृप यह हुआ उपस्थित मैं सम्मुख आपके भगवन ||
करो मदद मेरी प्रभु आया मैं आपकी शरन || (३-२१)

भावार्थः मैं स्वयं को विवाह हेतु प्रस्तुत करने प्रातः आऊँगा| सम्राट से यह कह मैं आपके सम्मुख उपस्थित हूँ| मैं आपकी शरण आया हूँ, प्रभु, मेरी मदद कीजिए|

ऋषि पर्वत आएं समक्ष कन्या प्रातः हेतु उदयमन |
हो मुख उनका कुरूप समान कपि न करे कन्या वरन || (३-२२)

भावार्थः ऋषि पर्वत जब कल प्रातः कन्या के समक्ष विवाह हेतु आएं तो उनका मुख बन्दर जैसा कुरूप हो, जिससे कन्या उनका वरण न करे|

देखे केवल कन्या ऋषि पर्वत कुरूप न कश्चन |
है उचित मुनि मुसकुराते हुए बोले तब मधुसूदन || (३-२३)

भावार्थः केवल कन्या ही कुरूप ऋषि पर्वत को देखे, अन्य कोई नहीं| तब मधुसूदन मुसकुराते हुए बोले, 'हे मुनि, यह उचित है|'

करूँ मैं वही हे सौम्य जाओ अब तुम प्रसन्न मन |
सुन प्रभु प्रिय वचन किया नारद अयोध्या गमन || (३-२४)

भावार्थः (भगवान् बोले) 'हे सौम्य, प्रसन्न मन से प्रस्थान करो| मैं वही करूंगा|' प्रभु के प्रिय वचन सुन तब नारद अयोध्या को चल दिए|

आए तत्पश्चात महामुनि पर्वत समक्ष जनार्दन |
सुनाए वृतांत और स्व-इच्छा करें श्रीमती वरन || (३-२५)

भावार्थ: तत्पश्चात महामुनि पर्वत नारायण के समक्ष आए| वृतांत सुनाया और श्रीमती से विवाह करने की अपनी इच्छा बतलाई|

हे प्रभु करें कुछ ऐसा न करे कन्या नारद वरन |
समझे योग्य वर मुझे और डाले वरमाल मेरे तन || (३-२६)

भावार्थ: हे प्रभु कुछ ऐसा कीजिए कि कन्या नारद का वरण न करे| मुझे योग्य वर समझ मुझे ही वरमाल पहनाए|

दीजिए रूप कपि आप ब्रह्मऋषि नारद महन |
पर न जाने यह रहस्य कोई अतिरिक्त वधू भगवन || (३-२७)

भावार्थ: आप महान ब्रह्मऋषि नारद को बन्दर का रूप दे दीजिए| परन्तु हे भगवन, इस रहस्य को वधू के अतिरिक्त कोई और न जान सके|

सुन वचन ऋषि पर्वत करूँ ऐसा बोले भगवन |
जाओ शीघ्र अयोध्या न कहो नारद यह विवरन || (३-२८)

भावार्थ: ऋषि पर्वत के वचन सुन भगवान् बोले, 'मैं ऐसा ही करूंगा| तुम शीघ्र अयोध्या जाओ| यह संवाद नारद से नहीं कहना|'

चल दिए तब ऋषि पर्वत अयोध्या कर हरि का वंदन |
देख द्वि महामुनि महल किये नृप उनका अभिनन्दन || (३-२९)

भावार्थ: तब नारायण का वंदन कर ऋषि पर्वत अयोध्या को चल दिए| सम्राट (अम्बरीष) ने दोनों महामुनियों को महल में देख उनका अभिनन्दन किया|

की घोषणा नृप नगर करेंगी श्रीमती वर चयन |
सजाई चहुँ ओर अयोध्या समुचित पाणिग्रहन ||
थे मंगल द्रव्य पुष्प अलंकृत घर घर द्वार आँगन || (३-३०)

भावार्थ: सम्राट ने नगर में घोषणा कर दी कि (राजकुमारी) श्रीमती वर चयन करेंगी| पाणिग्रहण उत्सव के उपयुक्त अयोध्या सजाई गई| घर घर के द्वार और आँगन मंगल द्रव्य, पुष्प (आदि) से सुशोभित थे|

नगर पथ थे युक्त धूपित धूप दिव्य सुगंध सुरभिन् |
किए अभिषिक्त गृह द्वार आँगन प्रत्येक नगर जन || (३-३१)

भावार्थ: नगर के पथ धूप से धूपित तथा इत्र से सुगन्धित किए गए| प्रत्येक अयोध्या वासी ने अपने घर के द्वार और आँगन को अभिषिक्त किया|

किए सेवकगण अलंकृत बहु भांति महल राजन |
थीं सुशोभित महल भित्त पुष्प हार विविध रत्न || (३-३२)

भावार्थ: सेवकों ने राजमहल को बहु भांति अलंकृत किया| महल की दीवारें पुष्प हार एवं विविध रत्नों से सुशोभित थीं|

अनमोल मणि जड़ित स्तम्भ और तल कालीन संपन्न |
आमंत्रित आगन्तु हेतु बिछाए अनेक दिव्य आसन || (३-३३)

भावार्थ: अनमोल मणियों से (महल के) स्तम्भ जड़ित थे तथा भूमि कालीन संपन्न थी| आमंत्रित अतिथियों के लिए दिव्य सुन्दर आसन बिछाए गए थे|

मंत्रीगण और भृत्य किए सब अतिथि अभिनन्दन |
किए तब प्रवेश सभा संग सुता अम्बरीष राजन || (३-३४)

भावार्थ: सभी अतिथियों का स्वागत मंत्रीगण एवं अधिकारियों ने किया| तब पुत्री सहित सम्राट अम्बरीष ने सभा में प्रवेश किया|

सम नारायणी कन्या सुसज्जित सर्व भांति आभूषन |
दीर्घ लोचनी कृशकटि पञ्चस्निग्धा शुभ वदन ||
थीं घिरी सेविका चहुँ ओर श्रीमती अति पावन || (३-३५)

भावार्थ: लक्ष्मी (देवी) के समान, दीर्घ नेत्रों वाली, कृष (पतली) कटि (कमर) वाली, सभी पांच स्थानों पर कृशला (बाल) रहित, सुन्दर तन वाली, सर्व प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित, सेविकाओं से चारों ओर घिरी हुई अत्यंत पवित्र कन्या श्रीमती थीं|

पहुँच सभा हुईं आसीन वह तब मणि युक्त आसन |
लिए हस्त सुगन्धित दिव्य माल पुष्प हेतु वर चयन || (३-३६)

भावार्थ: वह (श्रीमती) राजसभा में तब रत्नों से जड़ित आसन पर बैठ गईं| उनके हाथ में वर चयन के लिए सुगन्धित दिव्य पुष्प माला थी|

पधारे तब ब्रह्मपुत्र महत चतुर्वेद नारद महस्विन् |
थे संग उनके महामुनि पर्वत अति प्रिय नारायन || (३-३७)

भावार्थ: तब ब्रह्मदेव के पुत्र, चतुर्वेद ज्ञानी, महान नारद पधारे| उनके साथ नारायण के अति प्रिय महामुनि पर्वत थे|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'राज सभा में नारद तथा पर्वत का आगमन' नाम तृतीय सर्ग समाप्त|

चतुर्थ सर्ग
भगवान् राम के जन्म का हेतु

देख द्वि मुनि नारद और पर्वत हुआ नृप मन प्रसन्न |
दिए उच्च आसन उन्हें और किए बहु भांति वंदन || (४-१)

भावार्थ: दोनों मुनि नारद और पर्वत को देखकर सम्राट (अम्बरीष) को हृदय में अति प्रसन्नता हुई| उन्हें ऊँचे आसन पर आसीन कर उनकी बहु भांति पूजा की|

थे दोनों महर्षि दिव्य महा प्रमत योग्य पूजन |
यद्यपि मायावश हरि थे उपस्थित हेतु कन्या वरन || (४-२)

भावार्थ: दोनों ही महर्षि दिव्य, महान बुद्धिमान और पूजन योग्य थे| यद्यपि भगवान् की मायावश कन्या का वरण करने उपस्थित थे|

कर नमन द्वि महर्षि किए सम्बोधित सुता राजन |
हे पुत्री कमल लोचनी शुभा सद्गुणी प्रिय यशस्विन || (४-३)
हैं उपस्थित द्वि महर्षि लिए इच्छा आपका वरन |
करो वरण स्व-इच्छा उन्हें करो जिन्हें अनुमोदन || (४-४)

भावार्थ: दोनों महर्षियों को प्रणाम कर सम्राट ने अपनी पुत्री को सम्बोधित किया, 'हे कमल के सामान नेत्र वाली, पवित्र, यशस्विनी, प्रिय, सद्गुणी पुत्री, दोनों महर्षि (नारद एवं पर्वत) आपसे विवाह करने की इच्छा लिए उपस्थित हैं| जिन्हें तुम योग्य समझो, स्व-इच्छा से उनका वरण करो|'

सुन वचन पिता उठीं सुंदरी वधु कन्या आसन |
चलीं बहु सेविका संग शुभा तब हेतु वर चयन || (४-५)
थी पुष्पमाला युक्त डोर स्वर्ण हस्त लोचनी रमन ||
आए समीप सुता नृप अम्बरीष पूछे क्या मन्मन् || (४-६)

भावार्थ: पिता के वचन सुन वधु कन्या आसन से उठीं| कई सेविकाओं से घिरी वह दिव्या तब वर चयन हेतु चलीं| शुभा नयन के हाथ में स्वर्ण की डोर से युक्त पुष्पमाला थी| तब नृप अम्बरीष पुत्री के समीप आए और पूछा, 'क्या इच्छा है?'

कर चयन एक मध्य द्वि महर्षि करो तुम माला अर्पन |
हो त्रस्त बोलीं शुभा हैं कुरूप कपि सम मुख द्वयन || (४-७)

भावार्थ: (सम्राट अम्बरीष कह रहे हैं) इन दोनों महर्षियों में से एक का चयन कर उन्हें वरमाला अर्पित करो|' तब दुःखी होकर शुभा बोलीं,' इन दोनों के तो कुरूप बन्दर समान मुख हैं|'

नहीं देख पा रही महर्षि नारद और पर्वत महन |
बोलीं शुभा देखूं लेकिन मध्य इनके एक रमणीक जन ||
है षोडश वर्षीय युवा दिव्य प्रतीत सम नारायन || (४-८)
समान पुष्प अलसी दीर्घ हस्त तन युक्त आभूषन |
समान कमल विशाल अति मनमोहक उसके नयन || (४-९)
विशाल बाह्य वक्ष उर उच्च पुष्ट कान्ति सम कञ्चन |
दीर्घ नेत्र सम कमल सुवर्ण मनमोहक मुख और तन || (४-१०)
नाभि युक्त विभक्त त्रिवली हैं नख सुन्दर रक्तवर्न |
पद्मनाभ है रविन्द हिय कमल सम हस्त पद तन नयन || (४-११)
सम कुंद पुष्प कलि दन्त पंक्ति रमणीय शोभा संपन्न |
हो रहा हृदय आकृष्ट मेरा नहीं वश में मेरा मन ||
दिव्य केशी मनोरम युवा है मस्तिष्क पर क्षत्र भूषन ||
नहीं समान उन सभा कोई हर लिया है मेरा मन || (४-१२)

भावार्थ: (श्रीमती पिता से कह रहीं हैं) 'मैं महर्षि नारद और महान पर्वत को नहीं देख पा रही| लेकिन इनके मध्य एक अति सुन्दर पुरुष को देख रही हूँ| वह सोलह वर्षीय नारायण के समान प्रतीत हो रहा है| वह अलसी के पुष्प के समान (सुन्दर), लम्बी भुजाओं वाले और तन पर आभूषणों से युक्त हैं| उसके नेत्र कमल के समान अति मनमोहक और विशाल हैं|उनका उभरा हुआ विशाल वक्ष है| उनका उदर उच्च और पुष्ट है| स्वर्ण के समान उनकी आभा है| कमल के समान उनके दीर्घ नेत्र हैं| स्वर्ण के

समान उनका मनमोहक मुख और शरीर है| त्रिवली से विभक्त उनकी नाभि है| उनके नख रंगीन सुन्दर हैं| वह पद्मनाभ हैं| हृदय कमल के समान है| कमल के समान ही उनके हाथ, पैर, शरीर और नेत्र हैं| कुंद पुष्प की कलि के समान उनकी दन्त पंक्ति हैं| वह आकर्षक शोभा से संपन्न हैं| मेरा हृदय उनकी ओर आकृष्ट हो रहा है| मेरा मन वश में नहीं है| दिव्य केश वाले मनोरम युवा के मस्तिष्क पर क्षत्र सुशोभित है| उनके समान इस सभा में कोई नहीं है| उन्होंने मेरा हृदय हर लिया है|

फैला दायां हस्त मुसकुराकर दे रहे मुझे आमंत्रन |
हूँ मैं आकर्षित उन ओर चाहूँ उन्हें ही वरन || (४-१३)

भावार्थ: दाएं हाथ को फैलाकर मुसकुराते हुए मुझे आमंत्रण दे रहे हैं| मैं उनकी ओर आकर्षित हूँ और उन्हें ही वरण करना चाहती हूँ|

समझी दशा हृदय वधु ऋषि नारद अन्तर्यामिन |
पूछा शुभे बताओ हैं कितनी भुजा इस युवा महन || (४-१४)

भावार्थ: अन्तर्यामी ऋषि नारद ने वधु के हृदय की दशा समझी और पूछे, 'हे शुभे, बतलाओ कि इस महान युवा की कितनी भुजाएं हैं?

देख सकूं मैं द्वि भुजा ही बोलीं तब वधु पावन |
हो विस्मित तब पूछे ऋषि पर्वत कहो सत्य कथन || (४-१५)
है क्या चिह्न वक्ष स्थल और किए क्या हस्त धारन |
देखो ध्यान से दिव्या बोलीं तब वह कन्या पावन ||
है वक्ष सुशोभित श्रेष्ठ माला जो कर रही स्फुरन || (४-१६)

भावार्थ: तब पावन वधु बोलीं, 'मैं दो भुजा ही देख सकती हूँ|' विस्मय से ऋषि पर्वत तब पूछे कि सत्य बताओ, 'उनके वक्ष स्थल पर क्या चिह्न है और उनके हाथ में क्या है? हे दिव्या, ध्यान से देखो|' तब वह पवित्र कन्या बोलीं, 'उनके वक्ष पर श्रेष्ठ माला सुशोभित है जो चमक रही है|'

हैं विशाल भुजा सुशोभित वह धनुष बाण पावन |
हुए आकुल द्वि महर्षि सुनकर श्रीमती के वचन || (४-१७)
करने लगे विचार समर्थ कौन जो करे यह विस्मापन |
पहुंचे निष्कर्ष नहीं कोई यह अतिरिक्त जनार्दन || (४-१८)

भावार्थ: 'उनकी विशाल भुजाओं में पवित्र धनुष बाण सुशोभित हैं|' श्रीमती के यह वचन सुनकर दोनों महर्षि आकुल हो गए और विचार करने लगे कि इस माया को करने में कौन समर्थ है? इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यह नारायण के अतिरिक्त कोई नहीं है|

क्या हुए उपस्थित यहां स्वयं श्रीपति हरि नारायन |
हुआ कैसे मुख हमारा सम कपि करने लगे चिंतन || (४-१९)

भावार्थ: 'क्या यहां स्वयं लक्ष्मीपति हरि नारायण उपस्थित हैं? हमारे मुख कपि समान कैसे हो गए?', वह यह चिंतन करने लगे|

कहने लगे ऋषि पर्वत भी हुआ कैसे यह सम्भविन |
करते विचार हुआ हृदय दोनों ऋषि अति वेदन || (४-२०)

भावार्थ: ऋषि पर्वत भी कहने लगे कि यह कैसे संभव हुआ? यह विचार कर दोनों ऋषियों के हृदय में अति पीड़ा हुई|

देखा नृप हो व्याकुल द्वि ऋषि खो रहे नियंत्रन |
पहुँच समक्ष नारद और पर्वत बोले विनम्र वचन ||
हुआ कैसे उदित मोह बुद्धि आपकी हे द्वि भद्रजन || (४-२१)

भावार्थ: नृप (अम्बरीष) ने देखा कि दोनों ऋषि व्याकुल हो अपना नियंत्रण खो रहे हैं|(महर्षि) नारद और पर्वत के समक्ष पहुँच तब वह विनम्र वचन बोले| आप दोनों भद्रजनों की बुद्धि में मोह उदित कैसे हो गया?

कृपया बैठें शांत सुमुख चाहें यदि मेरी सुता वरन |
कर त्याग अधीर चिंतित मुद्रा करो मन प्रसन्न ||
कहने लगे दोनों मुनिश्रेष्ठ सुन यह वचन राजन || (४-२२)

भावार्थ: यदि आप मेरी पुत्री का वरण करना चाहते हैं तो कृपया शांत और विशद होकर बैठें| अधीरता और चिंता का त्याग कर प्रसन्न मन हों| सम्राट के यह वचन सुनकर दोनों मुनिश्रेष्ठ कहने लगे|

नहीं करते हम मोह कभी किसी प्रकार हे राजन |
किया मोह तुमने अब दो आज्ञा कन्या करे वरन || (४-२३)

भावार्थ: हे राजन, हम कभी किसी प्रकार का मोह नहीं करते| तुमने ही मोह किया है| अब कन्या को आज्ञा दीजिए की वह वरण करे|

सुन वचन श्रेष्ठ मुनि कन्या हो भयभीत भर्त्सन |
चली हेतु वरण करती हुई हृदय कुलदेव वंदन || (४-२४)

भावार्थ: मुनि श्रेष्ठ के वचनों को सुन श्राप के डर से हृदय में कुलदेव का वंदन करती हुई तब कन्या वरण हेतु चली|

हो सावधान ले माला हुई खड़ी वह मध्य द्वि महस्विन् |
हो मोहित डाली माला नर जो बैठे मध्य आसन || (२५)

भावार्थ: सावधान होकर वह उन दोनों महर्षियों के मध्य खड़ी हो गई| नर जो उनके मध्य बैठे थे, उन पर मोहित हो उसने वरमाल उनपर डाल दी|

हुए अदृश्य सहसा तब कन्या और वह ओजस्वी जन |
क्या हुआ क्या हुआ गूंजने लगे शब्द सभा भूमन || (४-२६)

भावार्थ: तभी अचानक कन्या और वह ओजस्वी पुरुष अदृश्य हो गए| 'क्या हुआ, क्या हुआ', शब्द सभा कक्ष में गूंजने लगे|

थे वह नहीं कोई और पर स्वयं श्री जनार्दन |
गए साकेत धाम संग कन्या पुरुषोत्तम नारायन ||
लिया था कन्या जन्म हेतु वरण हरि कर तप गहन || (४-२७)

भावार्थ: वह और कोई नहीं स्वयं विष्णु भगवान् थे| पुरुषोत्तम नारायण कन्या को साथ लेकर साकेत धाम गए| कन्या (श्रीमती) ने कठिन तपस्या से नारायण को वरण करने के लिए ही जन्म लिया था|

है धिक्कार हमें द्वि मुनि श्रेष्ठ करते यह चिंतन |
हुए दुःखी नहीं कर सके दिव्य सुन्दर कन्या वरन || (४-२८)

भावार्थ: 'हमें धिक्कार है', ऐसा दोनों मुनियों ने विचार किया| दिव्य सुन्दर कन्या का वरण न कर सकने से वह दुःखी हुए|

तब गए दोनों मुनि साकेत धाम वास नारायन |
देख आते महस्वत् बोले श्रीमती से हरि जनार्दन || (४-२९)

भावार्थ: तब दोनों मुनि नारायण के निवास साकेत धाम गए| इन महान विभूतियों को आते देख भगवान् जनार्दन श्रीमती से बोले|

आ रहे द्वि मुनि श्रेष्ठ साकेत हे प्रिय श्री निरूपन |
छिपा लो तुम रुप अपना हंसकर हुईं तब अदर्शन || (४-३०)

भावार्थ: हे प्रिय श्री (लक्ष्मी) अवतार, दोनों महर्षि साकेत आ रहे हैं| तुम अपना स्वरुप छिपा लो| तब हंसकर वह अदृश्य हो गईं|

कर प्रणाम तब ब्रह्मऋषि नारद बोले हे भगवन |
किया क्या हाल मेरा और पर्वत आपने जनार्दन || (४-३१)

भावार्थ: प्रणाम कर तब ब्रह्मऋषि नारद बोले, 'हे भगवन, हे जनार्दन, आपने मेरा और पर्वत का क्या हाल कर दिया?'

हे हरि अवश्य ही किया आपने उस कन्या का हरन |
सुन यह वचन नारद धरे द्वि कर अपने कर्ण भगवन || (४-३२)

भावार्थ: 'हे नारायण, आपने ही निश्चित उस कन्या का हरण किया है|' नारद के यह वचन सुन भगवान् ने अपने दोनों हाथों को कानों पर लगाया|

बोले हरि कहे क्या महामुनि नारद आपने वचन |
नहीं यह भाव कामवाद है क्या मुनिवृत्ति भगवन || (४-३३)

भावार्थ: भगवन बोले, 'हे महामुनि नारद आप क्या वचन कह रहे हैं? यह कामवाद का भाव नहीं है, हे भगवन, क्या मुनिवृत्ति है?'

सुन यह वचन हरि बोले नारद कर्ण में हे नारायन |
क्या नहीं सत्य किया आपने मुख मेरा कपि वर्पन् || (४-३४)

भावार्थ: हरि के यह वचन सुन नारद भगवान् के कान में बोले, 'आपने मेरा मुख कपि का बना दिया, क्या यह सत्य नहीं है?'

सुन वचन मुनि बोले प्रमत हरि कर्ण में नारद महन |
सत्य किया मैंने मुख कपि रूप आपका महस्विन् || (४-३५)

भावार्थ: मुनि के वचन सुन बुद्धिमान भगवान् महात्मा नारद के कानों में बोले, 'हे महामुनि, यह सत्य है कि मैंने आपके मुख को बन्दर का रूप दिया|'

विप्र सदृश्य किया मैंने मुख पर्वत भी कपि वर्पन् |
जैसा चाहा तुमने चाहा समान ऋषि पर्वत महन || (४-३६)

भावार्थ: 'विप्र, उसी प्रकार मैंने पर्वत का मुख भी बन्दर का किया| जैसा तुमने चाहा था वैसा ही धर्मात्मा पर्वत ने चाहा था|'

हे नारद किया मैंने ऐसा हो तत्पर भक्त मन्मन् |
नहीं स्वेच्छा परन्तु हेतु भक्त प्रेम और काञ्चन || (४-३७)

भावार्थ: हे नारद, यह मैंने भक्त की इच्छा से प्रेरित हो कर किया| अपनी स्वेच्छा से नहीं परन्तु भक्त के प्रेम और कल्याण हेतु|

है मेरा व्रत दूँ वर करे जो मेरा भक्त याचन |
नहीं इसमें गुण दोष तुम्हारा या मेरा ब्राह्मन || (४-३८)

भावार्थ: यह मेरा संकल्प है कि जो मेरा भक्त वर मांगता है, उसे मैं देता हूँ| हे ब्राह्मण, इसमें तुम्हारा या मेरा गुण-दोष नहीं है|

दिए यही उत्तर हरि पूछे जब पर्वत सदृश्य प्रश्न |
दिया मैंने वही जो माँगा तुम द्वि भक्त अभेदन || (४-३९)

भावार्थ: जब समान प्रश्न (महर्षि) पर्वत ने पूछा, भगवान् ने यही उत्तर दिया| 'मैंने बिना किसी भेद भाव के वही दिया जो आप दोनों भक्तों ने माँगा|'

खा सौगंध मैं सत्य एवं आयुध कहूँ यह वचन |
करूँ वही जो हो हितकर मेरे भक्त त्रिभुवन ||
बोले ऋषि नारद तब सुन यह वचन श्री भगवन || (४-४०)

भावार्थ: मैं सत्य और आयुध की सौगंध खाता हूँ कि मैं त्रिलोक में वही करूंगा जो मेरे भक्तों के लिए हितकर होगा| श्री भगवान् के यह वचन सुन तब ऋषि नारद बोले|

कौन थे द्विभुज धारी दिव्य किए हुए आयुध धारन |
किया जिन्होंने कन्या हरण सुन बोले तब भगवन || (४-४१)

भावार्थ: दो भुजा वाले आयुध धारी दिव्य कौन थे जिन्होंने कन्या का हरण किया? यह सुन प्रभु बोले|

हे द्वि मुनिश्रेष्ठ हैं बहु मायावी सुर असुर भूजन |
कोई एक उनमें कर लिया होगा श्रीमती हरन || (४-४२)

भावार्थ: हे दोनों मुनिश्रेष्ठ, देव, असुर और प्राणियों में बहुत मायावी हैं| श्रीमती का हरण उनमें से कोई एक कर लिया होगा|

हूँ मैं चक्रपाणि और चतुर्भुज जानो यह महस्विन् |
हो नहीं सकता मैं वहां समझो यह स्पष्ट मुनिगन || (४-४३)

भावार्थ: हे तेजस्वी (मुनियो), मैं चक्रपाणि (सुदर्शन चक्र धारी) और चार भुजा वाला हूँ| हे मुनिगणो, यह स्पष्ट समझो कि मैं तो वहां नहीं हो सकता|

हे ईश्वर नहीं कोई अपराध आपका इस कारन |
कह यह चले गए दोनों ऋषि तब कर प्रभु को नमन || (४-४४)

भावार्थ: हे ईश्वर, इस हेतु में आपका कोई अपराध नहीं है| यह कहकर दोनों ऋषि तब प्रभु को प्रणाम कर चले गए|

अवश्य माया से किया भ्रमित हमें दुरात्मा राजन |
उठ रहा था यह विचार उन द्वि महर्षियों के मन || (४-४५)

भावार्थ: 'अवश्य दुष्ट सम्राट ने माया से हमें भ्रमित किया है,' यह विचार उन दोनों महर्षियों के मन में उठ रहा था|

पहुँच अम्बरी दिया श्राप महर्षिगण तब राजन |
आए हम दोनों तेरे नगर हेतु तेरी सुता वरन || (४-४६)

भावार्थ: अम्बरी (नगर) पहुँच इन महर्षियों ने सम्राट को श्राप दे दिया| (हे सम्राट) हम दोनों तेरे नगर तेरी पुत्री से विवाह हेतु आए थे|

बुला हमें किया कन्यादान तुमने किसी अन्य जन |
हो जा तुरंत मूढ़ तू हेतु इस अपराध हे राजन || (४-४७)

भावार्थ: हमें बुलाकर तुमने कन्यादान किसी और प्राणी से कर दिया| इस अपराध के कारण, हे सम्राट, तू अज्ञानी हो जा|

हो मूढ़ न रहेगा ज्ञान यथावत नृप तुझे सहोवन् |
सुन यह श्राप हुईं तब उपस्थित तमोराशि महन || (४-४८)

भावार्थ: हे सम्राट, मूढ़ होकर तुझे यथावत आत्मज्ञान नहीं रहेगा| यह श्राप सुन महान तमोराशि उपस्थित हो गई|

चला शीघ्र तब अन्धकार महल श्री अम्बरीष राजन |
देख दशा हरि भक्त हुए तब क्रोधित श्री जनार्दन ||
हो गया प्रकट तुरंत वहां विष्णु चक्र सुदर्शन ||
कर उन्मूल तम पड़ा तब वह पीछे इन द्वि महस्विन् || (४-४९)

भावार्थ: तब शीघ्र ही अंधकार सम्राट श्री अम्बरीष के महल की ओर चला| भगवद्भक्त (नृप अम्बरीष) की यह दशा देख तब भगवान् श्री विष्णु क्रोधित हो गए| तब तुरंत विष्णु का सुदर्शन चक्र प्रकट हो गया| अंधकार का विनाश कर तब वह इन दोनों तेजस्वियों के पीछे पड़ा|

हो व्याकुल आभा चक्र भागे दोनों महर्षि वन |
थे आगे आगे द्वि महर्षि और पीछे चक्र सुदर्शन || (४-५०)

भावार्थ: चक्र के तेज से व्याकुल हो दोनों महर्षि वन की ओर भागे| आगे आगे दोनों महर्षि और पीछे सुदर्शन चक्र|

मिला दंड हमें अपराध किए वरण कन्या मन्मन् |
भागते रहे दिन रात वह करते प्रयास बचे जीवन || (४-५१)

भावार्थ: (हृदय में विचार किया) हमें कन्या के वरण की इच्छा के अपराध का दंड मिल गया| प्राण बचाने के प्रयास में वह दिन रात भागते रहे|

हो भयभीत हेतु रक्षा प्राण पुकारें वह नारायन |
करते हुए त्राहि त्राहि पहुंचे वह तब धाम भगवन || (४-५२)

भावार्थ: भयभीत हो अपने प्राणों की रक्षा के लिए वह नारायण को पुकारने लगे| 'रक्षा करो, रक्षा करो', कहते हुए वह प्रभु के धाम पहुंचे|

हे जगत्पते वासुदेव ऋषिकेश पद्मनाभ जनार्दन |
कीजिए रक्षा हमारी आए हम दीन आपकी शरन || (४-५३)

भावार्थ: हे जगत्पते, वासुदेव, ऋषिकेश, पद्मनाभ, जनार्दन, हमारी रक्षा कीजिए| हम आपकी शरण आए हैं|

किए विनती इस प्रकार नारद और पर्वत मुनिगन |
हुए प्रसन्न अचिन्त्य भक्तवत्सल श्रीमान नारायन || (४-५४)

भावार्थ: इस प्रकार मुनिगण नारद और पर्वत विनती करने लगे| तब अचिन्त्य, भक्तवत्सल, श्रीमान नारायण प्रसन्न हुए|

कर अनुग्रह भक्त किए हरि शांत चक्र सुदर्शन |
बोले जैसे भक्त मेरे तुम हैं समान अम्बरीष राजन || (४-५५)

भावार्थ: भक्तों (महर्षि नारद और पर्वत) पर कृपा कर प्रभु ने सुदर्शन चक्र को शांत किया, और कहा, 'जैसे तुम मेरे भक्त हो, उसी प्रकार सम्राट अम्बरीष हैं|'

करूँ मैं सदैव हित आप दोनों और प्रिय राजन |
कहे यह शब्द नारायण मधुर वाणी होकर प्रसन्न || (४-५६)

भावार्थ: मधुर वाणी और प्रसन्न होकर नारायण बोले कि आप दोनों और प्रिय सम्राट का मैं सदैव हित करूंगा|

करता मैं सदैव हेतु रक्षा भक्त है जो अनिवर्तन |
करो क्षमा यदि लगा आपको अशोभनीय महस्विन् || (४-५७)

भावार्थ: भक्तों की रक्षा के लिए मैं सदैव जो उचित हो, करता हूँ| हे महिमावान्, यदि आपको अच्छा न लगा हो, तो क्षमा करें|

मानूँ यह अपराध चक्र पर हैं आप साधु पावन |
करो क्षमा कहे हरि तब समझे मुनि माया नारायन || (४-५८)

भावार्थ: प्रभु ने कहा, 'मानता हूँ यह चक्र का अपराध है, पर आप पावन साधु हैं, अतः क्षमा करो| तब मुनिगण नारायण की माया समझ गए|

फड़क उठे अंग क्रोध में और बोले सुनो जनार्दन |
दें हम श्राप तुम्हें किए तुम छल से श्रीमती हरन || (४-५९)

भावार्थ: उनके अंग क्रोध से फड़क उठे और वह बोले, 'हे जनार्दन, तुमने छल से श्रीमती का हरण किया है, हम तुम्हें श्राप देते हैं|'

लो जन्म तुम नर रूप भू कुल अम्बरीष जनार्दन |
जिस काल हों दशरथ सम्राट अयोध्या राज्य भुवन || (४-६०)

भावार्थ: हे जनार्दन, तुम धरा पर मनुष्य रूप में अम्बरीष के कुल में जन्म लो जिस काल में पृथ्वी के अयोध्या राज्य में दशरथ सम्राट हों|

लो जन्म तुम सुत दशरथ और श्रीमती पुत्री भुवन |
करेंगे धरा सुता श्रीमती का राजा जनक पालन || (४-६१)

भावार्थः तुम दशरथ के पुत्र और श्रीमती पृथ्वी की पुत्री बन जन्म लो| पृथ्वी की पुत्री श्रीमती का राजा जनक पालन करेंगे|

एक असुर नीच करेगा तुम्हारी भार्या का हरन |
जैसे किए आसुरी प्रवृति से तुम कन्या अपहरन || (४-६२)

भावार्थः एक नीच राक्षस तुम्हारी पत्नी का हरण करेगा जैसे आसुरी प्रवृति से तुमने कन्या का अपहरण किया|

जब करेगा यह असुर छल से आपकी पत्नी का हरन |
होगा दुःख तुम्हें जैसे हुआ हमें हेतु अपूर्ण मन्मन् || (४-६३)

भावार्थः जब यह असुर छल से आपकी पत्नी का हरण करेगा, जैसा दुःख हमें अपूर्ण इच्छा के कारण हुआ है, ऐसा ही दुःख आपको होगा|

करते हाहाकार भांति हमारी फिरोगे तुम कानन |
सुन श्राप मुनिगण बोले मधुर वचन तब नारायन || (४-६४)

भावार्थः हमारी भांति तुम वन में हाहाकार करते हुए घूमोगे| मुनिगणों का श्राप सुन तब नारायण मधुर वचन बोले|

होंगे दशरथ अवश्य सुव्रत वंश अम्बरीष राजन |
नहीं होगा असत्य श्राप तुम्हारा सुनो महस्विन् || (४-६५)

भावार्थः नृप अम्बरीष के वंश में अवश्य धर्मात्मा दशरथ होंगे| हे तपस्वियो सुनो, आपका श्राप असत्य नहीं होगा|

लूँ जन्म नाम राम अग्रज सुत दशरथ अवध राजन |
संग भ्राता कनिष्ठ भरत जो होंगे मेरे प्रिय कङ्कन || (४-६६)

भावार्थ: अवध राजन दशरथ के बड़े पुत्र राम नाम से मैं जन्म लूंगा| मेरे साथ छोटे भाई भरत मेरे प्रिय सहयोगी होंगे|

भ्राता लघु शत्रुघ्न होंगे प्रिय मेरे सुनो मुनिगन |
हो सत्य श्राप लेंगे शेष साथ जन्म नाम लक्ष्मन || (४-६७)

भावार्थ: मुनिगणो सुनो, छोटे भाई शत्रुघ्न मेरे प्रिय होंगे| श्राप सत्य हो| शेष (नाग) लक्ष्मण नाम से साथ जन्म लेंगे|

लूँ जब जन्म हेतु तमोराशि श्राप रूप राम भुवन |
आना समीप तब मेरे जाओ अब तुम नगर राजन || (४-६८)

भावार्थ: मैं जब तमोराशि श्राप के कारण राम रूप में पृथ्वी पर जन्म लूँ, तब तुम मेरे पास आना| अभी तुम सम्राट के नगर जाओ|

यद्यपि कारण श्राप हुए विस्मित कुछ क्षण नारायन |
पर हुआ दूर तम जैसे ही स्वीकारे श्राप जनार्दन || (४-६९)

भावार्थ: यद्यपि श्राप के कारण कुछ क्षण भगवान् विस्मित हो गए थे परन्तु जैसे ही उन्होंने श्राप को स्वीकार किया, अंधकार दूर हो गया|

किए आरक्षित श्राप हेतु स्वयं रक्षक भक्त नारायन |
हो मुक्त धर्म हुए स्थित स्व-स्थान तब चक्र सुदर्शन || (४-७०)

भावार्थ: भक्त के रक्षक नारायण ने श्राप को स्वयं के लिए आरक्षित किया| धर्म से मुक्त हो (प्रभु की आज्ञा से मुक्त हो) सुदर्शन चक्र तब अपने स्थान पर स्थापित हुए|

संतप्त शोक हो भय मुक्त मुनिगण तब कर हरि नमन |
करने लगे विचार परस्पर और बोले यह दृढ़ वचन || (४-७१)

भावार्थ: शोक से संतप्त भय रहित हो मुनिगण नारायण को प्रणाम कर परस्पर विचार करते हुए यह दृढ़ वचन बोले|

नहीं करें स्वीकार कन्या जीवन पर्यन्त कदाचन |
करें हम दृढ़ प्रतिज्ञा रख नाम हृदय नारायन || (४-७२)

भावार्थ: हम जीवन पर्यन्त कभी भी कन्या स्वीकार नहीं करेंगे, प्रभु को हृदय में धारण कर उन्होंने यह दृढ़ प्रतिज्ञा की|

कर मौन साधना पाए पूर्व भाव कृपा भगवन |
नृप अम्बरीष करते रहे धर्मवत प्रजा का पालन || (४-७३)

भावार्थ: मौन साधना कर वह प्रभु की कृपा से पूर्व स्थिति को प्राप्त हुए (अर्थात हृदय में शान्ति प्राप्त किए)| सम्राट अम्बरीष धर्मवत अपनी प्रजा का पालन करते रहे|

नृप संग कङ्कण गए सब साकेत धाम बाद मरन |
यथार्थ काल निमित्त मान मुनिगण और राजन || (४-७४)
लिए जन्म बन सुत दशरथ था नाम रामचन्द्र पावन |
था नर रूप पर थी स्मृति हेतु जन्म वध दुष्टजन || (४-७५)

भावार्थ: मरण पश्चात नृप (अम्बरीष) अपने सम्बन्धियों के साथ साकेत धाम गए| यथार्थ समय पर मुनिगण और नृप के सम्मान हेतु उन्होंने दशरथ के पुत्र पवित्र रामचन्द्र नाम से जन्म लिया| उनका मनुष्य रूप था पर उन्हें अपने जन्म का कारण, दुष्टों का वध, स्मरण था|

लिए जन्म युक्त पूर्ण शक्ति पर दिखे सम अपूर्ण जन |
कारण अनुग्रह भक्त की स्वीकार यह गति भगवन || (४-७६)

भावार्थ: यद्यपि पूर्ण शक्ति थी परन्तु वह अपूर्ण प्राणियों की भांति दिखे| भक्तों पर कृपा हेतु प्रभु ने यह गति स्वीकार की|

चूँकि किए अपहरण कन्या छल माया से श्री भगवन |
लेना पड़ा श्रापवश जन्म नर रूप उन्हें इस भुवन ||
नहीं उचित करना छल जानें यह दोष अवश्य महन || (४-७७)

भावार्थ: चूँकि भगवान् ने कन्या का अपहरण छल माया से किया, उन्हें पृथ्वी पर श्रापवश नर रूप में अवतरित होना पड़ा| तेजस्वियों यह दोष जानते हैं कि छल करना अवश्य उचित नहीं है|

हे भारद्वाज कहा मैंने तुम्हें हेतु जन्म राम भगवन |
महात्म्य सम्राट अम्बरीष और माया जनार्दन || (४-७८)

भावार्थ: (महर्षि वाल्मीकि कहते हैं) हे भारद्वाज, मैंने तुम्हें भगवान् राम के जन्म का कारण, नृप अम्बरीष का महात्म्य और नारायण की माया कही|

करे जो जन पठन श्रवण यह पावन चरित्र नारायन |
हो मुक्त माया वह महत पाए धाम प्रभु बाद मरन || (४-७९)

भावार्थ: जो प्राणी नारायण के इस पवित्र चरित्र का पठन या श्रवण करेगा, वह बुद्धिमान माया से मुक्त होकर मरण पश्चात प्रभु का धाम पाएगा|

पढ़े सुने हेतु जन्म दशरथ सुत और करे अनुमोदन |
नहीं हो भय उसे यम बने अतिथि गृह श्री नारायन || (४-८०)

भावार्थ: जो दशरथ के पुत्र के जन्म का कारण पढ़े, सुने और उसका अनुमोदन करे, उसे यम का भय नहीं होता (अर्थात मृत्यु का भय नहीं होता)| वह नारायण के गृह का अतिथि होता है (अर्थात मोक्ष प्राप्ति होती है)|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'भगवान् राम के जन्म का हेतु' नाम चतुर्थ सर्ग समाप्त|

पंचम सर्ग
कौशिकादि वैकुण्ठ गमन

सुनो ऋषि भारद्वाज अब कथा माँ जानकी जनन |
त्रेतायुग में करते वास कौशिक नामक ब्राह्मन || (५-१)

भावार्थ: हे ऋषि भारद्वाज, अब माँ जानकी के जन्म की कथा सुनो| त्रेतायुग में कौशिक नाम के एक ब्राह्मण रहते थे|

खाते सोते जागते करते रहते जप नाम नारायन |
करते रहते गान निरंतर उदार चरित्र जनार्दन || (५-२)

भावार्थ: वह खाते, सोते, जागते, नारायण नाम का जप करते रहते थे| विष्णु (भगवान्) के उदार चरित्र का निरंतर गान करते रहते थे|

आए एक बार स्थल पावन जहां हो पूजन नारायन |
साथ लय और ताल करें वह गायन चरित्र भगवन || (५-३)

भावार्थ: एक बार वह पवित्र स्थल आए जहां नारायण का पूजन होता है| लय और ताल के साथ वह प्रभु का चरित्र गायन करते|

पा उत्कृष्ट भाव साधना रहते वह स्थिति अचेतन |
रहते निर्भर भिक्षा पाए भक्तियोग से वह भगवन || (५-४)

भावार्थ: वह साधना के उच्च भाव अचेतन अवस्था में रहते थे| भिक्षा पर निर्भर रहते थे| भक्तियोग से उन्होंने प्रभु की प्राप्ति की|

देखा उन्हें उच्च भक्ति भाव में स्थित एक ब्राह्मन |
था नाम उसका पद्माक्ष जो दिया उन्हें बहुत अन्न || (५-५)

भावार्थ: उन्हें उच्च भक्ति भाव में स्थित एक पद्माक्ष नामक ब्राह्मण ने देखा| उसने उन्हें बहुत अन्न दिया|

पा पर्याप्त पौष्टिक आहार कौशिक संग कुटुंबजन |
करते रहते गुणगान प्रभु हो प्रसन्न वह महस्विन् || (५-६)

भावार्थ: पर्याप्त पौष्टिक भोजन पाकर तेजस्वी कौशिक अपने परिवार के साथ प्रसन्न हो प्रभु का गुणगान करते रहते थे|

करते रहते पद्माक्ष नाम विप्र हरि नाम का श्रवन |
कुछ काल बाद बन गए वह शिष्य कौशिक ब्राह्मन || (५-७)

भावार्थ: पद्माक्ष नाम के विप्र प्रभु का श्रवण करते रहते| कुछ समय पश्चात वह कौशिक ब्राह्मण का शिष्य बन गए|

अन्य सात जन जन्मे कुल क्षत्रिय वैश्य और ब्राह्मन |
हुए पारायण हरि लिए दीक्षा गुरु कौशिक महन || (५-८)

भावार्थ: अन्य सात प्राणियों ने, जो क्षत्रिय, वैश्य और ब्राह्मण कुल में जन्मे थे, प्रभु के पारायण हो महान गुरु कौशिक से दीक्षा ली|

शिष्य पद्माक्ष ही करता प्रबंध सब वासिन् भोजन |
रहते कौशिक और शिष्य प्रसन्न और मग्न भगवन || (५-९)

भावार्थ: शिष्य पद्माक्ष ही सभी निवासियों के भोजन का प्रबंध करता| कौशिक और शिष्य प्रसन्न और प्रभु में मग्न रहते|

आश्रम कौशिक में था एक सुन्दर मंदिर भगवन |
एक वैद्य वहां करते थे विधिपूर्वक जप नारायन ||
था नाम उनका मालव थे वह अनन्य भक्त जनार्दन || (५-१०)

भावार्थ: कौशिक के आश्रम में एक सुन्दर भगवान् (विष्णु) का मंदिर था| वहां एक वैद्य विधिपूर्वक नारायण का जप करते थे| उनका नाम मालव था| वह जनार्दन के अनन्य भक्त थे|

सप्रीति जलाते वह दीप दैनिक मंदिर नारायन |
थी उनकी पत्नी नाम मालती पतिव्रता पावन || (५-११)

भावार्थ: वह प्रेम सहित प्रतिदिन नारायण के मंदिर में दीप जलाते थे | उनकी पवित्र पतिव्रता पत्नी का नाम मालती था|

गौ गोबर लीप करती वह प्रतिदिन आश्रम पावन |
रहती सदा अति प्रसन्न सुन संग पति भगवद भजन || (५-१२)

भावार्थ: गौ गोबर से आश्रम को प्रतिदिन लीप कर वह पवित्र करती| पति के साथ भगवान् के भजन सुन वह सदैव प्रसन्न रहती|

आश्रम अन्य से आए एक बार वहां पचास ब्राह्मन |
थे वह अनन्य भक्त भगवन करें उनका महिमा मण्डन || (५-१३)

भावार्थ: एक बार अन्य आश्रम से वहां ५० ब्राह्मण आए| भगवान् के अनन्य भक्त वह उनका महिमा मण्डन करते रहते थे|

स्थित आश्रम करते सेवा हृदय से कौशिक महन |
लें तत्व ज्ञान और गायन ज्ञान था उनका मन्मन् || (५-१४)

भावार्थ: आश्रम में रहते हुए वह हृदय से महात्मा कौशिक की सेवा करते| उनकी इच्छा तत्व ज्ञान और गायन विद्या ज्ञान लेना था|

की प्राप्त विद्या फिरें फिर जग करते लयमय गायन |
हुआ विख्यात नाम गुरु कौशिक भू सम ज्ञानी वादन ||
हुआ मोहित नृप कलिंग सुन इनका तालबद्ध भजन || (५-१५)

भावार्थ: (गायन) विद्या प्राप्त कर वह विश्व में लयमय गायन करते घूमने लगे| गुरु कौशिक का नाम संसार में 'संगीत विशेषज्ञ' विख्यात हुआ| उनका लयमय भजन सुन कलिंग का राजा मोहित हो गया|

दिया वह आदेश करें कौशिक मेरा महिमा मंडन |
करें सब कुटिवासी ब्राह्मण मेरा यश गान श्रवन || (५-१६)

भावार्थ: उसने आदेश दिया कि कौशिक मेरा महिमा मण्डन करें| सभी आश्रमवासी ब्राह्मण मेरे यश गान को श्रवण करें|

सुन राजाज्ञा कौशिक कहे नृप अति मधुर वचन |
नहीं बोल सके मेरी जिह्वा यश अतिरिक्त भगवन ||
हूँ असमर्थ कह सकूं मैं शब्द सम हे महाराज महन || (५-१७)

भावार्थ: राजाज्ञा सुन कौशिक सम्राट को अति मधुर वचन बोले, 'मेरी जिह्वा प्रभु के अतिरिक्त किसी का यश गान नहीं कर सकती| मैं ' हे महान सम्राट' समान शब्द कहने में असमर्थ हूँ|

नहीं होती चलायमान वाणी करे अपि इंद्र वंदन |
सब शिष्य महात्मा कौशिक गौतम अरुणि संलक्षन || (५-१८)
सारस्वत वैश्य चित्रमाल शिशु करबद्ध करें निवेदन |
है सत्य जो कहा गुरुदेव कौशिक माननीय राजन || (५-१९)

भावार्थ: मेरी वाणी (प्रभु के अतिरिक्त) इंद्र की स्तुति के लिए भी चलायमान नहीं होती| महात्मा कौशिक के सभी शिष्य गौतम, अरुणि, सारस्वत,वैश्य, चित्रमाल, शिशु आदि करबद्ध निवेदन करने लगे, 'हे माननीय सम्राट, जो गुरुदेव कौशिक ने कहा, वह सत्य है|'

कहें विष्णु भक्त श्रीकर भी सुनो ध्यान से राजन |
हमारे कर्ण सुन सकें न यश किसी अतिरिक्त नारायन || (५-२०)

भावार्थ: विष्णु भक्त श्रीकर बोले, 'हे सम्राट, ध्यान से सुनो| हमारे कर्ण नारायण के अतिरिक्त किसी का यश सुनने में असमर्थ हैं|'

हुआ क्रुद्ध नृप सुन यह शब्द कौशिक और परिजन |
दी आज्ञा गाओ तुरंत यश मेरा सब दरबारीगन || (५-२१)
सुन आज्ञा नृप लगे गाने सब उपस्थित यश राजन |
बोला गर्वित नृप सुनो कौशिक और सब ब्राह्मन ||
गाएं मेरा यश यह सब तो क्यों तुम्हारे लिए कठिन || (५-२२)

भावार्थ: कौशिक और उनके शिष्यों के यह शब्द सुन सम्राट क्रोधित हो गया| उसने अपने दरबारीगणों को आज्ञा दी कि मेरे यश का तुरंत गुणगान करो| सम्राट की आज्ञा सुन सभी उपस्थित (दरबारी) उसका यश और प्रशंसा गान करने लगे| तब अभिमानी सम्राट बोला, 'कौशिक और समस्त शिष्यगण सुनो, जब यह सब मेरा यश गा सकते हैं, तो तुम्हें कठिनता क्यों है?'

राजाज्ञा पर कर रहे जब सभास्थ नृप यश गायन |
मूँद लिए कर्ण अपने होकर दुःखी सब ब्राह्मन || (५-२३)

भावार्थ: जब राजाज्ञा पर सभी दरबारी सम्राट का यश गायन कर रहे थे तब सभी ब्राह्मणों ने दुःखी होकर अपने कान बंद कर लिए|

क्रुद्ध नृप बोला करो इनके कर्ण लोहकील से भेदन |
हुए दुःखी ऋषि कौशिक सुन यह क्रूर वचन राजन || (५-२४)

भावार्थ: क्रोध में सम्राट ने कहा कि इन सबके कर्ण में लौह कील से भेदन कर दो| सम्राट के यह क्रूर वचन सुन महात्मा कौशिक दुःखी हुए|

विस्मित हो लगे सोचने करे क्यूँ ऐसी हठ राजन |
कहीं हो विवश गाना पड़े हमें नृप महिमा मंडन ||
हो भीरु किया सभी ब्राह्मणों ने जिह्वा छेदन || (५-२५)

भावार्थ: आश्चर्यचकित हो सोचने लगे कि सम्राट ऐसी हठ क्यों कर रहा है? कहीं हमें विवश हो सम्राट की प्रशंसा में गाना पड़े, इस डर से सभी ब्राह्मणों ने अपनी जीभ काट ली|

हो क्रोधित दिया सम्राट आदेश छोड़ें देश तत्क्षन |
किया कुटि धनादि जब्ध चले तब उत्तर दिशा सतगन || (५-२६)

भावार्थ: क्रोधित हो तब सम्राट ने आदेश दिया कि वह तत्काल देश (कलिंग राज्य) छोड़ें| उनका आश्रम, धनादि जब्ध कर लिया| तब वह सात्विक प्राणीगण उत्तर दिशा की ओर चल दिए|

हुए पथ बैचेन भूख प्यास लगा काल आया मरन |
देखी यह दशा यम सोचे हो कैसे कल्याण इन जन || (५-२७)

भावार्थ: मार्ग में भूख प्यास से बैचेन हो गए| लगा जैसे मृत्यु का समय आ गया| जब यम (देव) ने ऐसी दशा देखी तो सोचा कि इनका कल्याण कैसे हो?

देख विस्मित यम बोले ब्रह्मदेव सुनो सभी देवगन |
हैं यह सब कौशिकादि ब्राह्मण नारायण परायन || (५-२८)

भावार्थ: यम (देव) को आश्चर्यचकित देख ब्रह्मा ने सभी देवताओं से कहा, 'हे देवगणो सुनो, कौशिकादि यह सभी ब्राह्मण नारायण के भक्त हैं|'

करते यह सब नित्य वंदन कर गायन नारायण भजन |
ले आओ इन्हें ब्रह्मलोक करते यदि यह मोक्ष मन्मन् || (५-२९)

भावार्थ: यह प्रतिदिन भगवान् के भजन गा कर उनका पूजन करते हैं| यदि इनकी इच्छा मोक्ष प्राप्ति की है तो इन्हें ब्रह्मलोक ले आओ|

सुन आज्ञा दौड़े तुरंत देव पुकारते उन ब्राह्मण |
सुनो लोकपाल पद्माक्षी मालती कौशिक महन || (५-३०)

भावार्थ: ब्रह्मा की आज्ञा सुन सभी देवता इन ब्राह्मणों को पुकारते हुए दौड़े, 'लोकपाल, पद्माक्षी, मालती, महात्मा कौशिक सुनो|'

करते हुए इस प्रकार माननीय मधुर सम्बोधन |
ले चले उन्हें तत्काल ब्रह्मलोक प्रति मार्ग गगन || (५-३१)

भावार्थ: इस प्रकार सम्माननीय मधुर सम्बोधन करते हुए वह उन्हें गगन मार्ग से तुरंत ब्रह्मलोक ले चले|

किया जब लोकपितामह ब्रह्मदेव ने यह अवलोकन |
कौशिकादि ब्राह्मण आ रहे ब्रह्मलोक संग देवगन ||
उठे स्वयं करने उनका यथोचित स्वागत और पूजन || (५-३२)

भावार्थ: जब लोकपितामह ब्रह्मदेव ने यह देखा कि कौशिकादि ब्राह्मण देवताओं के साथ ब्रह्मलोक आ रहे हैं, तब वह स्वयं उनका यथोचित स्वागत और पूजन करने के लिए उठे|

देखे हरि स्वागत भव्य किया जो देव चतुरानन |
हो रहा था भारी कोलाहल ब्रह्मलोक सब स्थापन || (५-३३)

भावार्थ: ब्रह्मदेव ने इतना भव्य स्वागत किया, यह नारायण ने देखा| समस्त ब्रह्मलोक में भारी कोलाहल हो रहा था|

हों उपस्थिति सब साकेत धाम जान इच्छा जनार्दन |
कर निवारण सब देव तब श्री हिरण्यगर्भ भगवन ||
संग कौशिकादि ब्राह्मण और ले कर सभी देवगन || (५-३४)
चले धाम साकेत मिलने प्रभु वह भक्त श्री भगवन |
करते शम वहां संग वासी श्वेत दीप नारायन || (५-३५)

भावार्थ: भगवान् विष्णु सब की उपस्थिति साकेत धाम में चाहते हैं, यह जानकार सब देवताओं का निवारण (उन्हें सांत्वना देकर) कर तब श्री हिरण्यगर्भ भगवान् (ब्रह्मदेव)

कौशिकादि ब्राह्मणों और सभी देव भगवद्भक्तों को लेकर प्रभु के साकेत धाम चले| वहां प्रभु श्वेत दीप वासियों के साथ विश्राम कर रहे थे|

कर रहे थे ज्ञान योगेश्वर भक्त सिद्ध उनका पूजन |
थे चतुर्भुज दिव्य पावन युक्त आयुध श्री नारायन || (५-३६)

भावार्थ: ज्ञान योगेश्वर भक्त सिद्ध उनका पूजन कर रहे थे| वह दिव्य, पवित्र, शस्त्रों से सुशोभित चतुर्भुज श्री नारायण थे|

छियासी सहस्त्र दीप्तिमान विप्र से सेवित भगवन |
हस्त सुशोभित शंख चक्र शस्त्रादि तन आभूषन ||
थे लेटे हरि शैय्या शेषनाग कर रही थीं श्री वंदन ||
देदीप्तिमान आभा से चमक रहा था हरि आनन || (५-३७)

भावार्थ: ८६,००० दीप्तिमान ब्राह्मणों से सेवित भगवान् नारायण, जिनके हाथों में शंख, चक्र आदि शस्त्र सुशोभित हो रहे हैं ,शेषनाग की शैय्या पर लेटे थे और श्री (लक्ष्मी) वंदन कर रहीं थीं| प्रभु का मुख देदीप्तिमान आभा से चमक रहा था|

अघ-रहित ब्रह्मऋषि नारद सनकादिक महात्मन |
संग उनके विविध दिव्य जन कर रहे उनका पूजन || (५-३८)

भावार्थ: पाप-रहित ब्रह्मऋषि नारद और सनकादिक महात्मागण, उनके साथ (महर्षि वाल्मीकि एवं महर्षि भारद्वाज) कई दिव्य प्राणी उनका पूजन कर रहे थे|

सभा उनकी फैली हुई क्षेत्र एक सहस्त्र योजन |
थे जिसके एक सहस्त्र द्वार जड़ित दिव्य मोती रत्न || (५-३९)

भावार्थ: उनकी सभा एक सहस्त्र योजन में फैली हुई थी जिसके एक सहस्त्र द्वार दिव्य मोती और रत्नों से जड़ित थे|

थे आसीन प्रभु आसन उच्च जड़ित अनमोल रत्न |
था सुशोभित संलिखति चित्रकारी वह कनकासन ||
थी दृष्टि स्थिति हरि उन जन जो कर रहे कर्म पावन || (५-४०)

भावार्थ: प्रभु अनमोल रत्नों से जड़ित उच्च आसन पर बैठे हुए थे| उनका स्वर्ण सिंहासन चित्रकारी और उत्कीर्ण से सुशोभित था प्रभु की दृष्टि पाप-रहित उन प्राणियों पर टिकी हुई थी जो शुभ कर्म कर रहे थे |

पहुँच तब संग कौशिकादि संत चतुरानन भगवन |
करने लगे करबद्ध स्तुति दिव्य पावन श्री नारायन || (५-४१)

भावार्थ: तब कौशिकादि संतों के साथ भगवन ब्रह्मदेव वहां पहुँच दिव्य पवित्र श्री नारायण की हाथ जोड़ स्तुति करने लगे|

देख सम्मुख विनम्र दिव्य पाप रहित महात्मागन |
किए स्वागत उठ आसन प्रत्येक देव और संत महन || (५-४२)

भावार्थ: अपने सम्मुख विनम्र, दिव्य और पाप-रहित महात्माओं को देख अपने आसन से उठकर स्वयं प्रत्येक देवता और महान संतों का स्वागत किया|

होने लगा घोष चहुँ ओर जय जय हे हरि जनार्दन |
हुए विस्मित सब देख शालीनता दिव्य श्री नारायन ||
तब कहे श्री नारायण सुनो यह कथा ब्राह्मणगन || (५-४३)

भावार्थ: चारों दिशाओं में हरि जनार्दन का जय जय घोष होने लगा| दिव्य भगवान् की यह शालीनता देख सब को आश्चर्य हुआ| तब श्री नारायण ब्राह्मणों से कहने लगे कि यह कथा सुनो|

हैं समर्पित धर्म मेरे भक्त संत कौशिक ब्राह्मन |
और शिष्य जो किए वास संग उनके कुश स्थल पावन ||
संग गुरु रहे तत्पर सदा कर सकें खोज तत्व-भगवन || (५-४४)

भावार्थ: धर्म को समर्पित संत ब्राह्मण कौशिक मेरे भक्त हैं| उनके शिष्य जिन्होंने पवित्र कुश आश्रम में उनके साथ निवास किया, सदैव गुरु के साथ परमात्म-तत्व की खोज में तत्पर रहे हैं|

ज्ञानी तत्व वादन रहे यह संलग्न मेरी कीर्ति गायन |
हैं विख्यात विश्व यह नित्य शाश्वत भक्त नारायन || (५-४५)

भावार्थ: संगीत तत्व के ज्ञाता यह सदैव मेरी कीर्ति के गायन में संलग्न रहे हैं| यह नारायण के नित्य शाश्वत भक्त से विश्व में प्रसिद्ध हैं|

है इन्हें अनुमति कर सकें धाम साकेत कभी भ्रमन |
दे आशीष बोले तब नारायण सुनो कौशिक महन || (५-४६)

भावार्थ: इन्हें साकेत धाम कभी भी भ्रमण करने की अनुमति है| आशीर्वाद देकर तब नारायण महात्मा कौशिक से बोले|

हो प्राप्त तुम पद दिग्वल गणाधिपत्य संग परिजन |
करो वास सदैव जहां निवास मेरा प्रिय भक्तगन || (५-४७)

भावार्थ: तुम अपने शिष्यों सहित दिग्वल (अति बलशाली) गणाधिपत्य पद को प्राप्त हो| मेरे प्रिय भक्तगणो, तुम वहीं वास करो जहां मेरा निवास है|

किए सम्बोधित तब मालव और मालती नारायन |
हे मालव करो निवास संग भार्या तुम मेरे भुवन || (५-४८)

भावार्थ: तब नारायण ने मालव और मालती को सम्बोधित किया, 'हे मालव, तुम अपनी पत्नी के साथ मेरे लोक में निवास करो|'

कर धारण दिव्य रूप संग अनुचर करो तुम गान श्रवन |
जब तक यह दिव्य लोक तब तक हो यहां के वासिन् || (५-४९)

भावार्थ: दिव्य रूप धारण कर अपने सहयोगियों के साथ गान श्रवण करते रहो| जब तक यह दिव्य लोक है, तब तक यहाँ वास करो|

हो सम्मुख पद्माक्ष तब बोले कृपालु श्री नारायन |
हो धनद तुम और बन धनपति करो यथेच्छा भ्रमन || (५-५०)

भावार्थ: तब कृपालु श्री नारायण पद्माक्ष के सम्मुख हो बोले, 'तुम धनद हो और धनपति होकर अपनी स्वेच्छा से भ्रमण करो|'

हों कौशिक गण प्रमुख बोले ब्रह्मा से भगवन |
करते संतुष्ट इन्हें अन्य गण करें वास मेरे भुवन || (५-५१)

भावार्थ: ब्रह्मा से भगवन बोले, 'कौशिक प्रमुख गण हों| अन्य सभी गण इनको संतुष्ट करते हुए मेरे लोक (साकेत धाम) में वास करें|

हैं महान भक्त मेरे यह सभी यशस्वी ब्राह्मन |
लौह कील से काटी जिह्वा स्वेच्छा इन सब महस्विन् || (५-५२)
न कर सकें ताकि अतिरिक्त मेरे यश किसी का गायन |
इस हेतु हैं मम भक्ति पारायण यह व्रतधारी महन || (५-५३)

भावार्थ: यह सभी यशस्वी ब्राह्मण मेरे महान भक्त हैं| इन्होने स्वेच्छा से लोहे की कील से अपनी जिह्वा काट दी ताकि मेरे अतिरिक्त यह किसी का यश गायन न कर सकें| इस कारण यह व्रतधारी विभूतियाँ मेरी भक्ति के पारायण हैं|

हो प्राप्त इन्हें पद उच्च सुरक्षित जो केवल देवगन |
करें सहित पत्नी वास धाम साकेत मालव चेतन || (५-५४)

भावार्थ: इन्हें उच्च पद प्राप्त हो जो केवल देवताओं के लिए सुरक्षित है| श्रेष्ठ मालव सपत्नीक साकेत धाम में वास करें|

करते हुए नित्य गायन यश मेरा करें सतत पूजन |
करते रहें भ्रमण जग सुनाते मेरा चरित्र पावन || (५-५५)

भावार्थ: मेरा पवित्र यश गायन करते हुए निरंतर पूजन करें| मेरे पवित्र चरित्र को सुनाते है विश्व भ्रमण करते रहें|

जाने जग माध्यम किए प्राप्त हरि यह ब्राह्मणगन |
हे कौशिक शिष्य भक्त पद्माक्ष सुनो तुम मेरे वचन || (५-५६)

भावार्थ: ब्राह्मणों को भगवद प्राप्ति का हेतु विश्व जान सके| हे कौशिक शिष्य भक्त पद्माक्ष, तुम मेरे वचन सुनो|

करो प्राप्त धनेश पद और रहो सदा मेरे आसन्न |
उपासित त्रिभुवन नारायण कहे यह मनहर वचन || (५-५७)

भावार्थ: तुम धनेश पद को प्राप्त कर सदैव मेरे समीप रहो| समस्त लोकों से पूजित नारायण ने यह मन को हरने वाले वचन कहे|

हुए आसीन प्रभु तब सुन्दर आसन संग सब भक्तगन |
कमल सम हस्त से कृपालु हरि करें सबका पालन || (५-५८)

भावार्थ: तब प्रभु सभी भक्तों के साथ सुन्दर आसन पर विराजमान हुए| कमल समान हाथों से कृपालु नारायण सभी का पालन करते हैं|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'कौशिकादि वैकुण्ठ गमन' नाम पंचम सर्ग समाप्त|

षष्ठ सर्ग
हरिमित्रोपाख्यान

हेतु प्रीति कौशिक रचे नारायण तब उत्सव महन |
संग रुचिर छंद गायन करें तब गायक मधुर भजन || (६-१)

भावार्थ: कौशिक के प्रति प्रीति के कारण नारायण ने तब एक महोत्सव आयोजित किया| सभी गायकों ने आकर्षक छंद के साथ मधुर भजन गाए|

हुए एकत्रित हरि धाम तब कई लक्ष भक्त नारायन |
कर रहे वह श्रवण वादक जो वाद्य विद्या अति निपुन || (६-२)

भावार्थ: साकेत धाम में कई लक्ष भगवान् के भक्त एकत्रित हुए| वाद्य विद्या में अति निपुण वादकों को वह सुन रहे थे|

किया गायन तब श्री हरि पत्नी लक्ष्मी हो प्रसन्न |
संग उनके अनगिनत परिचारिका कर रहीं साथ गायन || (६-३)

भावार्थ: तब नारायण परिग्रहा (विवाहिता) लक्ष्मी जी ने प्रसन्न होकर गायन किया| उनके साथ अनगिनत परिचारिका गायन कर रहीं थीं|

हो रही थी अनियंत्रित सभा मय देव और चतुरानन |
दुर्भाग्य से हो रहे थे चंचल सभी भगवन भक्तगन ||
हुए तब क्रुद्ध रक्षक लिए भुशुण्डी सम शस्त्र भयधन || (६-४)

भावार्थ: देवता और ब्रह्मदेव वाली सभा अनियंत्रित हो रही थी| दुर्भाग्य से भगवान् के भक्त चंचल हो रहे थे| तब भुशुण्डी समान भयानक शस्त्रों वाले रक्षक क्रोधित हो गए|

किए विरोध भक्त जो आसीन समीप हरि सुरगन |
सहित ब्रह्मा नारदादि   किए रक्षक स्थानांतरन ||
लीं भाग श्री सेविकाएं करने स्थानांतरण मुनिगन ||
था मान प्रति सुर मुनि पर दुर्धर सभा नियंत्रन || (६-५)

भावार्थ: प्रभु के समीप बैठे देवता और मुनिगणों ने भक्तों का विरोध किया| ब्रह्मा एवं नारद आदि को रक्षकों ने स्थानांतरण कर दूर बिठाया| इस नए स्थान के स्थापन में लक्ष्मी जी की सेविकाओं ने भी भाग लिया| यद्यपि देवताओं और ऋषियों के प्रति सम्मान था परन्तु सभा को नियन्त्रण करने के लिए यह अति आवश्यक था|

यद्यपि किए रक्षक ब्रह्मा सुर मुनि आदि स्थानांतरन |
पर नहीं हुए वह क्रुद्ध थे विनम्र सम्मुख नारायन ||
हुए नारद क्रुद्ध अवश्य समझ इसे अपमान महन || (६-६)

भावार्थ: यद्यपि भक्तों ने ब्रह्मा, देवताओं एवं मुनियों का स्थानांतरण कर दिया था, पर वह क्रोधित नहीं हुए| वह प्रभु के सम्मुख विनम्र थे| नारद इसे घोर अपमान समझ अवश्य क्रुद्ध हुए|

रहित क्रोध करबद्ध हुए खड़े सब देव सम्मुख भगवन |
बुलाए सभासद तब गन्धर्व तुम्बुरू दे उन्हें अति मानन || (६-७)

भावार्थ: क्रोध-रहित सभी देवगण कर बद्ध प्रभु के सम्मुख खड़े हुए| तब सभासदों ने सम्मान देते हुए गन्धर्व तुम्बुरू को बुलाया|

बैठे वह निर्धारित आसन समीप श्री और नारायन |
सप्त सुर संगीत से किए तब वह अति मधुर गायन || (६-८)

भावार्थ: अपने निर्धारित आसन पर वह (माँ) लक्ष्मी और नारायण के समीप बैठ गए| तब संगीत के सात सुरों से उन्होंने मधुर गायन किया|

हुए अति हर्षित हिय डूबे सब उन्माद वाद्य गायन |
किए थे प्रभु आमंत्रित उन्हें हेतु कौशिक मानन || (६-९)

भावार्थ: सब के हृदय हर्षित हो वाद्य गायन में उन्मादित थे| प्रभु ने इन्हें कौशिक के सम्मान हेतु आमंत्रित किया था|

किए सुशोभित उन्हें आभरण दिव्य युक्त मणि रत्न |
दिव्य हरि मंदिर में हुआ सहित मान उनका वंदन || (६-१०)

भावार्थ: उन्हें मणि और रत्नों से युक्त दिव्य आभूषणों से सुशोभित किया| आदर सहित नारायण के दिव्य महल में उनका वंदन किया|

गए तब अपने धाम गन्धर्व हो हृदय अति प्रसन्न |
किए तब देव और ब्रह्मा स्तुति बहु भांति भगवन || (६-११)

भावार्थ: हृदय में अति प्रसन्न हो गन्धर्व तब अपने लोक को चले गए| तब देवताओं एवं ब्रह्मा ने नारायण की बहु भांति स्तुति की|

गए स्व-लोक सब हुआ जब समाप्त भव्य आयोजन |
थे नारद क्रुद्ध पूर्वमेव हेतु आसन स्थानांतरन ||
देख महत सत्कार तुम्बुरू हुए ऋषि नारद असहन || (६-१२)

भावार्थ: जब यह भव्य आयोजन समाप्त हुआ तब सब अपने अपने लोकों को चले गए| नारद पहले से ही आसन के स्थानांतरण पर क्रुद्ध थे| तुम्बुरू का इतना महान सत्कार देख ऋषि नारद असहज हो गए|

मन महा शोकित संतप्त पीड़ा हुई हृदय अति जलन |
सोचने लगे किया क्यों उनका अपमान नारायन ||
नहीं उचित सत्कार अन्य जब उपस्थित नारद महन || (६-१३)

भावार्थ: मन में महा शोक लिए पीड़ा से संतप्त उनके हृदय में अत्यंत ईर्ष्या हुई| (नारद) सोचने लगे कि नारायण ने उनका अपमान क्यों किया| जब तेजस्वी नारद उपस्थित हो, तब किसी अन्य का इतना सत्कार उचित नहीं है|

समझ स्व-तिरस्कार हो उठे क्रोधित तब मुनि महन |
कर स्मरण थीं सेविकाएं श्री उत्तरदायी इस करन ||
दे दिया सहसा श्राप भार्या हरि श्री हेतु अवगणन || (६-१४)

भावार्थ: अपना तिरस्कार समझ महात्मा क्रोधित हो उठे| श्री (लक्ष्मी) की सेविकाओं इस कार्य के प्रति उत्तरदायी थीं, यह स्मरण किया| तब अचानक उन्होंने नारायण की भार्या श्री (लक्ष्मी) को अपमान के कारण श्राप दे दिया|

हो रुष्ट बोले ऋषि नारद तब यह कठोर वचन |
किया आमंत्रित हरि पर कीं श्री मेरा अपमान महन ||
सम आसुरी बलात् की सेविकाएं मेरा स्थानांतरन || (६-१५)

भावार्थ: रुष्ट होकर ऋषि नारद तब यह कठोर वचन बोले, 'नारायण ने मुझे आमंत्रित किया पर नारायणी ने घोर अपमान किया| राक्षसी समान सेविकाओं ने मेरा बलपूर्वक स्थानांतरण किया|'

दूँ श्राप लें जन्म लक्ष्मी गर्भ असुर वंश भुवन |
जैसा किया मुझे तिरस्कृत सेविकाएं श्री भूमन || (६-१६)
सादृश्य कर त्याग आसुरी गाड़ेगी स्व-सुता भुवन |
हुई कम्पित त्रिलोकी सुन नारद के कठोर वचन || (६-१७)

भावार्थ: मैं लक्ष्मी को श्राप देता हूँ कि यह पृथ्वी पर असुर वंश के गर्भ से जन्म लें| जिस प्रकार इस सभा में मुझे श्री (लक्ष्मी) की सेविकाओं ने तिरस्कृत किया है, उसी प्रकार आसुरी अपनी पुत्री को त्याग कर भूमि में गाड़ देगी| नारद के कठोर वचन सुनकर त्रिलोकी कम्पित हो गई|

करने लगे हाहाकार देव दानव गन्धर्व भूजन |
जब हुआ क्रोध शांत समझे था वह श्राप अन्यायिन् ||
करने लगे विलाप महामुनि किया मैंने अघ गहन || (६-१८)

भावार्थ: देवता, दानव, गंधर्व एवं प्राणीगण हाहाकार करने लगे| जब क्रोध शांत हुआ तब श्राप को विधर्म समझ महामुनि (नारद) विलाप करने लगे| मैंने महान पाप किया|

किया अनुभव अपमान सम्मुख श्री और नारायन |
धिक्कार मुझे हूँ जीवित तत्पश्चात इस अघ गहन || (६-१९)

भावार्थ: मैंने लक्ष्मी एवं नारायण के समक्ष अपमान का अनुभव किया| मुझे धिक्कार है कि मैं इस घोर पाप (श्राप देने) करने के पश्चात भी जीवित हूँ|

क्या कर दिया तुम्बुरू तुमने हुआ जो विचलित मन |
कैसे दिखाऊँ स्व-मुख अब सुर असुर और भूजन || (६-२०)

भावार्थ: तुम्बुरू तुमने क्या कर दिया जिससे मेरा मन विचलित हो गया| अब मैं अपना मुख सुर, असुर और प्राणियों को कैसे दिखाऊँ?

धिक्कार मुझे यह सोच प्रमत नारद कर रहे रुदन |
सुन दारुण श्राप प्रति श्री उठे स्व-आसन भगवन || (६-२१)

भावार्थ: मुझे धिक्कार है, ऐसा सोच कर बुद्धिमान नारद रुदन करने लगे| लक्ष्मी जी के प्रति घोर श्राप सुन नारायण अपने आसन से उठे|

समीप नारद किए तब श्री और नारायण गमन |
करबद्ध श्री हो प्रसन्न करने लगीं नारद वंदन || (६-२२)

भावार्थ: तब श्री (लक्ष्मी) और नारायण नारद के समीप गए| प्रसन्न मुद्रा में श्री करबद्ध नारद का वंदन करने लगीं|

नहीं होंगे अन्यथा मुनिवर कहे जो आपने वचन |
कीजिए कृपा मुझ पर करूँ मैं विनम्र निवेदन || (६-२३)

भावार्थ: (श्री बोलीं) 'आपके वचन मुनिवर अन्यथा नहीं जाएंगे (अर्थात वह सत्य होंगे)| मुझ पर कृपा कीजिए, यह मैं विनम्र निवेदन करती हूँ|'

दें प्रत्येक मुनिश्रेष्ठ रक्त बूँद कर रहे जो तप वन |
हो एकत्रित रक्त वह कलश अभिमंत्रित दिव्य पावन ||
करे एक आसुरी इस रक्त का हेतु स्व-इच्छा भक्षन || (६-२४)

भावार्थ: जो वन में तपस्या कर रहे हैं, वह सब मुनिश्रेष्ठ रक्त की एक बूँद दें| उसे एक दिव्य पवित्र कलश में मन्त्र से अभिचारित एकत्रित किया जाए| एक आसुरी इसका स्व-इच्छा से भक्षण करे|

लूँ जन्म मैं हेतु इस रुधिर बीज मुनि सुचित्तवन |
कर वंदन महामुनि करूँ मैं यह विनम्र निवेदन || (६-२५)

भावार्थ: हे दयालु मुनि, मैं इस रक्त के बीज से जन्म लूँ| हे महामुनि, मैं वंदन कर आपसे यह विनम्र निवेदन करती हूँ|

हो अवश्य यह दारुणता हेतु आप बोले नारद वचन |
हो सम्मुख नारद बोले तब श्रीपति मधुर वचन || (६-२६)

भावार्थ: नारद बोले, 'यह दारुणता आपके निमित्त होगी|' तब प्रभु नारद के सम्मुख हो मधुर वचन बोले|

दान तप यज्ञ तीर्थ आदि नहीं करते मुझे प्रसन्न |
होता मैं प्रसन्न जब करें भक्त मेरा नाम कीर्तन || (६-२७)

भावार्थ: दान, तप, यज्ञ, तीर्थ आदि मुझे प्रसन्न नहीं करते| जब भक्तगण मेरा नाम कीर्तन करते हैं, तब मैं प्रसन्न होता हूँ|

कर गुणगान मेरा भक्त पाएं हरि धाम पश्चात मरन |
जैसे पा सके कौशिकादि संत कर मेरा यश गायन || (६-२८)

भावार्थ: मेरा महिमा मंडन कर भक्त मृत्यु पश्चात साकेत धाम पा सकते हैं जैसे कौशिकादि संतों ने मेरे यश गायन से पाया|

है अति प्रिय भक्त मुझे जो करे युक्त लय ताल भजन |
अतैव मुझे प्रिय अधिक तुम्बुरू तुमसे नारद महन || (६-२९)

भावार्थ: जो भक्त लय और ताल के साथ मेरा भजन करता है, वह मुझे अति प्रिय है| इसी कारण हे महात्मा नारद, मुझे तुम्बुरू तुम से अधिक प्रिय है|

करो तुम भी साहृश्य युक्त लय ताल मेरा भजन |
जाओ वास गानबन्धु तुम जो दे सकें विद्या गायन ||
होगा संभव इस ज्ञान से पूर्ण तुम्हारा मन्मन् || (६-३०)

भावार्थ: इसी प्रकार तुम भी लय ताल से युक्त मेरा भजन करो| गानबन्धु के पास जाकर तुम गायन विद्या सीखो| इस ज्ञान से तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी|

उलूक गानबन्धु का मानसरोवर उत्तर है वसन |
कर स्वीकार गुरु उन्हें पाओ श्रेष्ठ विद्या गायन || (६-३१)

भावार्थ: मानसरोवर के उत्तर में उलूक गानबन्धु का निवास है| उन्हें गुरु स्वीकार कर तुम श्रेष्ठ गायन विद्या पाओ|

ध्यान पूर्वक सुने मुनि नारद प्रिय भगवद वचन |
गए उलूक गानबन्धु समीप सीखने विद्या गायन || (६-३२)

भावार्थ: मुनि नारद ने प्रभु के वचन ध्यान पूर्वक सुने| तब वह उलूक गानबन्धु के पास गायन विद्या सीखने गए|

रहते गन्धर्व किन्नर यक्ष अप्सराएं उस स्थल पावन |
वास गानबन्धु दिख रहा समान स्वर्ग सभा वपुन ||
थे उलूक आसीनस्थ मध्य सब शिष्य सम गुरुजन || (६-३३)

भावार्थ: गन्धर्व, किन्नर, यक्ष एवं अप्सराएं उस पवित्र स्थान पर रह रहे थे| गानबन्धु स्थल स्वर्ग में देवताओं की सभा के समान लग रहा था| सभी शिष्यों के मध्य गुरु समान उलूक आसीनस्थ थे|

मधुर स्वर में कर रहे खग भी अभ्यास विद्या गायन |
देखे नारद नाना प्रकार खग थे जो विद्या निपुन || (६-३४)

भावार्थ: मधुर स्वर में पक्षी भी गायन विद्या का अभ्यास कर रहे थे| नारद ने अनेक प्रकार के पक्षी देखे जो विद्या में निपुण थे|

आते देख ऋषि नारद तब उलूक गानबन्धु विचक्षन |
उठ आसन कर प्रणाम किए वह बहु भांति पूजन || (६-३५)

भावार्थ: ज्ञानी उलूक गानबन्धु ने ऋषि नारद को आते देख आसन से उठकर प्रणाम कर बहु भांति उनकी पूजा की|

पूछे किस कार्य हेतु हुआ ऋषि आपका आगमन |
करूँ तुरंत पूर्ण लक्ष्य यदि कर सकूं मैं हे ब्राह्मन || (६-३६)

भावार्थ: (उलूक गानबन्धु) पूछे, 'हे ऋषि, आपका आगमन किस कार्य हेतु हुआ है? हे ब्राह्मण, यदि मैं कर सकूं तो उस लक्ष्य को तुरंत पूर्ण करूंगा|'

सुन ऋषि नारद उलूक गानबन्धु के विनीत वचन |
बोले हे खगेन्द्र करो लक्ष्य मेरा ध्यान से श्रवन || (६-३७)

भावार्थ: उलूक गानबन्धु के विनीत वचन सुनकर (ऋषि नारद) बोले, 'हे पक्षियों के नृप, मेरा लक्ष्य ध्यान से सुनिए|'

सुनो वृतांत जो हुआ घटित अभी धाम नारायन |
थी आयोजित भव्य सभा देने मान कौशिक ब्राह्मन || (६-३८)

भावार्थ: वृतांत सुनो जो अभी साकेत धाम में घटित हुआ| कौशिक ब्राह्मण को आदर देने के लिए एक भव्य सभा का आयोजन किया गया|

थे तुम्बुरू उपस्थित वहां दिए सम्मान अति नारायन |
किए श्री संग नारायण उनका मधुर गान श्रवन || (६-३९)

भावार्थ: (गन्धर्व) तुम्बुरू वहां उपस्थित थे जिन्हें भगवान् ने अत्यंत सम्मानित किया| उनके मधुर गान का श्री (लक्ष्मी) सहित नारायण ने श्रवण किया|

देवगण ब्रह्मा और मेरा किया विचलन आसन |
बैठे रहे कौशिकादि समीप श्री और नारायन || (६-४०)

भावार्थ: देवतागण, ब्रह्मा और मेरे आसनों का स्थानांतरण किया गया| कौशिक आदि श्री (लक्ष्मी) और नारायण के समीप बैठे रहे|

दिए हरि सम्मान कौशिक गाणपत्य पद उच्च पावन |
हूँ खिन्न मैं नहीं दिए हरि उचित मान मम तप गहन || (६-४१)

भावार्थ: नारायण ने कौशिक को उच्च पवित्र पद गाणपत्य दिया| मैं दुःखी हूँ कि मेरे गहन तप का उचित मान प्रभु ने नहीं किया|

नहीं महत्व ज्ञान मेरा और किए जो मैंने हवन |
है नहीं यह भाग सोलहवां अपेक्षित कला गायन || (६-४२)

भावार्थ: मेरे ज्ञान और जो मैंने हवन किए हैं, उसका महत्व नहीं है| यह गायन कला के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं है|

देख मुझे दुःखी और दशा अनुशोक बोले भगवन |
हे ब्रह्मऋषि नारद है महात्म्य अधिक लय से गायन || (६-४३)

भावार्थ: मुझे दुःखी और अनुशोक दशा में देख भगवान् बोले, 'ब्रह्मऋषि, लय से गायन का महात्म्य अधिक है|'

जा वास उलूक गानबन्धु सीखो यह कला गरिमन् |
हैं वह आचार्य गान देंगे अवश्य ज्ञान तुम्हें महन || (६-४४)

भावार्थ: 'उलूक गानबन्धु के वास जा इस महान कला को सीखो| वह गान के आचार्य हैं| हे महात्मा, तुम्हें ज्ञान अवश्य देंगे|'

आया इस हेतु सीख सकूं मैं जटिलता इस विद्मन् |
कर स्वीकार शिष्य मुझे दो यह ज्ञान हे प्रमत महन || (६-४५)

भावार्थ: मैं आया हूँ कि इस ज्ञान की जटिलता सीख सकूं| हे महाज्ञानी, मुझे शिष्य स्वीकार कर यह ज्ञान दीजिए|

बोले तब खगेन्द्र उलूक गानबन्धु अति मधुर वचन |
हे ब्रह्मऋषि नारद सुनो वृत्तांत मेरे पूर्व जनन || (६-४६)

भावार्थ: तब खगेन्द्र उलूक गानबन्धु अति मधुर वचन बोले, 'हे ब्रह्मऋषि नारद पूर्व जन्म का वृत्तांत सुनो|'

है यह आश्चर्यजनक पर हरे पाप जब करें सुमिरन |
समय एक करते राज धर्मात्मा भुवनेश इस भुवन || (६-४७)

भावार्थ: यह आश्चर्यजनक है परन्तु स्मरण करने पर पाप-हरण है| एक समय पृथ्वी पर धर्मात्मा भुवनेश राज करते थे|

किए वह सहस्त्र अश्वमेध व् दस सहस्त्र वाजमेय हवन |
अतिरिक्त इनके किए अनगिनत धार्मिक कर्मवचन || (६-४८)

भावार्थ: उन्होंने सहस्त्र अश्वमेध, दस सहस्त्र वाजमेय यज्ञ किए| इनके अतिरिक्त अनगिनत धार्मिक अनुष्ठान किए|

दिए दान अनेक कोटि गौ द्वादशख मुद्रा स्वर्न |
संग अश्व रथ नागकन्या वस्त्र आदि वस्तु पावन || (६-४९)

भावार्थ: अनेक कोटि गौ, अरबों स्वर्ण मुद्राएं, साथ घोड़े, रथ, नागकन्या, वस्त्र आदि पवित्र वस्तुएं दान दीं|

किया उसने धर्म पूर्वक अपनी प्रजा का पालन |
पर अभाग्यवश लगाया प्रतिबन्ध हरि भजन गायन || (६-५०)

भावार्थ: उसने धर्म पूर्वक अपनी प्रजा का पालन किया| परन्तु दुर्भाग्यवश प्रभु के भजन गायन पर प्रतिबन्ध लगा दिया|

करूँ मैं वध स्वयं यदि करे कोई हरि भजन गायन |
समझो स्तुति नारायण संभव केवल ग्रन्थ वेद वचन || (६-५१)

भावार्थ: यदि कोई हरि भजन गायन करेगा तो मैं स्वयं उसका वध करूंगा| नारायण की स्तुति केवल ग्रन्थ वेद वचनों से संभव है, यह समझो|

है अशोभनीय गाएं वेदधारी ब्राह्मण लोक भजन |
गाएं यश मेरा नर नारि यदि हो उनकी इच्छा गायन || (६-५२)

भावार्थ: वेदधारी ब्राह्मणों को लोक (साधारण) भजन गाना अशोभनीय है| यदि नर-नारियों की इच्छा गायन की हो, तो वह मेरा यश गाएं|

गाएं मेरा यश गुण सूत मागध और नारिजन |
दे यह आज्ञा करने लगा राज वह भुवनेश राजन || (६-५३)

भावार्थ: सूत मागध और स्त्रीजन मेरा यश गुण गान करें| वह भुवनेश सम्राट ऐसी आज्ञा दे राज करने लगा|

रहता उसके राज्य एक हरिमित्र नाम ब्राह्मन |
था वह अति शान्ति प्रिय और घोर भक्त नारायन || (६-५४)

भावार्थ: उसके राज्य में एक हरिमित्र नाम का ब्राह्मण रहता था| वह अत्यंत शान्ति प्रिय और जनार्दन का घोर भक्त था|

तट नदी कुटि में कर स्थापित मूर्ति जनार्दन |
घृत दही आदि से करे वह उनका वैधिक पूजन || (६-५५)

भावार्थ: नदी के तट पर कुटि में नारायण की प्रतिमा स्थापित कर वह विधि विधान से घृत, दही आदि से उनका पूजन करता था|

धूप मिष्ठान और खीर आदि कर प्रभु को अर्पन |
कर प्रणाम भक्ति भाव से रहता तन्मय हरि चरन || (६-५६)

भावार्थ: धूप, मिष्ठान, खीर आदि प्रभु को अर्पण कर उन्हें प्रणाम कर वह भक्ति भाव से उनके चरणों में मग्न रहता था|

गाता गुण सदा हरि करते हुए संग लय ताल गायन |
वीणा वाद्य के साथ प्रेम से करता वह हरि भजन || (६-५७)

भावार्थ: वीणा वाद्य एवं लय ताल गीत के साथ वह प्रभु का प्रेम से गुणगान करते हुए उनका भजन करता था|

हो क्रुद्ध भेजे सैनिक उसकी कुटीर तब राजन |
की नष्ट उन्होंने सामग्री हेतु नारायण पूजन || (६-५८)

भावार्थ: सम्राट ने क्रोधित हो तब सैनिक उसकी कुटिया में भेजे| उन्होंने नारायण पूजन की सामग्री नष्ट कर दी|

बना बंदी किया उपस्थित ब्राह्मण सम्मुख राजन |
हो आकुल दुःखी दिए उपदेश नृप विरुद्ध गायन || (६-५९)

भावार्थ: ब्राह्मण को बंदी बना (सैनिकों ने) सम्राट के सम्मुख उपस्थित किया| आकुल और दुःखी हो सम्राट ने उसे गायन के विरुद्ध उपदेश दिया|

कर जब्ध वास धनादि दिया उसे देश निष्कासन |
नहीं किए नृप दर्शन कभी प्रतिमा नारायन || (६-६०)

भावार्थ: उसका निवास, धनादि ग्रहण कर उसे देश से निकाल दिया| सम्राट ने कभी नारायण की मूर्ति के दर्शन नहीं किए|

किया राज्य वह काल दीर्घ आया जब समय मरन |
लिया पुनर्जन्म योनि खग रूप उलूक वह राजन || (६-६१)

भावार्थ: दीर्घ कल तक उसने राज्य किया| मरणोपरांत उस राजा ने पक्षी योनि में उलूक रूप में दोबारा जन्म लिया|

एक बार त्रस्त क्षुधा घूमता रहा ढूंढता भोजन |
नहीं मिला कुछ आहार हुई अवस्था मरणासन्न ||
करबद्ध पुकार यमराज करने लगा तब वह निवेदन || (६-६२)

भावार्थ: एक बार भूख से त्रस्त होकर वह भोजन ढूंढता फिरा| कुछ आहार न मिलने से उसकी स्थिति मरणासन्न हो गई| तब वह करबद्ध यमराज को पुकार उनसे विनती करने लगा|

हे देव हूँ त्रस्त क्षुधा हो गई स्थित मरणासन्न |
किए क्या अघ मैंने और करूँ क्या अब हे भगवन || (६-६३)

भावार्थ: हे देव, मैं भूख से पीड़ित हो मरणासन्न अवस्था में हूँ| हे भगवन, मैंने क्या पाप किए हैं और अब मैं क्या करूँ?

बोले तब धर्म मार्ग दर्शक श्री यमराज भगवन |
अवश्य अज्ञानवश परन्तु किए तुम घोर पाप राजन || (६-६४)

भावार्थ: तब धर्म मार्ग दिखाने वाले भगवान् श्री यमराज बोले, 'हे राजन, अवश्य अज्ञानवश, परन्तु तुमने घोर पाप किए हैं|'

करो स्मरण तुम हरिमित्र ब्राह्मण भक्त नारायन |
हड़प कुटि धनादि उसका दिए उसे देश निष्कासन || (६-६५)

भावार्थ: नारायण भक्त हरिमित्र ब्राह्मण का स्मरण करो| जिसकी कुटिया, धनादि को हड़प कर तुमने देश से निकाल दिया था|

हेतु इस घोर अघ नहीं हो सकी शांत भूख राजन |
हो गए नष्ट किए जो तुमने सब यज्ञादि कर्म पावन || (६-६६)

भावार्थ: इस घोर पाप के कारण तुम्हारी भूख शांत नहीं हुई| तुम्हारे सब किए गए पवित्र यज्ञादि कर्म नष्ट हो गए|

करते थे वह भक्त गुणगान हरि युक्त लय ताल गायन |
क्या था अपराध उनका जो किए तुम उनका धन हरन || (६-६७)

भावार्थ: वह भक्त लय ताल से युक्त गीत गाकर हरि का गुणगान करते थे| उनका क्या अपराध था जो तुमने उनका धन हड़प लिया?

फेंक दिए सैनिक तुम्हारे सब सामग्री हरि पूजन |
था यह अकल्पनीय घोर अघ किया जो तुमने राजन || (६-६८)

भावार्थ: तुम्हारे सैनिकों ने हरि पूजन की सब सामग्री फेंक दी| यह एक अकल्पनीय भंयकर पाप था जो राजन तुमने किया|

हे सम्राट जानो भली भांति तुम धर्म ब्राह्मन |
नहीं करे गुणगान किसी जन अतिरिक्त नारायन ||
किए पाप तुम दे आज्ञा करे गुणगान तुम्हारा राजन || (६-६९)

भावार्थ: हे सम्राट, ब्राह्मण का धर्म तुम भली भांति समझो| नारायण के अतिरिक्त वह किसी का गुणगान न करे| तुमने अपना गुणगान करने की आज्ञा दे पाप किया|

हो गए नष्ट सब शुभ कर्म तुम्हारे हेतु इस अघ गहन |
कंदरा पर्वत पड़ा सड़ रहा शव तुम्हारा पूर्व जनन ||
खाओ वह शव प्रतिदिन करो शांत क्षुधा तुम राजन || (६-७०)

भावार्थ: इस घोर पाप के कारण तुम्हारे सभी शुभ कर्म नष्ट हो गए| पर्वत की कंदरा में तुम्हारे पूर्व जन्म का शव सड़ रहा है| इस शव को प्रतिदिन खा कर तुम राजन अपनी भूख शांत करो|

तड़प क्षुधा खाओ तुम यह शव ध्वस्र गलित अभक्ष्यन |
करो सहन काल एक मन्वन्तर यह घोर नर्कीय जीवन || (६-७१)

भावार्थ: भूख से तड़प तुम इस जूर्ण, सड़े हुए, न खाने योग्य शव को खाओ| एक मन्वन्तर (७१ युग चक्र) तक इस घोर नर्कीय जीवन को सहन करो|

पश्चात एक मन्वन्तर लो जन्म रूप शुनक इस भुवन |
रहो दीर्घ काल इस योनि लो तब रूप नर हे राजन || (६-७२)

भावार्थ: हे राजन, एक मन्वन्तर के पश्चात तुम पृथ्वी पर कुत्ते के रूप में जन्म लो| दीर्घ समय तक इस योनि में रहो, तब नर रूप में जन्म लो|

कह यह शब्द हो गए अंतर्ध्यान यमराज भगवन |
हे ऋषि नारद हेतु इस अघ पाया मैं उलूक वर्पन् || (६-७३)

भावार्थ: यह शब्द कह कर भगवान् यमराज अंतर्ध्यान हो गए| हे ऋषि नारद, इस पाप के कारण मैंने उल्लू का शरीर पाया है|

पाया मैंने दुःख हेतु अपराध प्रति हरिमित्र महन |
कर रहा अब निवास तट मानसरोवर मैं पापजन || (६-७४)

भावार्थ: महात्मा हरिमित्र के प्रति अपराध करने के कारण मैं दुःख पा रहा हूँ| अब मैं पापी मानसरोवर के तट पर निवास कर रहा हूँ|

पहुँच कंदरा पर्वत देखा मैंने सड़ा शव पूर्व जनन |
पीड़ित क्षुधा हुआ तत्पर मैं खाने अभक्ष्य भोजन || (६-७५)

भावार्थ: पर्वत की कंदरा पहुँच मैंने पूर्व जन्म के शव को देखा| भूख से पीड़ित मैं अभक्ष्य भोजन खाने को तत्पर हुआ|

सौभाग्य मेरे हुए प्रकट तब हरिमित्र प्रति गगन |
आसीन विमान चमक रहा मुख सम प्रतिदिवन् ||
चहुँ ओर अप्सराएं कर रहीं थीं उनका पूजन || (६-७६)

भावार्थ: मेरे सौभाग्य से तब गगन से हरिमित्र प्रकट हुए| वह विमान पर विराजमान थे| उनका मुख सूर्य की भांति चमक रहा था| चारों ओर अप्सराएं उनका पूजन कर रहीं थी|

कर रहे गुणगान दूत और सेवक श्री विष्णु भगवन |
देख मेरी दुर्दशा आए पास मेरे वह भक्त जनार्दन || (६-७७)

भावार्थ: श्री विष्णु के दूत और सेवक उनका गुणगान कर रहे थे| मेरी दुर्दशा देख वह नारायण के अनन्य भक्त मेरे समीप आए|

देखा मुझ रूप उलूक सामने शव भुवनेश राजन |
हो अचंभित पूछे हो रहा उलूक क्यों यह अधर्मिन् || (६-७८)

भावार्थ: मुझे उलूक रूप में सम्राट भुवनेश के शव के सामने देखा| अचंभित हो पूछने लगे कि हे उलूक, यह अधर्म क्यों हो रहा है?

हे खग होता प्रतीत है यह शव भुवनेश राजन |
क्यों करना चाहते उलूक तुम इस अभक्ष्य का भक्षन || (६-७९)

भावार्थ: हे खग, यह तो नृप भुवनेश का शव प्रतीत होता है| इस अभक्ष्य का हे उलूक, तुम भक्षण क्यों करना चाहते हो?

कर प्रणाम सादर बोला उलूक यह मधुर वचन |
हे हरिमित्र था मैं स्वयं पूर्व जन्म भुवनेश राजन || (६-८०)

भावार्थ: प्रणाम कर उलूक तब यह मधुर वचन बोला, 'हे हरिमित्र, पूर्व जन्म में मैं स्वयं ही नृप भुवनेश था|'

किया तब उलूक ने सब वृतांत विस्तार से वर्णन |
भोग रहा फल हेतु किया अपराध प्रति आप गहन || (६-८१)

भावार्थ: तब उलूक ने सब वृतांत विस्तार पूर्वक वर्णित किया| 'आपके प्रति घोर अपराध के कारण मैं यह फल भोग रहा हूँ|'

करना पड़ेगा भक्षण यह शव एक मन्वन्तर ब्राह्मन |
ले जन्म तब पशु योनि कुक्कुर मिलेगा फिर मनुष्य तन || (६-८२)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, इस शव का भक्षण मुझे एक मन्वन्तर तक करना पड़ेगा| उसके पश्चात कुत्ते की पशु योनि में जन्म लूंगा| फिर मनुष्य का शरीर मिलेगा|

सुने महायशस्वी दयालु संत हरिमित्र यह वचन |
बोले तब प्रमत उलूक सुनो तुम अब मेरा कथन || (६-८३)

भावार्थ: महायशस्वी दयालु संत हरिमित्र ने यह वचन सुने| तब वह बोले, 'हे बुद्धिमान उलूक, अब मेरा कथन सुनो|'

किया जो तुमने अपराध मेरा करूँ मैं अब क्षमन |
हो जाए अंतर्ध्यान शव न लो तुम जन्म योनि मशुन || (६-८४)

भावार्थ: 'जो तुमने मेरा अपराध किया, उसे मैं अब क्षमा करता हूँ| यह शव अंतर्ध्यान हो और तुम कुत्ते की योनि में जन्म न लो|'

हो सिद्धि तुम्हें ज्ञान गान है मेरा आशीर्वचन |
स्पष्ट जिह्वा से गा कर करोगे तुम नारायण प्रसन्न || (६-८५)

भावार्थ: मेरा आशीर्वाद है कि तुम्हें गान विद्या में निपुणता प्राप्त होगी| स्पष्ट जिह्वा से गा कर तुम नारायण को प्रसन्न करोगे|

होगे तुम गुरु गन्धर्व विद्याधर अप्सरा देवगन |
मिलेगा तुम्हें अब भक्ष्य स्वस्थ्य स्वादिष्ट भोजन || (६-८६)

भावार्थ: तुम गन्धर्व, विद्याधर,अप्सराएँ, देवताओं के गुरु होगे| अब तुम्हें स्वस्थ्य भक्ष्य स्वादिष्ट भोजन मिलेगा|

होगा सम्पूर्ण मंगल करो प्रतीक्षा समय केचन |
उपस्थिति प्रभु दूत में बोले वह यह मधुर वचन || (६-८७)

भावार्थ: कुछ समय प्रतीक्षा करो, सम्पूर्ण मंगल होगा| विष्णु दूतों को उपस्थिति में उन्होंने यह मधुर वचन बोले|

हुई अंतर्ध्यान नर्क समान सामग्री उसी क्षन |
है ऋषि नारद यह स्वाभाविक दयालुता हरिजन || (६-८८)

भावार्थ: उसी क्षण नर्क सामान सामग्री अन्तर्ध्यान हो गई| हे ऋषि नारद, यह प्रभु भक्तों की स्वाभाविक दयालुता है|

करते दूर दुःख भक्त नारायण अपि अपराधी जन |
चले गए वह साकेत धाम कह यह सोम समान वचन || (६-८९)

भावार्थ: नारायण के भक्त अपराधियों के दुःख भी दूर कर देते हैं| इस प्रकार अमृत समान वचन बोल कर वह साकेत धाम चले गए|

कहा मैंने सब पाया कैसे पद गुरु गायन पावन |
पाऊँगा मैं हरि अवश्य हेतु हरिमित्र आशीर्वचन || (६-९०)

भावार्थ: मैंने सब बताया मैंने कैसे गान गुरु के पवित्र पद को प्राप्त किया| हरिमित्र के आशीर्वाद से मैं नारायण की प्राप्ति करूंगा|

हे मुनि किया मैंने पूर्व स्व-जन्म का अद्भुत वर्णन |
सुने जो चित्त लगा पाएगा वह निःसंशय लोक भगवन || (६-९१)

भावार्थ: हे मुनि (नारद), मैंने अपने पूर्व जन्म का अद्भुत वर्णन किया| जो भी इसे चित्त लगाकर सुनेगा, उसे निःसंदेह नारायण लोक की प्राप्ति होगी|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'हरिमित्रोपाख्यान' नाम षष्ठ सर्ग समाप्त|

सप्तम सर्ग
ब्रह्मऋषि नारद को गान विद्या प्राप्ति

कहने लगे गानबन्धु उलूक मुनि नारद से यह वचन |
यह किन्नर विद्याधर अप्सराएं आदि सभी शिष्यगन || (७-१)
आते पास मेरे करने ग्रहण हरि प्रिय शिक्षा गायन |
नहीं होता प्राप्त यह ज्ञान माध्यम तप आदि हे महन || (७-२)

भावार्थ: गानबन्धु उलूक तब मुनि नारद से यह वचन कहने लगे| 'यह सभी किन्नर, विद्याधर, अप्सराएं आदि मेरे शिष्यगण मेरे पास प्रभु की प्रिय गायन शिक्षा ग्रहण करने आते हैं| हे महात्मा, यह तप आदि (साधनों) से प्राप्त नहीं होती|'

एकाग्रचित एकभाव से तत्पर सीखो विद्या गायन |
किए प्रणाम मुनि गुरु उलूक सुन उनके मृदु वचन || (७-३)

भावार्थ: एकाग्रचित और निष्कपटता से तुरंत गायन विद्या सीखो| गुरु उलूक के मधुर वचन सुन मुनि ने इन्हें प्रणाम किया|

कहें वाल्मीकि सुनो भारद्वाज कर नमन नारायन |
आचार्य गानबन्धु के करें आदेश मुनिवर पालन || (७-४)

भावार्थ: (महर्षि) वाल्मीकि जी कहने लगे, 'हे भारद्वाज,नारायण को नमन कर तब मुनिवर (नारद) आचार्य गानबन्धु के आदेशों का पालन करने लगे|'

की प्रारम्भ शिक्षा विधिवत पर थे नारद संविग्न |
बोले गुरु छोड़ो लज्जा हे मुनि करो एकाग्र मन || (७-५)

भावार्थ: विधिवत शिक्षा प्रारम्भ की परन्तु (ब्रह्मऋषि) नारद संकोचित थे| तब गुरु ने कहा, 'हे मुनि, लज्जा छोड़ो और चित्त को एकाग्र करो|'

है वृथा संकोच संगम-पत्नी छींक पूर्व कथन |
व्यापार व्यवहार और विषय सम्बंधित संपत्ति धन || (७-६)

भावार्थ: पत्नी-संगम, छींक, पूर्व कथन (को कहने में), व्यापार, व्यवहार और संपत्ति, धन से सम्बंधित विषय में संकोच ठीक नहीं है|

सादृश्य न हो लज्जा विषय व्यय आय और वेतन |
युक्त रूक्ष कुण्ठ कंठ है नहीं संभव लयमय गायन || (७-७)

भावार्थ: उसी प्रकार आय, वेतन या व्यय विषयों में लज्जा न हो| धाराहीन कटु कंठ से लयमय गायन संभव नहीं है|

फैले हस्त अधिक खुला मुख बाहर निकली जिह्वन |
नहीं करें गायन कभी चूँकि करें यह बाधा उत्पन्न || (७-८)

भावार्थ: फैले हुए हाथ, अधिक खुला मुख, बाहर निकली हुई जीभ से कभी गायन नहीं करें क्योंकि यह बाधा उत्पन्न करती हैं|

देखते हुए स्व-अंग और अंग अन्य जो अति निकट जन |
न करे कभी गायन उठा भुजा या देखते ओर गगन || (७-९)

भावार्थ: अपने स्वयं के अंग, अति निकट दूसरे प्राणी के अंग देखते हुए, भुजा उठाकर और आकाश की ओर देखते हुए गायन न करे|

हँसते हुए या भयभीत या निष्पन्न मानसिक पीडन |
दुःखी क्षुधित चिंतन मन समझो नहीं अनुरूप गायन || (७-१०)

भावार्थ: हँसते हुए या भयभीत या मानसिक पीड़ा से युक्त, दुःखी, भूख से पीड़ित चिंतित मन, यह गायन के अनुरूप नहीं हैं (अर्थात इन अवस्थाओं में गायन संभव नहीं है)|

नहीं उचित दें ताल वाद्य हस्त केवल एक श्रीमन |
हों क्षुधित पिपासु भयभीत करें न कभी गायन || (७-११)

भावार्थ: हे श्रीमान, वाद्य में केवल एक हाथ से ताल देना उचित नहीं है| यदि भूखे हों, प्यासे हों, भयभीत हों, तो कभी गायन न करें|

है निषेध करें गान परिसर अन्धकार नारद महन |
करें विचार कर्म योग्य अयोग्य हेतु प्रदर्शन गायन || (७-१२)

भावार्थ: हे महात्मा नारद, परिसर में अंधकार हो, तो गायन निषेध है| (इस प्रकार) गायन के प्रदर्शन के लिए योग्य और अयोग्य कर्मों का विचार करें|

करते हुए इस प्रकार गुरु गानबन्धु निर्देश अनुसरन |
सीखते रहे मुनि नारद सहस्त्र एक वर्ष तक गायन || (७-१३)

भावार्थ: इस प्रकार बुद्धिमान गुरु गानबन्धु के निर्देशों का पालन करते हुए मुनि नारद एक सहस्त्र वर्ष तक गायन सीखते रहे|

कर कठिन अभ्यास सभी सुर लय ताल विद्या गायन |
हुए मुनि नारद दक्ष वीणा आदि समस्त वाद्य साधन || (७-१४)

भावार्थ: गायन के सभी सुर, ताल, लय एवं समस्त वाद्य यंत्र वीणा आदि का कठिन अभ्यास कर मुनि नारद गान विद्या में दक्ष हो गए|

किए प्राप्त ज्ञान सब छियालीस सहस्त्र भेद गायन |
सहित शास्त्रीय संगीत सरगम धुन आदि वयुन || (७-१५)

भावार्थ: शास्त्रीय संगीत के सरगम, धुन आदि के सिद्धांतों के साथ ४६,००० गान विद्या के भेदों का ज्ञान प्राप्त किया|

हुए आनंदित गंधर्व किन्नर आदि संगीत निपुन |
पा संग प्रमत मुनि नारद सम ज्ञाता तत्व भगवन || (७-१६)

भावार्थ: सभी संगीत में निपुण गन्धर्व, किन्नर आदि परमात्म-तत्व के मुनि नारद समान बुद्धिमान ज्ञाता के साथ से आनंदित हुए|

कहे मुनि नारद तब विनम्र वचन हे गानबन्धु चेतन |
पा तुम सम आचार्य हुआ मैं संगीत ज्ञान निपुन ||
हूँ अति प्रसन्न दूँ तुम्हें यह सुखद आशीर्वचन |
हो विश्व विख्यात संगीत विशारद सब गुण संपन्न || (७-१७)

भावार्थ: तब मुनि नारद ने श्रेष्ठ गानबन्धु से विनम्र वचन बोले, 'आप जैसा आचार्य पा में संगीत विद्या में दक्ष हो गया| मैं अति प्रसन्न हूँ| आपको यह सुखद आशीर्वाद देता हूँ कि आप सर्व गुण संपन्न विश्व विख्यात संगीत विशारद (संगीत के आचार्य) हों|'

श्रेष्ठ उलूकराज किया आपने मुझ पर अनुग्रहन |
बताओ मुझे यदि हो हृदय कोई और मन्मन् ||
बोले तब प्रमत गानबन्धु सुनो मुनि नारद महन || (७-१८)

भावार्थ: 'श्रेष्ठ उलूकराज आपने मुझ पर उपकार किया है| यदि हृदय में कोई और इच्छा हो तो मुझे बतलाओ|' तब ज्ञानी गानबन्धु बोले, ' हे महान ऋषि नारद सुनो|'

हो प्रलय पश्चात चौदह मनु जो एक दिन चतुरानन |
छा जाए अन्धकार इस काल हों त्रिलोक जल मग्न || (७-१९)

भावार्थ: ब्रह्मा के एक दिन में १४ मनु के पश्चात प्रलय हो जाती है| इस समय सभी त्रिलोक में अंधकार छा जाता है| जल मग्न हो जाते हैं|

बना रहे यश मेरा उत्तम तब तक हे महामुनि चेतन |
पाऊँ सिद्धि सब ज्ञान अविघ्न दो यह आशीर्वचन || (७-२०)

भावार्थ: 'हे श्रेष्ठ महामुनि, तब तक मेरा उत्तम यश बना रहे| मुझे बिना किसी बाधा के सब ज्ञान प्राप्ति में सफलता मिले, ऐसा आशीर्वाद दीजिए|'

बोले देवऋषि नारद हों उलूक पूर्ण सब मन्मन् |
लोगे जन्म रूप गरुड़ पश्चात एक कल्प हे महन || (७-२१)

भावार्थ: देवऋषि नारद बोले,'हे उलूक तुम्हारी सभी इच्छाएं पूर्ण हों| हे महात्मा, एक कल्प पश्चात तुम गरुड़ रूप में जन्म लोगे|'

पाओगे सायुज्य पद तुम करते गुणगान नारायन |
हो मंगल आपका प्रमत जाऊं मैं अब हूँ प्रसन्न || (७-२२)

भावार्थ: 'नारायण के गुणगान करते हुए तुम्हें सायुज्य पद की प्राप्ति होगी (सायुज्य पद एक ऐसा सम्मान है जिसमें भक्त सदैव नारायण के समीप रहता है)| हे बुद्धिमान, आपका मंगल हो| मैं प्रसन्न हूँ, अब जाता हूँ|'

गए नारद देवऋषि तब वास तुम्बुरु कह यह वचन |
थी इच्छा जीतें स्पर्धा कर कला संगीत प्रदर्शन ||
पर हुए अति विस्मित वह देख वहां विकृत रूप जन || (७-२३)

भावार्थ: यह वचन कह देवऋषि नारद (गन्धर्व) तुम्बुरु के निवास गए| उनकी इच्छा थी कि संगीत कला प्रदर्शन से प्रतियोगिता जीतें| पर वहां विकृत रूप प्राणियों को देख वह अत्यंत विस्मित हुए|

कुछ हीन हस्त कुछ हीन पग विरूप नासिका स्तन |
कटे उरु सर अंगुलि विघटित विविध अन्य भाग तन || (७-२४)

भावार्थ: किन्हीं के हाथ नहीं थे, किन्हीं के पैर| किन्हीं की नाक, स्तन विकृत थे| किन्हीं के जंघा, सर, उंगलियां कटीं थीं अथवा शरीर का कोई अन्य भाग विघटित था|

देख ऐसी सहस्त्रों नारि हो विस्मित पूछे महन |
की किसने यह दशा और कैसे हुए नष्ट अंग तन || (७-२५)

भावार्थ: ऐसी सहस्त्रों नारियों को देख आश्चर्य से महात्मा (नारद) ने पूछा, 'आपकी ऐसी दशा किसने की? आपके शरीर के अंग नष्ट कैसे हुए?'

बोलीं सब नारि एक संग सुनो देवर्षि नारद वचन |
हैं आप उत्तरदायक हेतु दशा हमारी हे मुनि महन ||
हैं हम राग रागिनी करते संधान जो वाद्य वादन || (७-२६)

भावार्थ: देवर्षि नारद के यह वचन सुन सब नारियां एक साथ बोलीं, 'हे श्रेष्ठ मुनि, इस हमारी दशा के आप उत्तरदायी हैं| जिन्हें वाद्य वादन में संधान किया जाता है, हम वह राग, रागिनी हैं|'

है अपरिपक्व और बेसुरा हे मुनि आपका गायन |
हो जाती यह दशा हमारी जब करते आप वादन || (७-२७)

भावार्थ: हे मुनि, आपका गायन अपरिपक्व और बेसुरा है| आपके संगीत वादन से हमारी यह दशा हो जाती है|

पर हो जाते सुकृत सुन तुम्बुरु गंधर्व ध्वन |
हुए विस्मित सुन देवर्षि कि हैं वह कारी विघटन || (७-२८)

भावार्थ: लेकिन तुम्बुरु की धुन सुन हम ठीक हो जाते हैं| यह सुनकर कि वह घातक हैं, देवर्षि नारद को आश्चर्य हुआ|

है धिक्कार मुझे करते देवर्षि नारद यह चिंतन |
पहुंचे श्वेतद्वीप धाम भगवन तब नारद महन ||
देख विस्मित दशा देवर्षि बोले श्री नारायन || (७-२९)

भावार्थ: 'मुझे धिक्कार है', ऐसा विचार करते हुए श्रेष्ठ नारद प्रभु के धाम श्वेतद्वीप पहुंचे| देवर्षि की विस्मित दशा देख श्री नारायण बोले|

यद्यपि ली शिक्षा तुमने पर नहीं हुए अभी निपुन |
नहीं दे सके गानबन्धु तुम्हें दक्षता विद्या गायन ||
नहीं हो सम गंधर्व तुम्बुरु देवर्षि इस विद्यन् || (७-३०)

भावार्थ: यद्यपि तुमने शिक्षा ली है, पर अभी निपुण नहीं हुए हो| गानबन्धु तुम्हें गायन विद्या में दक्ष नहीं बना सके| इस विद्या में देवर्षि तुम गंधर्व तुम्बुरु के समान नहीं हो|

अट्ठाईसवां युग वैवस्वत मनु काल द्वापर शमन |
लूंगा मैं अवतार वंश यदुकुल हेतु धर्म स्थापन || (७-३१)

भावार्थ: वैवस्वत मनु के अट्ठाईसवें युग में जब द्वापर काल का अंत होगा तब मैं धर्म की स्थापना के लिए यदुकुल वंश में अवतार लूंगा|

होंगे जनयित्र देवकी वासुदेव नाम मेरा कृश्न |
आना निकट मेरे तब और कराना इसका स्मरन || (७-३२)

भावार्थ: मेरे माता पिता देवकी और वासुदेव होंगे| मेरा नाम कृष्ण होगा| तब मेरे समीप आना और इसका स्मरण कराना|

हे सुव्रत करूंगा मैं तब तुम्हें गान विद्या संपन्न |
होगे तुम गायक सम गन्धर्व दूँ मैं तुम्हें यह वचन || (७-३३)

भावार्थ: हे सुव्रत, मैं तब तुम्हें गान विद्या में निपुण करूंगा| तुम गन्धर्व से श्रेष्ठतर गायक होगे, यह मेरा वचन है|

तब तक कर धारण रुप योनि देव गन्धर्व उपपन्न |
दो शिक्षा अन्य जन कह यह हुए निर्गत नारायन || (७-३४)

भावार्थ: तब तक उपयुक्त देव गंधर्व योनि में रूप धारण कर तुम अन्य प्राणियों को शिक्षा दो| यह कह कर भगवान् अंतर्ध्यान हो गए|

किए तब देवर्षि नारद प्रणाम श्री नारायन |
वीणा प्रवीण मुनि श्रेष्ठ बजाते हुए यह साधन ||
सुशोभित सुर समान तन पर सम्पूर्ण आभरन || (७-३५)
करते हरि गुणगान घूमने लगे स्थान भिन्न भिन्न |
कर समर्पण स्वयं श्री प्रभु किए तब वह तप गहन || (७-३६)

भावार्थ: तब देवऋषि नारद ने श्री प्रभु को प्रणाम किया| वीणा बजाने में निपुण श्रेष्ठ मुनि इस वाद्य को बजाते हुए तथा देवताओं के समान शरीर पर सम्पूर्ण आभूषणों को धारण कर नारायण का गुणगान करते हुए भिन्न भिन्न स्थानों पर भ्रमण करने लगे| स्वयं को श्री नारायण को समर्पित कर उन्होंने गहन तप किया|

हरि प्रीति में हो व्याकुल करते रहे निरंतर भ्रमन |
लोक यम अग्नि कुबेर इंद्र वरुण और पवन ||
हैं जो स्थित भिन्न दिशा पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिन || (७-३७)

भावार्थ: प्रभु की प्रीति में व्याकुल हो वह यम, अग्नि, कुबेर, इंद्र, वरुण और पवन के लोकों में जो भिन्न दिशाएं, पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण में स्थित हैं, निरंतर भ्रमण करते रहे|

बजा वाद्य वीणा करते हुए गुणगान श्री नारायन |
हुए पूजित वह सभी यक्ष गंधर्व अप्सरा भूजन || (७-३८)

भावार्थ: वीणा बजा कर प्रभु का गुणगान करते हुए वह सभी यक्ष, गंधर्व, अप्सरा एवं प्राणियों से पूजित हुए|

आए एक बार मुनि नारद ब्रह्मलोक करते भ्रमन |
मिले वहां मुनि हा हा हू हू गंधर्व निपुण गायन ||
थे विशारद गीत वाद्य अति प्रिय श्री नारायन || (७-३९)

भावार्थ: भ्रमण करते हुए एक बार मुनि नारद ब्रह्मलोक आए| वहां वह गायन में निपुण हा हा हू हू (नामक) गन्धर्व से मिले| वह गीत वाद्य में विशारद प्रभु के अत्यंत प्रिय थे|

करते यह गन्धर्व सदैव श्री हरि के गुण गायन |
विभु नाम से करते वह नारायण का महिमा मंडन || (७-४०)

भावार्थ: यह गन्धर्व सदैव हरि के गुण गाते रहते| वह नारायण का वैभव विभु नाम से गुणगान करते| (विभु प्रभु का ही नाम है जिसका अर्थ है परम, अविनाशी, सर्व शक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्व व्यापक, शाश्वत)|

देवर्षि का किए स्वागत और सम्मान चतुरानन |
पा सम्मान पिता चले तब नारद करने लोक भ्रमन || (७-४१)

भावार्थ: ब्रह्मदेव ने देवर्षि का स्वागत किया और सम्मान किया| पिता (ब्रह्मदेव) से आदर पा नारद लोक भ्रमण को चल दिए|

वीणा बजाते और करते गुणगान श्री नारायन |
पहुंचे एक दिन वह गान विशारद तुम्बुरू के भवन || (७-४२)

भावार्थ: वीणा बजाते और श्री हरि का गुणगान करते एक दिन वह गायन निपुण तुम्बुरू के भवन पहुंचे|

गए वहां वह गुप्त रूप से नहीं देख सका कोई जन |
देखीं वहां बहु दिव्य कन्याएं जो कर रहीं गायन ||
धैवत षडज और अन्य दिव्या थीं वहां तुम्बुरू भवन || (७-४३)

भावार्थ: वह वहां गुप्त रूप से गए जिससे कोई देख नहीं पाया| वहां बहुत दिव्य कन्याएं, धैवत, षडज और अन्य तुम्बुरू के निवास पर उपस्थित थीं जो गायन कर रहीं थीं|

हुए लज्जित देख उन्हें और छोड़ा तत्काल भवन |
देते हुए प्रवचन घूमते रहे वह भिन्न भिन्न भुवन || (७-४४)

भावार्थ: उन्हें देख वह लज्जित हुए और तुरंत गृह छोड़ दिया| प्रवचन देते हुए तब वह भिन्न भिन्न लोकों में भ्रमण करते रहे|

बीता कुछ काल हुआ तब अवतार धरा नारायन |
गृह पिता वासुदेव माँ देवकी नाम श्री कृश्न || (७-४५)

भावार्थ: कुछ समय बीता तब प्रभु ने पृथ्वी पर पिता वासुदेव एवं माँ देवकी के गृह श्री कृष्ण नाम से अवतार लिया|

सुना नारद हैं दक्ष श्री कृष्ण सप्त स्वर गायन |
हैं गान विद्या विशारद और सदृश श्री नारायन ||
आए मुनि रैवतक पर्वत मिलने अवतार भगवन || (७-४६)

भावार्थ: नारद ने सुना कि श्री कृष्ण (संगीत के) सात स्वरों में दक्ष हैं| वह गान विद्या में विशारद हैं और श्री विष्णु की भांति दिखते हैं| भगवान् के अवतार से मिलने मुनि (नारद) रैवतक पर्वत आए|

हुई थी जो चर्चा श्वेतद्वीप कराई उन्होंने स्मरन |
दिया जो वचन करो अब दक्ष मुझे विद्या गायन || (७-४७)

भावार्थ: श्वेतद्वीप की चर्चा का उन्होंने स्मरण कराया| जो आपने वचन दिया था, मुझे गायन विद्या में दक्ष कीजिए|

सुन विनती देवर्षि नारद हंसकर बोले तब भगवन |
हे भद्रे जामवंती दो तुम ज्ञान यथोचित मुनि महन || (७-४८)

भावार्थ: देवऋषि नारद की विनती सुन हंसकर प्रभु बोले, ' हे भद्रे जामवंती, श्रेष्ठ मुनि को यथायोग्य ज्ञान दो|'

कर स्वीकार्य आदेश हंस बोलीं जामवंती वचन |
करो मुनि ग्रहण विद्या गायन और वीणा वादन || (७-४९)

भावार्थ: (प्रभु) आज्ञा स्वीकार कर हंसकर जामवंती बोलीं, 'मुनि, गायन और वीणा वादन की विद्या ग्रहण कीजिए|'

दी शिक्षा जामवंती वर्ष एक मुनि नारद गायन |
भेजे भगवन तत्पश्चात देवर्षि सत्यभामा भवन || (७-५०)

भावार्थ: एक वर्ष तक जामवंती ने मुनि नारद को गायन की शिक्षा दी| तत्पश्चात भगवान् ने देवर्षि को सत्यभामा के पास भेजा|

कर प्रणाम सत्यभामा नारद लेने लगे उनसे वेदन |
ली शिक्षा देवर्षि नारद उनसे वर्ष एक एकाग्र मन || (७-५१)

भावार्थ: सत्यभामा को प्रणाम कर नारद उनसे शिक्षा लेने लगे| एकाग्र चित्त हो एक वर्ष तक देवर्षि नारद ने उनसे शिक्षा ली|

नहीं हुए संतुष्ट मुनि तब भेजे पास रुक्मिणी कृष्न |
थीं विद्यमान बहु सेविकाएं माँ रुक्मिणी भवन || (७-५२)

भावार्थ: जब मुनि (नारद गान विद्या से) संतुष्ट नहीं हुए, तब भगवान् ने उन्हें रुक्मिणी के पास भेजा| माँ रुक्मिणी के भवन में अनेक सेविकाएं उपस्थित थीं|

सिखाने लगीं तब यथा माँ रुक्मिणी ज्ञान गायन |
लग रहा था कठिन सुर ज्ञान यद्यपि किए बहु प्रयत्न ||
किए प्रयास पा सकें विद्या सम गन्धर्व वर्ष द्विन || (७-५३)

भावार्थ: तब माँ रुक्मिणी उन्हें यथायोग्य गायन विद्या सिखाने लगीं| अधिक प्रयत्न करने पर भी सुर का ज्ञान कठिन लग रहा था| गंधर्व समान विद्या पा सकने के लिए दो वर्ष तक प्रयास किया|

हेतु पाएं श्रेष्ठ शिक्षा करते रुक्मिणी आज्ञा पालन |
यद्यपि बढ़ा स्तर और गा सकें मुनि अब उत्कर्षिन् ||
पर नहीं पहुँच सके वह स्तर कह सकें पूर्ण संपन्न || (७-५४)

भावार्थ: श्रेष्ठ शिक्षा पा सकें इस हेतु (मुनि नारद) रुक्मिणी की आज्ञा का पालन करते थे| यद्यपि उनका (गायन) स्तर बढ़ा और अब वह उत्तमतर गा सकते थे, परन्तु उस स्तर पर नहीं पहुंचे जिसे पूर्ण सिद्ध कहा जा सके|

आओ मेरे समीप देवर्षि तब दी आज्ञा भगवन |
सिखाने लगे तब स्वयं हरि उन्हें उच्च कला गायन || (७-५५)

भावार्थ: तब प्रभु ने आज्ञा दी, 'देवर्षि मेरे समीप आओ|' प्रभु तब स्वयं उन्हें श्रेष्ठ गायन कला सिखाने लगे|

समाई तब श्रेष्ठ विद्या गायन देवर्षि नारद मन |
पा प्राप्त ब्रह्मानंद हुआ हृदय उनका मोहन || (७-५६)

भावार्थ: तब देवर्षि नारद के चित्त में श्रेष्ठ गायन विद्या समा गई| उनका हृदय ब्रह्मानंद प्राप्त कर उन्मादित हो गया|

हुए देवर्षि सब दोष नष्ट सम द्वेष वैर दुर्भावन |
हुआ भाव मत्सर प्रति तुम्बुरू पूर्ण उन्मूलन || (७-५७)

भावार्थ: देवर्षि के घृणा, वैर, दुर्भाव समान सब दोष नष्ट हो गए| तुम्बुरू के प्रति उनकी ईर्ष्या भावना पूर्णतः समाप्त हो गई|

करने लगे नृत्य तब सुभग देवर्षि कर हरि नमन |
हे मुनि हो गए सर्वज्ञ अब बोले तब श्री भगवन || (७-५८)

भावार्थ: प्रसन्नता से तब प्रभु को प्रणाम कर देवर्षि (नारद) नृत्य करने लगे| तब श्री भगवान् बोले,'हे महामुनि नारद, अब (आप) सर्वज्ञ हो गए|'

गाओ गान योग से सदैव रख हृदय मेरा चिंतन |
इस पथ से पा सको धाम मेरा हे मुनि नारद महन || (७-५९)

भावार्थ: 'मेरा हृदय में ध्यान रखते हुए सदैव गान योग से गायन करो| हे श्रेष्ठ नारद मुनि, इस मार्ग से तुम मेरे धाम की प्राप्ति करोगे|'

कर सहगमन गंधर्व तुम्बुरू करो तुम निरंतर गायन |
करने लगे भ्रमण जग मुनि पा हरि आशीर्वचन ||
बिताए कुछ समय संग तुम्बुरू रहकर उनके भवन || (७-६०)

भावार्थ: 'गन्धर्व तुंबरू के साहचर्य से तुम निरंतर गायन करो|' प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त कर मुनि विश्व भ्रमण करने लगे| उन्होंने कुछ समय तुम्बुरू के साथ उनके गृह में रहकर बिताए|

कर विधिवत पूजन कृष्ण तब गए मुनि धाम जतिन |
हो नतमस्तक गाने लगे वह यश हरि और नागभूषन || (७-६१)

भावार्थ: कृष्ण (भगवान्) का विधिवत पूजन कर तब मुनि शंकर जी के धाम (कैलाश) गए| वहां नतमस्तक हो वह नारायण और शिव के यश गान करने लगे|

बोले महर्षि वाल्मीकि सुनो भारद्वाज ब्राह्मन |
हुए इस प्रकार देवर्षि नारद विद्या गान निपुन ||
था साथ उन सभी संगीत निपुण का आशीर्वचन ||
जामवंती सत्यभामा रुक्मिणी और स्वयं कृष्न || (७-६२)

भावार्थ: महर्षि वाल्मीकि बोले, 'हे ब्राह्मण भारद्वाज, इस प्रकार देवर्षि नारद को गायन विद्या में दक्षता प्राप्त हुई| सभी संगीत विशेषज्ञ जामवंती, सत्यभामा, रुक्मिणी और स्वयं कृष्ण (भगवान्) का उन्हें आशीर्वाद प्राप्त था|'

हे मुनि भारद्वाज किया मैंने महत्व गान वर्णन |
गाए जो यश प्रभु दिन रात इस पथ हे ब्राह्मन || (७-६३)

पाए वह फल यज्ञ तप पद धाम हरि और निर्मोचन |
पाए नर्क निःसंदेह करे जो गुणगान किसी भूजन || (७-६४)

भावार्थ: 'हे मुनि भारद्वाज, मैंने गायन के महत्व का वर्णन किया है| हे ब्राह्मण, जो दिन रात इस मार्ग से (गायन करते हुए) प्रभु का यश गाता है, उसे यज्ञ (तप) का फल प्राप्त होता है, सायुज्य पद (प्रभु धाम निवास) मिलता है और मोक्ष की प्राप्ति होती है| जो किसी प्राणी का गुणगान करता है, उसे निःसंदेह नर्क की प्राप्ति होती है|'

हो पारायण श्री वासुदेव कर्म मन और वचन |
करे जो गायन श्रवण यश हरि हो उनका प्रिय जन ||
हो श्रेष्ठ पा सके वह जन मोक्ष और धाम नारायन || (७-६५)

भावार्थ: श्री वासुदेव का भक्त हो जो कर्म, मन और वचन से हरि के यश का गायन और श्रवण करता है वह उनका प्रिय हो जाता है| श्रेष्ठ प्राणी होकर वह मोक्ष एवं साकेत धाम को प्राप्त होता है|

किया मैंने वर्णन हेतु जन्म माँ सीता इस भुवन |
हों सुखी देव आदि गाएं जब यह चरित्र पावन ||
करे नाश अघ दे आनंद हों सुखी अभयी भूजन || (७-६६)

भावार्थ: मैंने इस लोक (पृथ्वी) में माँ सीता के जन्म का कारण बताया| जो इस चरित्र का गायन करते हैं वह प्राणी सुख और आनंद की प्राप्ति कर अपने पापों का नाश करते हैं| देवता भी सुखी होते हैं|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'ब्रह्मऋषि नारद को गान विद्या प्राप्ति' नाम सप्तम सर्ग समाप्त|

अष्टम सर्ग
माँ सीता जन्म वर्णन

लीं अवतार लक्ष्मी गर्भ आसुरी पत्नी दशानन |
हुआ कैसे जन्म हेतु बीज रक्त अनेक मुनि महन ||
हुईं प्राप्त भूमितल कैसे सुनो अब सब कथन || (८-१)

भावार्थ: रावण की पत्नी राक्षसी के गर्भ से माँ लक्ष्मी अवतरित हुईं| अनेक महात्मा ऋषियों के बीज रक्त से उनका जन्म कैसे हुआ और वह भूमि तल से कैसे प्राप्त हुईं, अब सब वृतांत सुनो|

हे विप्रेन्द्र भारद्वाज करूँ मैं यह कथा वर्णन |
की इच्छा करूँ गहन तप एक बार दशमुख रावन || (८-२)

भावार्थ: हे श्रेष्ठ ब्राह्मण भारद्वाज, अब मैं यह कथा सुनाता हूँ| एक बार दशमुख रावण ने गहन तप करने की इच्छा की|

थी चाह बनूँ मैं अजर अमर अधिपति त्रिभुवन |
कर तप कई वर्ष पाई उसने प्रभा सम परिज्वन् || (८-३)

भावार्थ: उसकी इच्छा थी कि वह अमर अजर हो तीनों लोकों का स्वामी बने| कई वर्ष के तप से उसने अग्नि के समान प्रभा पाई|

हुए तेज से उसके दग्ध भू पाताल स्वर्ग त्रिभुवन |
आए समीप उसके तब संग सभी देव चतुरानन || (८-४)

भावार्थ: उसके तेज से भूमि,पाताल एवं स्वर्ग, तीनों लोक तपने लगे| तब सभी देवों के साथ ब्रह्मदेव उसके पास आए|

हो रहे भस्म सब लोक हेतु तप तुम्हारे कहे चतुरानन |
दो विराम तप अब करें याचना सुर असुर भूजन || (८-५)

भावार्थः ब्रह्मा बोले, 'तुम्हारे तप से सभी लोक भस्म हो रहें हैं| सभी सुर, असुर एवं प्राणियों का निवेदन है कि तुम अब तप को विराम दो|'

कहो वत्स निःसंकोच हो जो इच्छा तुम्हारे मन |
दूँ इच्छित वर करूँ पूर्ण तुम्हारे सब मन्मन् || (८-६)

भावार्थः हे वत्स, निःसंकोच कहो तुम्हारे मन में क्या इच्छा है? तुम्हें इच्छित वरदान दे तुम्हारी सभी इच्छाओं को पूर्ण करूंगा|

करो बंद नेत्र तुम अपने जो कर रहे तप्त त्रिभुवन |
कर प्रणाम ब्रह्मदेव तब माँगने लगा वर रावन || (८-७)

भावार्थः 'तुम अपने नेत्र बंद करो जिनसे तीनों लोक जल रहे है|' तब ब्रह्मदेव को प्रणाम कर रावण वरदान मांगने लगा |

हो जाऊं मैं अजर अमर दो यह वर चतुरानन |
सुन यह वचन बोले तब ब्रह्मदेव सुनो हे रावन || (८-८)

भावार्थः 'हे ब्रह्मदेव, मैं अजर, अमर हो जाऊं, ऐसा वर मुझे दीजिए|' यह वचन सुन ब्रह्मा बोले, 'हे रावण सुनो'|

नहीं हो सकता अमर कोई है यह असंभव दशानन |
मांगो कोई वर दूसरा तब बोला धूर्त रावन || (८-९)

भावार्थः 'कोई अमर नहीं हो सकता, हे रावण, यह असंभव है| कोई दूसरा वर मांगो|' तब धूर्त रावण बोला|

है उचित देव तब सुनो सुर असुर यक्ष उरग दुच्छुन |
विद्याधर किन्नर अप्सराएं अथवा कोई दिव्यात्मन || (८-१०)
नहीं कर सकें वध मेरा दीजिए यह वर उपम महन |
हे ब्रह्मदेव कहूँ मैं आपको मेरा एक और मन्मन् || (८-११)

भावार्थ: हे देव, उचित है| तब सुनो, सुर, असुर, यक्ष, सर्पादि, पिशाच, विद्याधर, किन्नर, अप्सरा या कोई दिव्यात्मा मेरा वध न कर सके, हे दिव्य, मुझे ऐसा श्रेष्ठ वर दीजिए| हे ब्रह्मदेव, मेरी एक और इच्छा है वह जान लीजिए|

अज्ञानवश यदि करूँ मैं स्व-सुता प्रणय निवेदन |
बने यह हेतु केवल पा सकूं जिससे मैं दशा मरन || (८-१२)

भावार्थ: अज्ञानवश यदि स्वयं की पुत्री के साथ मैं प्रणय निवेदन करूँ तो केवल यही मेरी मृत्यु का कारण बने|

तथास्तु कह चले गए तब ब्रह्मलोक देव चतुरानन |
समझ नर सम तृण नहीं माँगा अभयदान भूजन || (८-१३)

भावार्थ: 'तथास्तु' कह कर तब ब्रह्मदेव ब्रह्मलोक को चले गए| मनुष्य को तृण मात्र समझकर (रावण ने) मनुष्य से अभयदान नहीं माँगा|

हुआ मत्त वरदान ब्रह्मदेव वह अहंकारी रावन |
जीत लिए स्व-पराक्रम भू पाताल स्वर्ग त्रिभुवन || (८-१४)

भावार्थ: ब्रह्मदेव के वरदान से मद हुए अहंकारी रावण ने अपने पराक्रम से पृथ्वी,पाताल, स्वर्ग, तीनों लोक जीत लिए|

करते हुए दमन सुर असुर भूजन एक बार रावन |
जा रहा था मध्य मुनि तपस्थली दंडकारण्य वन ||
देखे अग्नि समान दीपित ऋषि कर रहे वहां साधन || (८-१५)

भावार्थ: सुर, असुर और प्राणियों का दमन करते हुए एक बार रावण ऋषियों की तपस्थली दंडकारण्य वन से जा रहा था| वहां उसने अग्नि के समान कांतिमान ऋषियों को देखा जो तप कर रहे थे|

नहीं संभव जीत सकूं सरिर करने लगा यह चिंतन |
जब तक नहीं सफल पा सकूं विजय इन ऋषिगन ||
होगा अघ घोर करूँ यदि वध मैं इन तपस्वी महन || (८-१६)

भावार्थ: वह विचार करने लगा कि ब्रह्माण्ड जीतना तब तक संभव नहीं है जब तक मैं इन ऋषियों पर विजय प्राप्त करने में सफल नहीं हूँ| यदि मैं इन महान तपस्वियों का वध करता हूँ तो घोर पाप होगा|

संभव करूँ आधीन इन्हें बलात सोच यह रावन |
बोला हूँ मैं नृप त्रिलोक जा निकट उन ऋषिगन || (८-१७)
करो गुणगान हो मेरी जय सदैव हे सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मन |
यह कह चुभा बाण निकालने लगा वह रक्त उनके तन || (८-१८)

भावार्थ: रावण ने सोचा कि मैं इन्हें बलपूर्वक आधीन कर लूँ| उन ऋषियों के समीप पहुँच बोला, 'मैं त्रिलोक का स्वामी हूँ| हे सभी सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण, मेरी सदैव जय हो, यह गुणगान करो|' यह कह कर वह उनके शरीर से बाण चुभा कर रक्त निकालने लगा|

बलात ले रक्त उनका किया एकत्रित एक कलश पावन |
थे वहां एक महर्षि नाम गृत्स्मद पिता एक सौ नंदन || (८-१९)

भावार्थ: इस प्रकार बल पूर्वक उनके रक्त को एक पवित्र कलश में एकत्रित करने लगा| वहां एक सौ पुत्र के पिता महर्षि गृत्स्मद नामक थे|

कर रहे वह तप संग भार्या हों प्रसन्न नारायन |
दें हरि मुझे सुता सम लक्ष्मी था उनका दृढ़ वयुन || (८-२०)
इस हेतु किए एकत्रित कलश मन्त्रित दुग्ध पावन |
था तीर्थभूत कुशाग्र समर्थ करे जो पूर्ण मन्मन् ||
गए हुए थे उस काल वह वन लेने पुष्प हेतु पूजन || (८-२१)

भावार्थ: वह अपनी पत्नी सहित नारायण को प्रसन्न करने के लिए तप कर रहे थे| उनकी दृढ़ इच्छा थी कि भगवान् उन्हें लक्ष्मी सम पुत्री दें| इस हेतु उन्होंने एक कलश

में पवित्र कुशाग्र से मन्त्रित दुग्ध एकत्रित किया हुआ था जो इच्छा पूर्ण करने में समर्थ था| उस समय वह पूजन के लिए पुष्प (आदि) लेने वन गए हुए थे|

दैवयोग से किया रक्त एकत्रित उसी कलश रावन |
हो प्रसन्न जीतूं त्रिलोक तब गया वह अपने भवन || (८-२२)

भावार्थ: दैवयोग से रावण ने उसी कलश में (ऋषियों का) रक्त एकत्रित किया| प्रसन्न होता हुआ कि मैं अब त्रिलोक जीत लूंगा,वह अपने भवन (लंका) चला गया|

पहुँच महल बोला स्व-नारि मंदोदरी यह वचन |
करो रक्षा इस कलश है इसमें विष प्राणहरन || (८-२३)

भावार्थ: महल पहुँच अपनी भार्या मंदोदरी से बोला, 'इस कलश में प्राण घातक विष है, इसकी रक्षा करो|'

है अभक्ष्य और अयोग्य दें किसी को यह रक्त ऋषिगन |
हेतु विजय सरिर रुला रहा था रावण सुर भूजन || (८-२४)

भावार्थ: 'यह ऋषियों का रक्त अभक्ष्य और किसी और को देने योग्य नहीं है|' अपनी त्रिलोक जय के कारण रावण देवताओं और प्राणियों को रुला रहा था|

सुन्दर देव दानव यक्ष गंधर्व बालाओं का कर हरन |
रखीं थीं पर्वत मंदर और सह्य हेतु स्व-मनोरंजन || (८-२५)

भावार्थ: सुन्दर देव, दानव, यक्ष और गंधर्वों की कन्याएं का हरण कर अपने मनोरंजन के लिए उसने मंदर और सह्य पर्वत पर रखीं थीं|

चला गया करने विहार वहां हिमालय शिखरिन् |
हुई दुःखी मन्दोदरी देख स्वभाव कामी पति रावन || (८-२६)

भावार्थ: हिमालय पर्वत पर वह (रावण) विहार करने चला गया| अपने पति की विलासी प्रकृति देख मंदोदरी दुःखी हुई|

हैं पति आकृष्ट अन्य नारि करने लगी वह तब रुदन |
है धिक्कार मुझे स्वयं मेरा कुल और यह नारि जीवन || (८-२७)

भावार्थ: पति को अन्य स्त्रियों के प्रति आकर्षित देख वह विलाप करने लगीं| मुझे स्वयं, मेरे कुल और नारी जीवन को धिक्कार है|

हूँ वंचित पति है श्रेष्ठ करूँ त्याग मैं स्व-जीवन |
कर स्मरण रुधिर कलश युक्त विष तृष्ट मारन || (८-२८)

भावार्थ: पति से वंचित होने पर श्रेष्ठ है कि मैं अपने प्राण त्याग दूँ| कलश में तीक्ष्ण मारक विष का स्मरण किया|

किया पान मंदोदरी वह विष हेतु त्यागे जीवन |
पर था वह युक्त मन्त्रित दुग्ध हेतु साधन भगवन ||
हो सुता समान लक्ष्मी पाया था वर वह ब्राह्मन || (८-२९)

भावार्थ: मंदोदरी ने प्राण त्यागने के लिए उस विष का पान कर लिया| वह नारायण की साधना के लिए मन्त्रित दुग्ध मिश्रित था| उस ब्राह्मण ने लक्ष्मी समान पुत्री होने का वर पाया था|

हुई गर्भवती मंदोदरी तुरंत कर पान वह मिश्रन |
था अग्नि समान दीप्त गर्भ हुई वह अति संसर्पन || (८-३०)

भावार्थ: उस मिश्रण का पान करते ही तुरंत मंदोदरी गर्भवती हो गई| वह गर्भ अग्नि के समान देदीप्यमान था| वह अति विस्मित हुई|

किया पान रक्त जो विष पर हुआ क्या करें चिंतन |
हो गई गर्भित पर नहीं उपस्थित यहां पति रावन || (८-३१)

भावार्थ: वह विचार करने लगीं, 'मैंने रक्त पान किया जो विष था| मैं गर्भित हो गई| पति रावण यहां उपस्थित नहीं है|

कर रहे क्रीड़ा पति अन्य नारि दूर स्थान रमन |
नहीं हुआ सहवास उनसे बीत गया वर्ष एकन || (८-३२)

भावार्थ: पति तो अन्य रमणीक स्थान पर अन्य स्त्रियों के साथ क्रीड़ा कर रहे हैं| एक वर्ष से मेरा उनसे सहवास नहीं हुआ|

क्या कहूँगी पति हुआ कैसे यह मम गर्भ धारन |
बना बहाना तीर्थ सेवा गईं वह तब स्थल पावन || (८-३३)

भावार्थ: पति को क्या कहूंगी कि यह मेरा गर्भ कैसे धारण हुआ? तीर्थ सेवा का बहाना बना तब वह पवित्र स्थल को गईं|

गईं कुरुक्षेत्र वह हो आरूढ़ विमान पथ गगन |
दिया जन्म सुता गाढ़ दिया उसे वहीं क्षेत्र भुवन || (८-३४)

भावार्थ: वह गगन के मार्ग से विमान पर आरूढ़ हो कुरुक्षेत्र गईं| वहां उन्होंने पुत्री को जन्म दिया जिसे पृथ्वी के एक क्षेत्र में गाढ़ दिया|

कर स्नान जल सरस्वती चली गईं तब अपने भवन |
रखीं मंदोदरी यह बात गुप्त नहीं कही किसी जन || (८-३५)

भावार्थ: सरस्वती जल में स्नान कर तब वह अपने भवन (लंका) चली गईं| मंदोदरी ने यह बात गुप्त रखी| किसी भी प्राणी से नहीं कहा|

कुछ समय उपरान्त किया एक महायज्ञ जनक राजन |
था स्थान कुरुक्षेत्र कुरुजांगल श्रेष्ठ ब्राह्मन || (८-३६)

भावार्थ: हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, कुछ समय उपरान्त सम्राट जनक ने कुरुक्षेत्र के कुरुजांगल स्थान पर एक महायज्ञ किया|

साथ पत्नी सुनयना किए जनक कर्षन् हल स्वर्न |
हुईं प्रकट तब दिव्य शुभ सुन्दर कन्या तल भुवन || (८-३७)

भावार्थ: पत्नी सुनयना के साथ जनक ने वहां स्वर्ण हल चलाया| तब पृथ्वी के तल से एक सुन्दर शुभ दिव्य कन्या प्रकट हुईं|

बरसा रहे देव अप्सराएं पुष्प उन पर हो प्रसन्न |
देख यह आश्चर्य हुए अचंभित अति जनक राजन || (८-३८)

भावार्थ: प्रसन्न हो उन पर (कन्या पर) देवता एवं अप्सराएं पुष्प बरसा रहे थे| यह आश्चर्य देख सम्राट नृप अत्यंत अचंभित हुए|

सुन आकाशवाणी हुए किंकर्तव्यविमूढ़ राजन |
करो स्वीकार सम सुता करो जनक इसका पालन || (८-३९)

भावार्थ: आकाशवाणी सुन नृप किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए, 'हे जनक, पुत्री समान स्वीकार कर इसका पालन करो|'

है यह अति सुभग समान अग्नि दीपित कन्या पावन |
हेतु कर्म इस दिव्य बाला होगा महामंगल भूजन || (८-४०)

भावार्थ: अग्नि समान प्रकाशित यह पवित्र कन्या अत्यंत सौभाग्यशाली है| इस दिव्य कन्या के कर्मों से प्राणियों का महामंगल होगा|

करो सम्पादन यज्ञ अपना है नहीं यह विघ्न साधन |
हुई प्रकट फल हल हो प्रसिद्ध नाम सीता भुवन || (८-४१)

भावार्थ: अपना यज्ञ पूर्ण करो| यह तप में विघ्न नहीं है| यह हल के फल से प्रकट हुई है, अतः पृथ्वी पर सीता नाम से प्रसिद्ध होगी|

समझो इसे अपनी सुता पाए हो तुम कृपा भगवन |
हुई शांत आकाशवाणी तब कह यह मधुर वचन ||
हो प्रसन्न जनक तब किए युक्त महाधन यज्ञ सम्पादन || (८-४२)

भावार्थ: भगवान् की कृपा से प्राप्त इसे अपनी पुत्री समझो| यह मधुर वचन कह कर आकाशवाणी शांत हो गई| तब सम्राट (जनक) ने प्रसन्न हो महाधन युक्त यज्ञ पूर्ण किया|

दीं सीता तब कर महर्षि अष्टवक्र हेतु आशीर्वचन |
हे श्रेष्ठ भारद्वाज किया मैंने सीता जन्म विवरन ||
हों नाश पाप हो पवित्र सुने जो यह कथा भूजन || (८-४३)

भावार्थ: तब (सम्राट जनक ने) सीता को महर्षि अष्टवक्र के हाथों में आशीष के लिए दे दिया| हे श्रेष्ठ भारद्वाज, मैंने सीता के जन्म का विवरण दिया| जो भी प्राणी इस कथा को सुनेगा उसके पाप नष्ट होंगे और वह पवित्र हो जाएगा|

नहीं होता जन्म दोबारा सुने जो यह कथा पावन |
हो पुण्यवान रहित-अघ पाए सहज श्री वह भूजन || (८-४४)

भावार्थ: जो इस पवित्र कथा को सुनता है, उसका दोबारा जन्म नहीं होता (अर्थात मोक्ष पा जाता है)| वह पुण्यवान और पाप रहित हो जाता है| लक्ष्मी को सहजता से प्राप्त कर लेता है (अर्थात धन-धान्य से पूर्ण हो जाता है)|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'माँ सीता जन्म वर्णन' नाम अष्टम सर्ग समाप्त|

नवम सर्ग
परशुराम को राम का विश्वरूप दिखाना

उपयुक्त काल किए श्री राम संग सीता पाणिग्रहन |
तत्पश्चात ले अनुमति श्वसुर जनक और ऋषि महन ||
संग पिता दशरथ चारों अनुज और पत्नी पावन || (९-१)
बजाते विविध प्रकार वाद्य चले अयोध्या पट्टन |
हुआ मिलन मार्ग प्रभु परशुराम आर्चीकनंदन || (९-२)

भावार्थ: उपयुक्त समय में सीता जी का विवाह श्री राम के साथ हुआ| तत्पश्चात श्वसुर जनक और महर्षि (विश्वामित्र) से अनुमति लेकर, पिता दशरथ, चारों भाई और पवित्र पत्नी (सीता) के साथ गाजे बाजों के साथ भगवान् अयोध्या नगर को चले| मार्ग में उनका मिलन आर्चीकनंदन भगवान् परशुराम के साथ हुआ|

सुना किए अद्भुत कौतुक जनकपुर श्री रघुनन्दन |
किए विवाह संग जानकी कर धनुष शंकर भंजन || (९-३)

भावार्थ: उन्होंने सुना था कि श्री राम ने जनकपुर में अद्भुत कौतुक किया है| शंकर के धनुष को तोड़ने के कारण जानकी से विवाह किया है|

थी इच्छा देखें स्वयं है कितना बल इस नृपनन्दन |
आए मिलने कर धार क्षत्रिय नाशक दिव्य शरासन || (९-४)

भावार्थ: उनकी इच्छा थी कि वह स्वयं राजकुमार (श्री राम) में कितना बल है, देखें| वह क्षत्रियों का नाश करने वाले दिव्य धनुष को धारण कर मिलने आए|

आ रहे परशुराम सहित शस्त्र देखा राम भगवन |
कर प्रणाम बोले वह हंसकर अति मृदुल वचन || (९-५)
है स्वागत आपका करूँ क्या सेवा श्रेष्ठ ब्राह्मन |
बोले भार्गव नहीं हमें कोई स्वागत से प्रयोजन || (९-६)

भावार्थ: भगवान् राम ने देखा कि परशुराम शस्त्र सहित आ रहे हैं, तब प्रणाम कर अति मधुर वचन हंसकर बोले, 'हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, आपका स्वागत है| मैं आपकी क्या सेवा करूँ?' तब परशुराम बोले, 'हमें आपके स्वागत से कोई लेना देना नहीं है|'

देखो हस्त मेरे यह क्षत्रिय काल स्वरुप शरासन |
हो समर्थ यदि तो चढ़ाओ प्रत्यंचा हे रघुनन्दन || (९-७)

भावार्थ: 'मेरे हाथों में यह क्षत्रियों का काल स्वरुप धनुष देखो| हे रघुनन्दन, यदि समर्थ हो तो प्रत्यंचा चढ़ाओ|'

सुन यह कटु वचन भार्गव बोले श्री राम भगवन |
है नहीं उचित दिखाएं बल क्षत्रिय समक्ष ब्राह्मन || (९-८)

भावार्थ: परशुराम के कटु वचन सुन भगवान् श्री राम बोले, 'ब्राह्मणों के समक्ष बल दिखाना क्षत्रियों के लिए उचित नहीं है|'

हे प्रभु लिया मैंने जन्म वंश इक्ष्वाकु अति पावन |
है अवांछनीय मुझे करूँ बाहुबल का प्रदर्शन || (९-९)

भावार्थ: हे प्रभु (परशुराम), मैंने अति पवित्र इक्ष्वाकु वंश में जन्म लिया है| मेरे लिए बाहुबल का प्रदर्शन करना निषेध है|

सुन राम विनीत वचन बोले तब आर्चीकनंदन |
मत दो उपदेश मुझे चढ़ाओ प्रत्यंचा शरासन ||
तब हो क्रोधित श्री राम किया धनुष धारन || (९-१०)

भावार्थ: राम के विनीत वचन सुन परशुराम बोले, 'मुझे उपदेश मत दो| धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाओ|' तब क्रोधित हो श्री राम ने धनुष को धारण किया|

ले धनुष स्व-हस्त चढ़ाई प्रत्यंचा तुरंत भगवन |
हेतु इस कार्य नहीं हुआ कोई परिश्रम और विघ्न || (९-११)

भावार्थ: अपने हाथ में धनुष लेकर भगवान् (श्री राम) ने तुरंत प्रत्यंचा चढ़ा दी| इस कार्य में उन्हें कोई परिश्रम और विघ्न नहीं हुआ (अर्थात बड़ी सहजता के साथ प्रत्यंचा चढ़ा दी)|

हँसते हुए खींची पिङ्गा तब हुआ शोर भयावन |
थी ध्वनि समान विद्युत्पात कर रही गर्जन गगन ||
हुए भयभीत सब चर अचर जीव सुन यह भयानक ध्वन् || (९-१२)

भावार्थ: हँसते हुए (प्रभु श्री राम ने) धनुष की तार खींची जिससे भयानक शोर हुआ| उसकी ध्वनि आकाश में बिजली गिरने के समान गर्जन जैसी थी| इस भयानक गर्जन को सुनकर सभी चर अचर जीव भयभीत हो गए|

बोले प्रभु परशुराम से तब हंसकर दशरथ नन्दन |
चढ़ा ली प्रत्यंचा धनुष करूँ क्या अब कहें भगवन || (९-१३)

भावार्थ: तब हंसकर दशरथ नंदन प्रभु परशुराम से बोले, 'हे भगवन, धनुष की प्रत्यंचा तो चढ़ा ली, अब क्या करूँ, कहें|'

दिए तब एक तीक्ष्ण बाण और बोले रौद्रभूषन |
दिखलायो सामर्थ्य खींचो इसे पर्यन्त अंश श्रवन || (९-१४)

भावार्थ: तब परशुराम जी ने एक तीक्ष्ण बाण दिया और बोले, 'इसे कर्ण भाग तक खींचकर अपनी सामर्थ्य दिखलाओ|'

क्रोध से तब हो गया दीप्त मुख लाल राम भगवन |
बोले राम हे भार्गव हैं आप हठी अहङ्कारिन् ||
करता रहा क्षमा मैं सुन आपके अति कठोर वचन || (९-१५)

भावार्थ: क्रोध से तब भगवान् श्री राम का प्रकाशमान मुख लाल हो गया और वह बोले, 'हे भार्गव, आप हठी और अहंकारी हैं| मैं आपके अत्यंत कठोर वचन सुनकर क्षमा करता रहा|'

हैं रक्षित और पाए महाशक्ति पितामह आशीर्वचन |
हैं क्षम्य अपराध आपके हेतु विनाश सब क्षत्रियगन ||
इसी मद लगा रहे आक्षेप मुझ पर आप युद्धवन || (९-१६)

भावार्थ: 'आप (अपने) पितामह के आशीर्वाद से महाशक्ति पाए हैं, रक्षित हैं| आपके सब क्षत्रियों का विनाश करने के अपराध क्षम्य हैं| इसी अहंकार से हे योद्धा, आप मुझ पर आरोप लगा रहे हैं|'

करो दर्शन मेरा स्वरुप दूँ मैं तुम्हें दिव्य नयन |
दिए तब यथोचित नेत्र कर सकें दर्शन नारायन || (९-१७)

भावार्थ: 'मैं तुम्हें दिव्य नेत्र देता हूँ, मेरे स्वरुप का दर्शन करो|' परशुराम नारायण का दर्शन कर सकें, इसलिए उन्हें (भगवान् राम ने) यथोचित नेत्र दिए|

देखे तब परशुराम समाहित ब्रह्माण्ड तन भगवन |
अभ्यन्तर आदित्य वसु रूद्र साध्य और मरुतगन || (९-१८)
पितृ अग्नि नक्षत्र गृह गंधर्व राक्षस धाम पावन |
यक्ष मालिनी आदि सभी थे अंदर उनके विशाल तन || (९-१९)
ऋषि महर्षि ब्रह्मऋषि ब्रह्मभूत लोक सनातन |
पर्वत समुद्र त्रिलोक आदि सब समाहित उनके तन || (९-२०)
वेद उपनिषद वषट्कार यज्ञ ऋक यजु साम पावन |
देखे धनुर्वेद सहित समस्त ज्ञान उदर दिव्य भगवन || (९-२१)

भावार्थ: तब परशुराम ने समस्त ब्रह्माण्ड को प्रभु के शरीर में समाहित देखा| आदित्य, वसु, रूद्र, साध्य, मरुत, पितृ, अग्नि, नक्षत्र, गृह, गंधर्व, राक्षस, तीर्थ स्थान, यक्ष, नदियाँ, ऋषि, महर्षि, ब्रह्मऋषि, ब्रह्मभूत, सनातन लोक, पर्वत, समुद्र, त्रिलोक, वेद, उपनिषद, वषट्कार, यज्ञ, ऋक, यजु, साम, धनुर्वेद सहित समस्त ज्ञान दिव्य भगवान् के उदर में समाहित थे|

छोड़ा तब वह तीक्ष्ण बाण दिया जो आर्चीकनंदन |
हो गए चलायमान विद्युत् मेघवृंद वर्षा गगन || (९-२२)

भावार्थ: तब परशुराम द्वारा दिया गया तीक्ष्ण बाण (प्रभु श्री राम ने) छोड़ा| आकाश में विद्युत, मेघवृंद (बादलों के समूह) और वर्षा चलायमान हो गई (उपस्थित हो गई)|

हो गई व्याप्त धरा उल्का वज्र सम प्रलय दिवन् |
छाए मेघ समूह गगन और होनी लगी वर्षा गहन || (९-२३)

भावार्थ: प्रलय काल के समान पृथ्वी उल्का और वज्र से भर गई| आकाश में बादलों के समूह छा गए| घनघोर वर्षा होने लगी|

भयानक स्वर सहित हुआ हृदय विदारक भूकम्पन |
निःसंदेह था यह बल बाहु प्रदर्शन राम भगवन ||
हो भयभीत विह्वल भार्गव तब करने लगे चिंतन ||
नहीं मुझ में बल और सामर्थ्य सम इन नृपनन्दन || (९-२४)

भावार्थ: भयानक स्वर के साथ हृदय विदारक भूकम्प हुआ| निःसंदेह यह भगवान् राम का बाहु-बल प्रदर्शन था| भयभीत और भ्रमित हो तब भार्गव सोचने लगे| इन राजकुमार के समान मुझ में बल और सामर्थ्य नहीं है|

जब हुआ चलायमान बाण दिया जो रौद्रभूषन |
हुई प्राप्त चेतना उन्हें समझे वह प्रताप रघुनन्दन || (९-२५)

भावार्थ: जो परशुराम ने बाण दिया था, उसके चलायमान होने पर उनको चेतना प्राप्त हुई और वह रघुनन्दन का प्रताप समझे|

किए प्रणाम भार्गव तब स्वरूप राम नारायन |
कर प्राप्त आज्ञा गए वह पर्वत महेंद्र हेतु साधन || (९-२६)

भावार्थ: परशुराम ने तब नारायण स्वरुप राम को प्रणाम किया| उनसे आज्ञा लेकर तप हेतु तब वह महेंद्र पर्वत को चले गए|

कर निवास वहां वर्ष एक रहे वह सलंग्न तप साधन |
रहित मद दम्भ गल्भ अहंकार हुए वह विनम्र महन || (९-२७)

भावार्थ: वहां एक वर्ष तक उन्होंने मद, दम्भ, अभिमान, अहंकार से रहित अति विनम्र हो तपस्या की|

हो गए प्रकट समक्ष तब सभी पितर रेणुकानन्दन |
हे भार्गव था नहीं उचित किया तुमने संदेह भगवन || (९-२८)
करते सभी   त्रिलोक   उनका आदर और पूजन |
जाओ तुम अब तट नदी वधूसर जो अति पावन || (९-२९)
कर स्नान जाओ   तीर्थ   करो प्राप्त पुनः धामन |
जाओ फिर दीप्तोह किए जहां प्रपितामह साधन || (९-३०)

भावार्थ: तब सभी पितृ परशुराम जी के समक्ष उपस्थित हो गए| (वह बोले) हे भार्गव, तुमने भगवान् पर सन्देह कर अच्छा नहीं किया| उनका त्रिलोक में सभी सम्मान और पूजन करते हैं| अब तुम अति पवित्र वधूसर नदी के तट पर जाओ| वहां स्नान कर तीर्थ यात्राएं करो| तुम्हें अपने यश की प्राप्ति होगी| तत्पश्चात दीप्तोह जाओ, जहां प्रपितामह ने तपस्या की थी|

किया था तप यहाँ प्रपितामह भृगु देवयुग पावन |
किए वही परशुराम जैसे दिए पितृ प्रतिबोधन || (९-३१)

भावार्थ: 'यहां प्रपितामह भृगु ने पावन देवयुग में तप किया था|' परशुराम ने वही किया जैसा पितरों ने आदेश दिया|

हे महामुनि भारद्वाज पा सके तब भार्गव पुनः धामन |
सुनें जो सुर असुर भूजन यह राम चरित्र पावन || (९-३२)
हो मुक्त सब पाप पाए मोक्ष और धाम नारायन |
सूत मागध आदि करें वर्षा पुष्प और पूजें भगवन ||
आए संग नारि पिता सब   भाई तब कोशल पट्टन || (९-३३)

भावार्थः हे महामुनि भारद्वाज, तब परशुराम पुनः यश प्राप्त कर सके| जो भी सुर, असुर, प्राणी इस पवित्र राम चरित्र को सुनेगा, उसके सब पाप मिट जाएंगे और वह मोक्ष पा साकेत धाम पाएगा| सूत, मागध आदि प्रभु पर पुष्प वर्षा कर उनका पूजन करने लगे| तब भगवान् पत्नी, पिता और सब भाइयों के साथ अयोध्या नगर आए|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'परशुराम को राम का विश्वरूप दिखाना' नाम नवम सर्ग समाप्त|

दशम सर्ग
रामचंद्र का महावीर को चतुर्भुज रूप दिखाना

बीता कुछ काल मंगलमय अयोध्या संग कुटुंबजन |
तब आए किसी महत कार्य दंडकारण्य श्री भगवन ||
थे साथ उनके पत्नी सीता और लघु भ्राता लक्ष्मन || (१०-१)

भावार्थ: कुछ समय कुशलता पूर्वक परिवार के साथ अयोध्या में बीता| तब किसी महत्वपूर्ण कार्य के लिए भगवान् दंडकारण्य (वन) आए| उनके साथ पत्नी सीता और छोटे भाई लक्ष्मण थे|

तट नदी गोदावरी रच पर्णशाला किए वह वसन |
करते यदा कदा हेतु मनोरंजन मृग आच्छोदन || (१०-२)

भावार्थ: गोदावरी नदी के तट पर पर्णशाला बना वह वास करते थे| कभी कभी मनोरंजन हेतु मृग आखेट करते थे|

गए हुए थे हेतु आखेट एक समय भगवन संग लक्ष्मन |
उस समय मोहवश किया हरण सीता लंकापति रावन ||
देखी कुटी रिक्त रहित सीता जब लौटे आच्छोदन || (१०-३)

भावार्थ: एक समय भगवान् (भाई) लक्ष्मण के साथ आखेट पर गए हुए थे| उस समय लंकापति रावण ने मोहवश सीता का हरण कर लिया| जब आखेट से लौटे तो कुटिया को सीता रहित रिक्त देखा|

नहीं पा सीता कुटी ढूंढने लगे उन्हें रघुनन्दन |
संग भाई करते लीला भटकते फिरे वह दंडक वन || (१०-४)

भावार्थ: सीता को कुटी में न पाकर श्री राम उन्हें ढूंढने लगे| भाई सहित लीला करते हुए वह दंडकारण्य (वन) में भटकते रहे|

बह रहे थे अश्रु सम वैतरणी नदी उनके नयन |
बना रहे नद बहते हुए निरंतर अश्रु अतिशयन || (१०-५)

भावार्थ: उनके नेत्रों से बहते अश्रु वैतरणी नदी समान लग रहे थे| निरंतर अत्यधिक बहते हुए अश्रु नदी बना रहे थे (अर्थात नदी स्वरूप लग रहे थे)|

हो तृप्त तर जाते भव स्नान कर जिस नदी पितर जन |
है नदी वैतरणी दे दान तट जिस पाएं फल शोभन || (१०-६)

भावार्थ: जिस नदी में प्राणियों के पितर स्नान कर तृप्त हो भव सागर तर जाते हैं, जिसके तट पर दान देने से शुभ फल मिलते हैं, वह वैतरणी नदी है|

लग रहे समान पर्वत जब हुए शुष्क मल बाह्य नयन |
रहता वानर नृप सुग्रीव ऋष्यमूक किए हरि स्मरन ||
करूँ मित्रता संग उसके हो सहायक नारि निरूपन || (१०-७)

भावार्थ: नेत्रों के बाहर मल शुष्क होने पर पर्वत समान लग रहा था| वानर नृप सुग्रीव ऋष्यमूक (पर्वत) पर रहता है, ऐसा भगवान स्मरण किए| उसके साथ मित्रता करूँ वह पत्नी को ढूंढने में सहायक होगा|

चले ओर ऋष्यमूक तब राम संग भ्राता लक्ष्मन |
रहता सुग्रीव संग वहां पञ्च मंतु महा युद्धिवन || (१०-८)

भावार्थ: तब राम भ्राता लक्ष्मण के साथ ऋष्यमूक (पर्वत) की ओर चले| वहां सुग्रीव पांच महा योद्धा मंत्रियों के साथ रहता था|

भयभीत स्व-भ्राता बाली बनाया उसने यह वसन |
देखा दूर से उसने चले आ रहे उस ओर राम लक्ष्मन ||
किए धारण धनुष बाण लग रहे करें ग्रसित गगन || (१०-९)

भावार्थ: अपने भाई बाली से भयभीत हो उसने यह निवास बनाया था| दूर से ही उसने देखा राम लक्ष्मण उस ओर चले आ रहे हैं| वह धनुष बाण धारण किए हुए ऐसे लग रहे थे कि आकाश को ग्रसित कर लें|

हुआ भयभीत सुग्रीव समझ उन्हें रिपु शूर महन |
आए करने वध मेरा भेजे बाली करूँ कैसे सरंक्षन ||
किया निवेदन जाओ धर रूप विप्र हे पुत्र-पवन || (१०-१०)

भावार्थ: उन्हें महा बलशाली शत्रु समझ सुग्रीव भयभीत हो गया| यह बाली के भेजे हुए मेरा वध करने आए हैं, मैं रक्षा कैसे करूँ? तब हनुमान जी से उसने निवेदन किया कि आप ब्राह्मण रूप धारण कर जाओ|

गए धर रूप विप्र तब हनुमान निकट राम लक्ष्मन |
करबद्ध पूछे हैं कौन आप तब हुए सत दर्शन ||
भुजा चार शोभित सर किरीट स्वर्ण युक्त मणि रत्न || (१०-११)

भावार्थ: तब हनुमान विप्र रूप धर राम और लक्ष्मण के पास गए और करबद्ध पूछा, 'आप कौन हैं?' तब उन्हें सत्य दर्शन हुए (अर्थात प्रभु ने उन्हें अपना पूर्ण स्वरुप दिखाया)| चार भुजाएं थीं तथा मस्तिष्क पर स्वर्ण का मुकुट मणि और रत्नों से युक्त था|

किए धारण शंख चक्र गदा हस्त अपने रघुनन्दन |
सुशोभित कंठ पुष्प माला चिह्न श्रीवत्स वक्ष पावन ||
पहने थे वस्त्र पीताम्बरी समान अच्युत नारायन || (१०-१२)

भावार्थ: रघुनन्दन अपने हाथों में शंख, चक्र और गदा धारण किए थे| उनके कंठ में पुष्प माला सुशोभित हो रही थी तथा वक्ष पर पवित्र श्रीवत्स चिह्न था| अच्युत नारायण के समान उन्होंने पीताम्बरी पहनी थी|

श्री और सरस्वती कर रहीं उनका अभिनन्दन |
पुत्र चतुरानन सनकादिक कर रहे उनका पूजन || (१०-१३)

भावार्थ: श्री (लक्ष्मी) और सरस्वती उनका अभिनन्दन कर रहीं थीं| ब्रह्मा के सनकादिक पुत्र उनका पूजन कर रहे थे|

सुर गंधर्व यक्ष सिद्ध विद्याधर उरग और अभिजन |
हो रहे थे सेवित ऋषि मुनि महात्मा कमल लोचन || (१०-१४)

भावार्थ: सुर, गन्धर्व, यक्ष, सिद्ध, विद्याधर, उरग (सर्प आदि), पितर, ऋषि, मुनि, महात्मा कमल लोचन (भगवान्) की सेवा कर रहे थे|

हो रहे लघु भ्राता प्रकाशमान सम सहस्त्र द्युवन् |
सुन्दर समान सहस्त्र सोम थे सहस्त्र फन लक्ष्मन || (१०-१५)

भावार्थ: लघु भ्राता लक्ष्मण सहस्त्र सूर्य के समान प्रकाशमान, सहस्त्र चन्द्रमा के समान सुन्दर और सहस्त्र फन से युक्त थे|

छत्र फन अनंत शेषनाग था सर ऊपर श्री भगवन |
कर रहे समूह नाग उरग आदि स्तुति श्री लखन || (१०-१६)

भावार्थ: भगवान् के सर के ऊपर अनंत शेषनाग के फन का छत्र था| इन लक्ष्मण (शेषनाग) की स्तुति नाग और उरग (पेट के बल चलने वाले जंतु) कर रहे थे|

दिखाया इस प्रकार दिव्य स्वरुप हरि पुत्र-पवन |
हुए अति विस्मित हनुमंत देख यह स्वरूप भगवन || (१०-१७)

भावार्थ: भगवान् ने इस प्रकार अपना दिव्य स्वरुप पवन पुत्र को दिखाया| प्रभु का यह स्वरुप देख हनुमान जी अत्यंत विस्मित हुए|

किए बंद नेत्र कुछ क्षण हो हर्षित दिव्य अवलोकन |
कर प्रणाम वंदन हरि बोले करबद्ध अंजना नंदन || (१०-१८)

भावार्थ: कुछ क्षण नेत्र बंद कर दिव्य रूप दृश्य से हर्षित हो, प्रभु को प्रणाम एवं वंदन कर करबद्ध हनुमान जी बोले|

नाम कपि हनुमान हूँ मैं अमात्य सुग्रीव हे भगवन |
भेजा मुझे नृप जान सकें हैं कौन आप सत्व जन || (१०-१९)

भावार्थ: 'हे भगवन, मेरा नाम वानर हनुमान है और मैं सुग्रीव का मंत्री हूँ| सम्राट (सुग्रीव) ने मुझे भेजा है कि जान सकें आप शूरवीर कौन हैं?'

देख रूप दिव्य युक्त धनुष बाण हुए भयभीत राजन |
हे प्रभु हैं आप कौन है क्या हेतु जो फिर रहे वन || (१०-२०)

भावार्थ: 'धनुष बाण सहित आपका दिव्य रूप देख नृप (सुग्रीव) भयभीत हो गए हैं| हे प्रभु, आप कौन हैं और वन में भ्रमण करने का क्या कारण है?'

हो रहे थे व्याकुल महावीर कहते हुए यह वचन |
थे कम्पित खड़े झुकाए शीश करबद्ध पुत्र-पवन ||
करुणा कर करुणानिधान बोले तब मृदुल वचन || (१०-२१)

भावार्थ: यह वचन कहते हुए महावीर (हनुमान जी) व्याकुल हो रहे थे| पवन पुत्र का तन काँप रहा था, करबद्ध सर झुकाए वह खड़े थे| तब दयानिधान दया कर मृदुल वचन बोले|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रामचंद्र का महावीर को चतुर्भुज रूप दिखाना' नाम दशम सर्ग समाप्त|

एकादस सर्ग
राम का सांख्य योग वर्णन करना

किए तब पुरुषोत्तम राम स्व-चरित्र का वर्णन |
हे वत्स भक्त हनुमान सुनो उत्तर जो पूछा प्रश्न || (११-१)

भावार्थः तब पुरुषोत्तम राम अपने चरित्र का वर्णन करने लगे| 'हे वत्स भक्त हनुमान, जो तुमने प्रश्न पूछा, उसका उत्तर सुनो|'

सुनो ध्यान से कहूँ मैं जो तुम्हें आत्मगुह्य वचन |
नहीं कहो कभी अभक्त है यह ज्ञान गुप्त सनातन || (११-२)

भावार्थः मैं जो तुम्हें आत्मगुह्य वचन कहूँ, उन्हें ध्यान पूर्वक सुनो| यह ज्ञान गुप्त और सनातन है, किसी अभक्त को कभी मत कहो|

नहीं जान सकते यह ज्ञान करें कितने भी प्रयत्न |
हों चाहे सुर यक्ष गन्धर्व ऋषि मुनि प्राज्ञ भूजन ||
जो जाने यह ज्ञान है वह ब्रह्ममय श्रेष्ठ आत्मवन || (११-३)

भावार्थः सुर, यक्ष, गंधर्व, ऋषि ,मुनि या पंडित प्राणी, कितने भी प्रयत्न करें यह ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते| जो यह ज्ञान जानता है वह ब्रह्ममय श्रेष्ठ परमात्म-तत्वी है|

पाएं जब यह ज्ञान पूर्व ब्रह्मवादी हे पुत्र-पवन |
हो जाएं विरक्त हों दूर सभी माया मोह आवरन ||
है यह गुह्यतम ज्ञान जो योग्य विगूढ़ अज्ञानी जन || (११-४)

भावार्थः हे पवन पुत्र, जब पूर्व ब्रह्मवादी यह ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, तो वह विरक्त हो सभी माया मोह आवरण से दूर हो जाते हैं| यह अति गोपनीय ज्ञान अज्ञान प्राणियों से गुप्त रखने योग्य है|

हो प्राप्त जिन्हें यह ज्ञान परमात्म-तत्व अति पावन |
लें जन्म महात्मा और तत्व-दर्शी उनके भरिमन् ||
समझो आत्मा सूक्ष्म पावन शांत और सनातन || (११-५)

भावार्थ: जिन्हें यह अत्यंत पवित्र ज्ञान प्राप्त हो जाता है, उनके परिवार में महात्मा और तत्व-दर्शी जन्म लेते हैं| आत्मा को सूक्ष्म, पावन, शांत और सनातन समझो|

है यह सर्वान्तर सत चिन्मात्र परे तम मुग्धिमन् |
समझो इसे अन्तर्यामी पुरुष प्राण और भगवन || (११-६)

भावार्थ: यह सर्व-व्यापक, पावन, ईश्वरीय एवं अन्धकार और अज्ञान से परे है| इसे अन्तर्यामी पुरुष, प्राण और भगवान् समझो|

कहें वेद श्रुति है यह सम कालाग्नि अनिवर्चन |
होता विलीन संसार इसमें और हो इसी से उत्पन्न || (११-७)

भावार्थ: वेद श्रुति कहती हैं कि यह अव्यक्त कालाग्नि (कल्प अंत करने वाली अग्नि) के समान है| इसी में संसार विलीन होता है और इसी से उत्पन्न होता है|

हेतु इसी माया करे धारण विभिन्न योनि तन भूज़न |
है नहीं यह चलायमान न चला सकता इसे कोई जन || (११-८)

भावार्थ: इसी माया के कारण प्राणी विभिन्न योनियों में शरीर धारण करता है| यह न तो चलायमान है और न इसे कोई प्राणी चला सकता है|

समझो नहीं यह सम धरा जल अग्नि नभ प्राण या मन |
है नहीं यह वस्तु जो तुमने देखी छुई या की श्रवन || (११-९)

भावार्थ: इसे पृथ्वी, जल,अग्नि, आकाश, प्राण या मन के समान नहीं समझो| यह कोई वस्तु नहीं है जो तुमने देखी, छुई या सुनी हो|

है नहीं यह रूप रस गंध अहंकार अथवा निस्वन |
हे हनुमंत नहीं इसके कर पग गुद जननांग बदन || (११-१०)

भावार्थ: हे हनुमान, यह रूप, रस, गंध, अहंकार अथवा स्वर नहीं है| इसके हाथ, पैर, गुदा, जननेन्द्रिय अंग और शरीर नहीं हैं|

है आत्मा नहीं कर्ता भोक्ता प्रकृति विस्मापन |
नहीं पुरुष और प्राण केवल है यह चैतन्य वर्पन् || (११-११)

भावार्थ: आत्मा कर्ता, भोक्ता, प्रकृति, माया, पुरुष, प्राण नहीं हैं| यह केवल चैतन्य स्वरुप है|

जैसे नहीं सम्बन्ध कोई अन्धकार और अवद्योतन |
उसी प्रकार नहीं सम्बन्ध कोई प्रपंच से भगवन || (११-१२)

भावार्थ: प्रकाश और अन्धकार का कोई सम्बन्ध नहीं है| उसी प्रकार प्रपंच से भगवान् का कोई सम्बन्ध नहीं है|

हैं परस्पर विलक्षण जैसे छाया और तरु इस भुवन |
सादृश्य पुरुष और प्रपंच परमात्मा से है भिन्न || (११-१३)

भावार्थ: इस लोक में छाया और वृक्ष परस्पर विलक्षण हैं| उसी प्रकार पुरुष (जग उत्पत्ति का मायावी अंश) और प्रपंच परमात्मा से भिन्न है|

ढकी मलिनता देती आत्मा विकारी आचरण जन |
नहीं मिल सकती मुक्ति सौ जन्म में भी ऐसे दुर्जन || (११-१४)

भावार्थ: आत्मा का अपवित्र आवरण विकारी आचरण देता है (अर्थात जब आत्मा अज्ञान और माया से ढक जाती है तब वह विकारी आचरण देती है)| ऐसे दुष्ट प्राणियों को सौ जन्म में भी मुक्ति नहीं मिल सकती|

देखते आत्मा मुक्त परमार्थ से ऋषि मुनि निपुन |
विकारहीन अविनाशी सुखेन दुःख-सुख-अबन्धन || (११-१५)

भावार्थः परमार्थ से ऋषि मुनि तथा विद्वान् आत्मा को मुक्त, विकारहीन, अविनाशी, आनंददायी, दुःख सुख से मुक्त देखते हैं|

कर्ता भाव और अनुभव दुःख सुख स्थूल तनुक तन |
यह भाव हेतु मद करे बुद्धि आत्मा में प्रत्यारोपन || (११-१६)

भावार्थः कर्ता भाव, दुःख सुख, शरीर का स्थूल अथवा क्रश (पतला) होने का अनुभव, यह भाव अहंकार के कारण बुद्धि आत्मा में प्रत्यारोपण कर देती है|

कहें आत्मा परे प्रकृति जो वैद्य वेद श्रुति सनातन |
अक्षय सर्वव्यापी अविनाशी अनंत और पावन || (११-१७)

भावार्थः वेद श्रुति और सनातन (धर्म) जानने वाले विद्वान आत्मा को प्रकृति से परे, अक्षय, सर्वव्यापी, अविनाशी, अनंत और पवित्र कहते हैं|

हेतु अज्ञान होता अनुभव है जग उत्पत्ति धरुन |
विपरीत ज्ञान इसके दे प्राज्ञ प्रकृति ब्रह्म वेदन || (११-१८)

भावार्थः अज्ञान के कारण अनुभव होता है कि संसार उत्पत्ति का आधार है| इसके विपरीत ज्ञान बुद्धिमानों को ब्रह्म प्रकृति का ज्ञान देता है|

समझो परम पुरुष है अध्यात्म श्रद्धेय जगदात्मन् |
नित्योत्थित स्व-प्रकाशित सर्वव्यापी निःसपत्न ||
बिन ज्ञान यह मदवश माने स्वयं को कर्ता भूजन || (११-१९)

भावार्थः परम पुरुष को अध्यात्म, पूजनीय हुए विश्व की आत्मा समझो| यह नित्य उदय होने वाला, स्व-प्रकाशित, सर्वव्यापी और अद्वितीय है| इस ज्ञान के बिना अहंकार वश प्राणी स्वयं को कर्ता मान लेता है|

देखें रूप यथार्थ सर्वगामी सत चैतन्य ऋषिगन |
होते मुक्त ब्रह्मवादी समझ यह ब्रह्म ज्ञान पावन ||
समझो यही मूल आदि कारण हेतु प्रकृत्ति उत्पन्न || (११-२०)

भावार्थः ऋषिगण इसे यथार्थ स्वरुप, सर्वगामी, सत्य एवं चैतन्य देखते हैं| ब्रह्मवादी इस पवित्र ब्रह्म ज्ञान को समझ मुक्त हो जाते हैं| प्रकृति के उत्पन्न होने का यही प्राथमिक मूल कारण है|

हुआ प्राप्त संगति जो इससे पुरुष कूटस्थ निरंजन |
पर ढका अज्ञान सम्बन्ध नित्य सत स्वरुप चेतन ||
नहीं समझता वह तत्व से है आत्मा ब्रह्म निरूपन || (११-२१)

भावार्थः इससे संगति को प्राप्त हुआ उच्चतम माया-रहित पुरुष जब नित्य सत्य आत्मा के सम्बन्ध में अज्ञान से ढका हो तब तत्व से वह आत्मा को ब्रह्म स्वरुप नहीं समझता|

समझ अनात्मा सम रूप आत्मा होता दुःखी वह जन |
हैं राग द्वेष काम क्रोध आदि हों भ्रान्ति से उत्पन्न || (११-२२)

भावार्थः अनात्मा (संसार) को आत्मा रूप के समान समझ वह दुःखी होता है| राग, द्वेष, काम, क्रोध आदि सब भ्रान्ति से उत्पन्न होते हैं|

करते वेद निश्चित धर्म अधर्म आधार कर्म जन |
लें जन्म विभिन्न योनि फल स्वरुप कर्म सब भूजन || (११-२३)

भावार्थः वेद प्राणियों के कर्मों के अनुसार धर्म अधर्म निश्चित करते हैं| कर्मों के फल स्वरुप सभी प्राणी विभिन्न योनियों में जन्म लेते हैं|

यद्यपि है   आत्मा दिव्य   सर्वत्रगामी और पावन |
है एक रूप पर हो अनुभव भ्रमवश असंख्य वर्पन् ||
दोष-रहित जन भी समझें भ्रमवश अनेक निरूपन || (११-२४)

भावार्थ: यद्यपि आत्मा दिव्य, सर्वत्रगामी, पवित्र और एक रूप है परन्तु भ्रमवश असंख्य रूप में दिखती है| दोष-रहित पुरुष भी असंख्य रूप में मायावश देखते हैं|

कहते रूप अद्वैत परमार्थ से इसे ज्ञानी मुनिजन |
करें भेद द्वैत अद्वैत हेतु भ्रम सामान्य भूजन || (११-२५)

भावार्थ: परमार्थ से इसे ज्ञानी मुनि अद्वैत (एक रूप) कहते हैं| द्वैत (द्वि रूप) और अद्वैत (एक रूप) में भेद साधारण प्राणी मायावश करते हैं|

जैसे छा जाती जब धूम होता तब श्यामल गगन |
पर नहीं इसमें दोष कोई नभ जानते प्राज्ञ जन ||
सादृश्य हों भाव अशुद्ध होती नहीं आत्मा मलिन || (११-२६)

भावार्थ: जैसे जब धुआं छा जाता है तो आकाश काला दिखाई देता है पर ज्ञानी जानते हैं कि इसमें आकाश का कोई दोष नहीं होता, उसी प्रकार यदि भाव अपवित्र हो जाएं तो आत्मा मलिन नहीं होती|

जैसे होती है पारदर्शी मणि प्रकाशित स्व-द्योतन |
सादृश्य होती प्रबुद्ध आत्मा जो निष्कलंक पावन || (११-२७)

भावार्थ: जैसे पारदर्शी मणि अपनी प्रभा से प्रकाशित होती है उसी प्रकार आत्मा जो निष्कलंक और पवित्र है, प्रबुद्ध होती है|

देखें विद्वान् यह जगत विनाशी ज्ञान रूप नयन |
देखें इसे भौतिक स्वरुप कुबुद्धि अज्ञानी जन || (११-२८)

भावार्थ: विद्वान् ज्ञान रूपी नेत्रों से इस संसार को विनाशी देखते हैं जब कि अज्ञानी कुबुद्धि प्राणी इसे पदार्थ रूप (अनात्मवाद) में देखते हैं|

है आत्मा निर्गुण सर्वव्यापी स्वभाव से चेतन |
देखें इसे लिप्त लौकिक मूढ़ भ्रमित बुद्धि जन || (११-२९)

भावार्थ: आत्मा निर्गुण,सर्वव्यापी और स्वभाव से चेतन है| जो इसे सांसारिकता में लिप्त देखते हैं वह मूर्ख भ्रमित बुद्धि वाले हैं|

जैसे देख सकें स्पष्ट पार पारदर्शी मणि भूजन |
पर दिखे रंगीन यदि हुई मणि कलुषित धातु कन ||
सादृश्य परम पुरुष देखें दैह्य दोष-रहित पावन ||
पर सामान्य जन देखें लौकिक इन्हें हेतु तन-बंधन || (११-३०)

भावार्थ: पारदर्शी मणि के आर पार प्राणी स्पष्ट देख सकता है, परन्तु यदि मणि धातु के कणों से कलुषित हो गई है, तो रंगीन दिखाई देती है| उसी प्रकार परम पुरुष आत्मा को दोष-रहित पवित्र देखते हैं पर सांसारिक प्राणी शरीर के बंधन के कारण अर्थ स्वरुप देखते हैं|

समझो आत्मा अक्षर शुद्ध नित्य सर्वग अविनाशन |
है यह योग्य पूजन मानन और ज्ञेय हेतु मुमुक्षजन || (११-३१)

भावार्थ: आत्मा को अक्षर, शुद्ध, नित्य, सर्वव्यापी और अविनाशी समझो| यह मुमुक्षजनों (मोक्ष की इच्छा रखने वाली प्राणी) के लिए पूजन, सम्मान और जानने योग्य है|

होता जब प्रादुर्भाव सर्वगामी चैतन्य अंतर्मन |
हो व्यवधान रहित पा जाता योगी स्वसंवेदन || (११-३२)

भावार्थ: जब हृदय में सर्व व्यापक चैतन्य का प्रादुर्भाव हो जाता है तब योगी रुकावटों से रहित होकर आत्म-ज्ञान पा लेता है|

देखता स्वरुप स्वयं जब योगी सर्वत्र जल भूजन |
करता अनुभव स्व-आत्मा करती निवास सब जीवन ||
कर लेता प्राप्त तब वह ब्रह्म जो ध्येय मनुज तन || (११-३३)

भावार्थः जब योगी सर्वत्र जल और पृथ्वी के प्राणियों में स्वयं का स्वरुप देखता है, और अनुभव करता है कि मेरी आत्मा ही प्रत्येक प्राणी में निवास करती है, तब वह ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है जो मनुष्य शरीर का ध्येय है|

हो जाता प्रमत नहीं करे भेद स्वयं और अन्य जन |
हो एकीभूत तब करे प्राप्त मोक्ष और लोक भगवन || (११-३४)

भावार्थः बुद्धिमान होकर तब वह स्वयं और अन्य प्राणियों में भेद नहीं करता| एकीकृत (एक भाव) हो तब वह मोक्ष और साकेत धाम की प्राप्ति कर लेता है|

तब हो विरक्त कामना हो जाता वह पंडित पावन |
निःसंदेह पा अमरत्व होता शान्त उस सुभग का मन || (११-३५)

भावार्थः तब इच्छा रहित होकर वह पवित्र ज्ञानी हो जाता है| अमरता को प्राप्त कर निःसंदेह वह सुभग मन की शान्ति पा जाता है (यहां प्रभु श्रीराम ने अमरता शब्द का प्रयोग संभवतः मोक्ष के लिए किया है)|

जब देखे असंख्य भूत हो एकीकृत स्थित एक आसन |
यह विवेक दे योगी विस्तार से ब्रह्म-ज्ञान पावन || (११-३६)

भावार्थः असंख्य भूतों (प्राणियों) को एकीकृत हो एक स्थान पर देखने का विवेक योगी को विस्तार से पवित्र ब्रह्मज्ञान देता है|

जब देखे हम सब एक परमार्थ स्वरुप से योगीजन |
है जग मात्र माया हो जाती तुरंत निवृति उस महन || (११-३७)

भावार्थः जब योगी परमार्थ से सब को एक स्वरुप में और संसार को मात्र माया देखता है, तब उस महात्मा को तुरंत मोक्ष मिल जाता है|

है एक औषधि जन्म मरण वृद्ध अवस्था सभी शोचन |
प्राप्ति ब्रह्मज्ञान से ही हो सके मनुज शिव पावन || (११-३८)

भावार्थ: जन्म, मरण, वृद्ध अवस्था सभी दुःखों की एक औषधि है| ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जिससे मनुष्य सौम्य और पवित्र हो जाए|

होती प्राप्त एकता मिल जाती जब नदी जल-लवन |
सादृश्य हो प्राप्त एकता मिले जब आत्मा भगवन || (११-३९)

भावार्थ: जब नदी समुद्र में मिल जाती है तो एकता को प्राप्त होती है| उसी प्रकार जब आत्मा भगवान् से मिल जाती है तो एकता को प्राप्त होती है|

अल्प ज्ञान सम्बन्ध आत्मा होता हेतु अज्ञान उत्पन्न |
हो व्याकुल अज्ञान देखे जग लोकमय भ्रमित जन || (११-४०)

भावार्थ: आत्मा के बारे में अल्प ज्ञान अज्ञान के कारण उत्पन्न होता है| अज्ञान से व्याकुल हो भ्रमित प्राणी संसार को लोकमय (पदार्थ वाला) देखता है|

आत्म-ज्ञान है सूक्ष्म निर्विकल्प अविनाशी पावन |
मोह अज्ञान वश भ्रमित समझे इसे अन्य निरूपन ||
कहती श्रुति आत्म- ज्ञान ही है विज्ञान पुत्र-पवन || (११-४१)

भावार्थ: आत्म-ज्ञान सूक्ष्म, स्थिर मति, अविनाशी और पवित्र है| इसे मोह और अज्ञानवश भ्रमित प्राणी अन्य स्वरुप में समझते हैं| हे हनुमान, श्रुति (वेद आदि) आत्म-ज्ञान को ही विज्ञान (विशेष ज्ञान) कहते हैं|

है यह परम उत्तम सांख्य ज्ञान सार श्रुति ग्रंथन |
लक्ष्य योग समझो करना केंद्रित एक चित्त में मन || (११-४२)

भावार्थ: यह अति श्रेष्ठ वेद ग्रंथों का सार सांख्य ज्ञान है| इस योग का लक्ष्य मन को एक चित्त में केंद्रित करना है (अर्थात मन को एकाग्र करना है)|

दे योग ज्ञान जिस हेतु हो परिपक्व विज्ञान वयुन |
होता नहीं कुछ भी दुर्लभ हेतु युक्त विज्ञान जन || (११-४३)

भावार्थ: योग ज्ञान देता है जिससे विज्ञान का बोध परिपक्व होता है| विज्ञान प्राप्त पुरुष को कुछ भी दुर्लभ नहीं होता|

समझो पथ सांख्य योग ही श्रेष्ठ हेतु महत योगिन |
समझ सांख्य योग जो देखे एकता वही सत्य महन || (११-४४)

भावार्थ: सांख्य योग ज्ञान ही योगियों के लिए श्रेष्ठ मार्ग है| जो सांख्य योग्य समझ एकता देखता है, वही सत्य महात्मा है|

है चाह धन धान्य यश सुभग शक्ति जिन योगी मन |
फंसते वह अधम अपने व्यूह करते स्वयं का पतन || (११-४५)

भावार्थ: जिन योगी को धन-धान्य, यश, भाग्य, शक्ति (आदि) की इच्छा है, वह अधम अपने ही व्यूह में फँस अपना पतन करते हैं|

है सर्वगत दिव्य अचल युक्त ईश भाव आत्मा पावन |
दे सांख्य यह सत ज्ञान जो दे लक्ष्य मनुज बाद मरन || (११-४६)

भावार्थ: पावन आत्मा सर्वगत, दिव्य अचल और ईश्वर भाव से युक्त है| सांख्य यह सत्य ज्ञान देता है जिससे मनुष्य मरण पश्चात अपने ध्येय को प्राप्त कर लेता है (अर्थात मोक्ष पा जाता है)|

हूँ मैं ही वह अव्यक्त आत्मा पुरुषोत्तम भगवन |
कहते वेद जिसे सर्वात्मा सर्वतोमुख हे महन || (११-४७)

भावार्थ: हे महात्मा, मैं ही वह पुरुषोत्तम भगवान् अव्यक्त आत्मा हूँ जिसे वेद सर्वात्मा और सभी स्थानों में स्थित (सर्वतोमुख, जिसका मुख हर स्थान पर हो) कहते हैं|

हूँ मैं युक्त सर्व-काम सर्व-गंध सर्व-रस रहित-मरन |
स्थित सब ओर मेरे कर पग हूँ अन्तर्यामी सनातन || (११-४८)

भावार्थ: मैं ही सर्व काम, सर्व गंध, सर्व रस से युक्त अमर हूँ| मैं सनातन अन्तर्यामी हूँ| मेरे हाथ और पैर हर दिशा में स्थित हैं|

चलूँ अति वेग बिन पद हूँ स्थित मैं सभी के मन |
देखूं बिन नेत्र और बिन कर्ण सुनूं मैं सूक्ष्म ध्वन् || (११-४९)

भावार्थ: सभी के हृदय में स्थित मैं बिना पग के तीव्र चलता हूँ, बिना नेत्र के देखता हूँ और बिना कान के सूक्ष्म ध्वनि सुनता हूँ|

नहीं जानता कोई मुझे पर जानूं मैं सब जन |
कहते तत्वदर्शी मुझे श्री पुरुषोत्तम भगवन || (११-५०)

भावार्थ: मुझे कोई नहीं जानता परन्तु मैं सब प्राणियों को जानता हूँ| तत्त्व-ज्ञाता मुझे श्री पुरुषोत्तम भगवान् कहते हैं|

है मेरा स्वरुप निष्कलंक युक्त ऐश्वर्य पावन |
हो मोहित माया नहीं समझ सकते मुझे सुर भूजन || (११-५१)

भावार्थ: मेरा स्वरूप निष्कलंक, ऐश्वर्य युक्त और पवित्र है| माया से मोहित हुए देव और प्राणी मुझे नहीं समझ सकते|

पा सकें केवल मुमुक्ष दर्शन मेरे इस गुह्यतम तन |
कर प्रवेश इस तन पा जाएं तत्वदर्शी निर्मोचन || (११-५२)

भावार्थ: मेरे इस गहन रहस्यमयी शरीर के मुमुक्ष (मोक्ष की इच्छारखने वाले) ही दर्शन कर सकते हैं| तत्वदर्शी इसमें प्रवेश कर मोक्ष प्राप्त करते हैं|

हैं नहीं जो लिप्त लौकिक माया हे पुत्र-पवन |
हो समाहित मुझ में पा जाएं निर्वाण परम पावन || (११-५३)

भावार्थः हे हनुमान, जो सांसारिक माया में लिप्त नहीं हैं वह मुझ में समाहित हो परम पवित्र मोक्ष को प्राप्त करते हैं|

नहीं हो जन्म-मरण सौ कल्प में भी उन भक्त भूजन |
हो संभव हेतु कृपा मेरी है यही वेद श्रुति कथन || (११-५४)

भावार्थः उन भक्त प्राणियों का सौ कल्प में भी जन्म-मरण नहीं होता| यह मेरी कृपा से संभव है, ऐसा ही वेद और श्रुति कहते हैं|

यह गुह्यतम सांख्य ज्ञान जो किया मैंने अभी वर्णन |
दो नहीं हनुमंत कभी यह गुह्यतम ज्ञान अयोग्य जन || (११-५५)

भावार्थः हे हनुमान, जो मैंने अभी अति रहस्यमयी सांख्य ज्ञान का वर्णन किया, इस रहस्यमयी ज्ञान को अयोग्य प्राणी को कभी नहीं दो|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'राम का सांख्य योग वर्णन करना' नाम एकादस सर्ग समाप्त |

द्वादश सर्ग
उपनिषद कथन

हे विप्र श्रेष्ठ कहने लगे फिर रामचंद्र भगवन |
अव्यक्त से काल और उससे हुए परम पुरुष उत्पन्न || (१२-१)

भावार्थ: भगवान् रामचंद्र फिर कहने लगे, 'हे श्रेष्ठ विप्र (विप्र रूप में श्री हनुमान), अव्यक्त (नारायण) से काल और उससे परम पुरुष उत्पन्न हुए|'

हैं परम पुरुष ही उत्तरदायी जनन सब भुवन |
इनके कर पग सर और मुख हैं चहुँ ओर परिज्मन् || (१२-२)

भावार्थ: परम पुरुष ही सब जगत के जन्म के उत्तरदायी हैं| इनके हस्त, पग, सर, मुख सर्वव्यापी चारों ओर हैं|

सुन सकें सूक्ष्म स्वर कर्ण स्थित सब ओर परम भगवन |
करें सेवन सब इन्द्रिय यद्यपि हैं रहित-इन्द्रिय महन || (१२-३)

भावार्थ: परम् भगवान् सूक्ष्म स्वर भी सुन सकते हैं| उनके कान सब ओर स्थित हैं| वह श्रेष्ठ सभी इन्द्रियों का सेवन करते हैं यद्यपि इन्द्रिय-रहित हैं|

हैं वह सर्वाधार स्थित सदैव परमांनद अवर्णन |
परे इन्द्रिय और प्रमाण हैं अद्वैत अतुल्य पावन || (१२-४)

भावार्थ: वह सब के आधार, सदैव परमानंद में स्थित, अव्यक्त, अद्वैत (एकाकार), अतुल्य, पवित्र, इन्द्रिय और प्रमाण से रहित हैं|

समझो उन्हें निर्विकल्प निराभास सर्वव्यापिन् |
परम अमृत शाश्वत ध्रुव समान दृढ़ अविध्वंसन || (१२-५)

भावार्थ: उन्हें निर्विकल्प (जिनका कोई विकल्प नहीं), निराभास (अदृश्यनीय), सर्वव्यापी, श्रेष्ठ अमृत, सनातन, ध्रुव समान दृढ़ और अविनाशी समझो|

हैं वह निर्गुण गगन समान अनंत कवि विचक्षन |
परे भेद भाव बाह्य अंदर सर्व भूतात्मा समदर्शिन || (१२-६)

भावार्थ: वह निर्गुण, आकाश के समान अनंत, बुद्धिमान, सब प्राणियों की आत्मा, बाहर-अंदर के भेद भाव से परे, समदर्शी हैं|

हूँ मैं वही सर्वत्रगामी शांत ज्ञानात्मा भगवन |
हूँ अव्यक्त पर किया विस्तार मैंने ही सब भुवन || (१२-७)

भावार्थ: मैं वही सर्वत्र गामी, शांत, ज्ञानात्मा ईश्वर हूँ| अव्यक्त हूँ, पर मैंने ही संसार का विस्तार किया है (अर्थात मैंने ही संसार का सृजन किया है)|

रहते सब प्राणी स्थित मेरे ही अति सूक्ष्म वर्पन् |
मैं रूप दोनों ब्रह्म और पुरुष कहें वेद विचक्षन् || (१२-८)

भावार्थ: मेरे ही अति सूक्ष्म स्वरुप में सब प्राणी स्थित हैं|मैं दोनों, ब्रह्म और पुरुष, रूप में हूँ, वेद ज्ञानी कहते हैं|

काल करे संयोग मध्य पुरुष और ब्रह्म हे ब्राह्मन |
हैं स्थित यह तीन अनादि अव्यक्त अनंत निरूपन || (१२-९)

भावार्थ: हे ब्राह्मण (विप्र रूप धारी हनुमान), पुरुष और ब्रह्म का मिलन कराने वाला काल है| यह तीनों (पुरुष, ब्रह्म और काल) अनादि, अव्यक्त और अनंत रूप में स्थित हैं (अर्थात इनका न कोई प्रारम्भ है, न अंत है, न इनका विवरण किया जा सकता है और यह अनंत हैं)|

हैं यह विस्तार मेरे ही सुनो यह ज्ञान अति गहन |
हूँ मैं ही सृजक विश्व हो वह पुरुष या भूजन || (१२-१०)

भावार्थ: यह सब मेरे ही विस्तार हैं, यह रहस्यमयी ज्ञान सुनो| मैं ही इस विश्व का सृजक हूँ चाहे वह पुरुष (महत) हो या (साधारण) प्राणी|

कहते वेद ग्रन्थ करती प्रकृति मोहित सभी जन |
स्थिति प्रकृति भोगता मनुज दिए जो प्रकृति गुन || (१२-११)

भावार्थ: वेद और ग्रंथ कहते हैं कि प्रकृति सभी प्राणियों को मोहित करती है| प्रकृति में स्थित हुआ (अर्थात मोहित हुआ), वह प्रकृति के द्वारा दिए गुण (सत, रजस और तमस) का भोग करता है|

मदवश समझे जब मनुज कि किया उसने जग सृजन |
समझे हैं भिन्न तत्व नाना और किए जिसने वह उत्पन्न ||
हो अहंकारी समझे विश्व विधाता स्वयं सम भगवन ||
कहें वेद हैं समाहित दोष पूर्ण पच्चीस तत्व उस जन || (१२-१२)

भावार्थ: अहंकारी हो जब प्राणी समझे कि उसने विश्व का सृजन किया है, भिन्न प्रकार के तत्व और उनको उत्पन्न करने वाला (ईश्वर) भिन्न है, अहंकार में स्वयं को विश्व विधाता और भगवान् के समान समझे तो वेद कहते हैं कि उस प्राणी में २५ दोष पूर्ण तत्व समा गए हैं|

(पच्चीस मल दोष निम्न हैं| देवमूढ़ता, लोकमूढ़ता और समयमूढ़ता ये तीन मूढ़ता हैं| ज्ञान, पूजा, कुल, जाति, बल, ऋद्धि, तप और रूप इन आठों का आश्रय लेकर घमण्ड करना मद है| इन आठ के भेद से मद के भी आठ भेद हो जाते हैं| मिथ्यादेव, मिथ्यातप, मिथ्याशास्त्र तथा इनके तीनों के आराधक ये छह अनायतन कहलाते हैं| शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, मूढ़दृष्टि, अनुपगृहन, अस्थितीकरण, अवात्सल्य और अप्रभावना यह आठ शंकादि दोष हैं| इस प्रकार ३ मूढ़ता, ८ मद, ६ अनायतन और ८ शंकादि दोष ये पच्चीस दोष|)

बोध विज्ञान से संभव कर सके प्राप्त सत ज्ञान भूजन |
कर प्राप्त यह दिव्य ज्ञान हो रहित-अहंकार विचक्षन || (१२-१३)

भावार्थ: विज्ञान (तार्किक, नियम बद्ध, अनुभव सिद्ध, युक्तार्थ) के बोध से प्राणियों को सत्य का ज्ञान होता है| इस दिव्य ज्ञान को प्राप्त कर (विज्ञान का बोध कर) वह अहंकार-रहित और बुद्धिमान हो जाता है|

कह अंतरात्मा करते ज्ञानी ऐसे जन का महिमा मंडन |
वही महत जो समझ सके तत्व सुख दुःख इस जीवन || (१२-१४)

भावार्थ: तत्वदर्शी ऐसे प्राणी को अंतरात्मा कह उसकी प्रशंसा करते हैं| वही बुद्धिमान है जो जीवन के सुख दुःख को समझ सकता है|

है वही ज्ञाता विज्ञान रहता उसका प्रफुल्लित मन |
समझता वह हैं अविवेक अज्ञान हेतु संसार बंधन || (१२-१५)

भावार्थ: वही विज्ञान को जानने वाला है| उसका हृदय आनंदित रहता है| वह समझता है कि अविवेक, अज्ञान संसार बंधन का कारण है|

हेतु अज्ञान प्रकृति अविवेक करे उसे काल नियंत्रन |
हो प्रकट यह काल करता संहार जग और भूजन || (१२-१६)

भावार्थ: अज्ञान, प्रकृति अविवेक (अर्थात प्रकृति को भली भांति न समझने के कारण) के कारण काल उसे नियंत्रित करता है| यह काल प्रकट होने पर विश्व और प्राणियों का संहार कर देता है|

हैं सब वश काल पर काल नहीं वश किसी भी भूजन |
जो करे नियंत्रण काल कर धारण मन हरि वह पावन || (१२-१७)

भावार्थ: सब काल के वश में हैं, परन्तु काल किसी भी प्राणी के वश में नहीं है| काल को नियंत्रण कर जिनके मन में हरि बसते हैं वही पावन हैं|

कहें वेद इन्हें सर्वात्मा प्राण सर्वज्ञ भग गुण संपन्न |
है मन उत्तम और भिन्न अपेक्षित अन्य अंग कहें महन || (१२-१८)

भावार्थ: वेद इन्हें सर्वात्मा, प्राण, सर्वज्ञ और भग गुणों से संपन्न (ईश्वर) कहते हैं| विद्वान कहते हैं कि मन अन्य अंगों से भिन्न एवं सर्वोत्तम है|

भग गुण हैं, १. पूर्ण ज्ञान, २. पूर्ण बल, ३. पूर्ण धन, ४. पूर्ण यश, ५. पूर्ण सौंदर्य और ६. पूर्ण त्याग।

है मन से उच्च अहंकार और अहंकार से उच्च महिमन् |
महिमन् से उच्च अव्यक्त उच्च पुरुष इनसे हे हनुमन || (१२-१९)

भावार्थ: हे हनुमान, मन से ऊंचा अहंकार और अहंकार से ऊंची महानता है| अव्यक्त महानता से ऊंचे हैं और इससे ऊंचे पुरुष हैं|

हैं प्राण उच्च पुरुष से कहते वेद जिन्हें वृषन् |
हैं इन्हीं के वशीभूत समस्त विश्व और भूजन ||
है नभ उच्च इनसे और सबसे उच्च हैं स्वयं भगवन || (१२-२०)

भावार्थ: पुरुष से उच्च प्राण हैं जिन्हें वेद स्वामी कहते हैं| इन्हीं के वश में समस्त विश्व और सब प्राणी हैं| इनसे उच्च आकाश है और सबसे उच्च स्वयं भगवान् हैं|

हूँ मैं यह सर्वोच्च सर्वगामी ज्ञान आत्मा महन |
प्राप्त ज्ञान मेरा हो जाता नर मुक्त जीवन मरन || (१२-२१)

भावार्थ: मैं यह सर्वोच्च, सर्वगामी, ज्ञानात्मा और महात्मा हूँ| प्राणी मेरे ज्ञान से जीवन मरण से मुक्त हो जाता है (अर्थात मोक्ष प्राप्त कर लेता है)|

है नहीं नित्य हो चर अथवा अचर जीव इस भुवन |
हूँ मैं ही एक ईश्वर जो विस्तारित रूप सम गगन || (१२-२२)

भावार्थ: इस पृथ्वी पर चर अथवा अचर जीव नित्य (अमर) नहीं है| मैं ही एक ईश्वर हूँ जो आकाश के सम रूप विस्तारित है (सर्वव्यापी है)|

समझो हूँ मैं ही कर्ता सृजन और संहार त्रिभुवन |
होते काल सहायक मेरे करूँ जब यह कर्म विलक्षन || (१२-२३)

भावार्थ: यह समझो कि मैं ही तीनों लोकों का सृजन और संहार करता हूँ| मेरे इस विलक्षण कार्य में सहायक काल होते हैं|

करते काल कार्य सृजन हनन पा मेरा निर्देशन |
करे काल यह संग आत्मा है यही वेद अनुशासन || (१२-२४)

भावार्थ: मेरे आदेश से काल यह सृजन और संहार कार्य करता है| काल के साथ आत्मा यह (कार्य) करती है, ऐसा ही वेद ज्ञान है|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'उपनिषद कथन' नाम द्वादश सर्ग समाप्त|

त्रयोदश सर्ग
राम का भक्तियोग कथन

हो सावधान चित्त सुनो वृतांत अब पुत्र-पवन |
होते उत्पन्न जिससे असंख्य जंतु हूँ मैं प्रभवन || (१३-१)

भावार्थ: हे पवन-पुत्र, सावधान मन से यह वृतांत सुनो| जिससे असंख्य जंतु उत्पन्न होते हैं, वह आश्रय मैं ही हूँ|

नहीं होता प्राप्त मैं हेतु दान यज्ञ और तप गहन |
कर सकें प्राप्त मुझे करें जो मेरी भक्ति अनन्य मन || (१३-२)

भावार्थ: मैं किसी दान, यज्ञ या गहन तप से प्राप्त नहीं होता| जो मेरी भक्ति अद्वैत मन से करते हैं, मैं उन्हीं को प्राप्त होता हूँ|

हूँ मैं सर्वगामी स्थित सर्व भाव हेतु जन्म मरन |
नहीं संभव जान सकें मुझे मुग्ध लौकिक भूजन || (१३-३)

भावार्थ: मैं सर्वगामी हूँ, सर्व भावों में स्थित हूँ, जन्म-मरण का कारण हूँ| यह संभव नहीं कि मोहित सांसारिक प्राणी (सांसारिकता में लिप्त) मुझे जान सकें|

समझो मुझे आध्यात्मिक परे सब भाव त्रिभुवन |
हूँ मैं सृजक पोषक संहारक करूँ भाग्य निर्धारन || (१३-४)

भावार्थ: तीनों लोकों में सभी भावों से परे मुझे आध्यात्मिक समझो| मैं सृजक, पोषक, संहारक और भाग्य निर्माता हूँ|

मनु इन्द्र सहित अन्य उच्चतम देव मुनि ब्राह्मन |
है नहीं कोई इनमें समर्थ कर सकें मेरा दर्शन || (१३-५)

भावार्थ: मनु, इंद्र अन्य उच्च देवताओं सहित, मुनि, ब्राह्मण कोई भी इनमें मेरे दर्शन करने के लिए समर्थ नहीं है|

कहें सब वेद आदि ग्रन्थ करो केवल मेरा ही पूजन |
हूँ मैं ही ईश्वर करें ब्राह्मण जिनका यज्ञ से यजन || (१३-६)

भावार्थ: वेद आदि सभी ग्रन्थ कहते हैं कि केवल मेरा ही पूजन करो| मैं ही ईश्वर हूँ जिसका ब्राह्मण यज्ञ द्वारा यजन करते हैं|

ब्रह्मलोक में करते सब वासी नमन चतुरानन |
पर योगी भूताधिपति नित्य करें हिय से मेरा भजन || (१३-७)

भावार्थ: ब्रह्मलोक के वासी ब्रह्मदेव को नमन करते हैं परन्तु योगी, उत्तम प्राणी हृदय से मेरा नित्य भजन करते हैं|

हूँ मैं ही भोक्ता यज्ञ और देता फल कर्म पावन |
हूँ सर्वात्मा करें सब देव स्तुति मेरे इस दिव्य तन || (१३-८)

भावार्थ: मैं ही यज्ञ का भोक्ता हूँ और पावन कर्मों का फल देता हूँ| मैं सर्वात्मा हूँ जिसकी इस दिव्य शरीर में सभी देवता स्तुति करते हैं|

धर्मात्मा वेदवादी महत कर सकें मेरा दर्शन |
रहूँ सदैव निकट उन भक्त करें जो मेरा भजन || (१३-९)

भावार्थ: धर्मात्मा, वेदज्ञाता, महात्मा मेरे दर्शन कर सकते हैं| जो मेरी उपासना करते हैं, ऐसे भक्तों के मैं सदा निकट रहता हूँ|

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य आदि करे जो मेरा भजन |
हैं वह धर्मात्मा दूँ उन्हें परमानंद और निर्मोचन || (१३-१०)

भावार्थ: ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि जो मेरा भजन करता है, वह धर्मात्मा है| उसे मैं परमानंद और मोक्ष देता हूँ|

हों दुष्ट नीच संलग्न विकर्म करें जब मेरा भजन |
हो निकट मेरे पा सकें वह उच्च पद सम निर्मोचन || (१३-११)

भावार्थ: दुष्ट, नीच, दुष्कर्म में संलग्न, जब मेरा भजन करते हैं, वह मेरे समीप आ मोक्ष सम उच्च पद पा सकते हैं|

हो जाते रहित-अघ मेरे भक्त है यह मेरा वचन |
नहीं होता नाश उनका जब काल प्रलय पुत्र-पवन || (१३-१२)

भावार्थ: यह मेरा वचन है कि मेरे भक्त पापहीन हो जाते हैं| हे हनुमान, उनका प्रलय काल में भी नाश नहीं होता|

जो मूढ़ आलोचक मम भक्त है समान जन दुर्जन |
करे जो पूजन मम भक्त करता वह मेरा ही पूजन || (१३-१३)

भावार्थ: जो मूढ़ मेरे भक्त की निंदा करता है, वह दुष्ट व्यक्ति के समान है| जो मेरे भक्त का पूजन करता है, वह मेरी ही पूजा करता है |

करते हुए नमन मुझे करे जो पत्र पुष्प फल जल अर्पन |
है वह मेरा प्रिय भक्त करूँ मैं उसके पूर्ण मन्मन् || (१३-१४)

भावार्थ: मुझे नमन करते हुए जो पत्र, पुष्प, फल, जल अर्पण करता है, वह मेरा प्रिय भक्त है| उसकी इच्छाओं को मैं पूर्ण करता हूँ|

हेतु जग उत्पत्ति करूँ सृजन आदि काल चतुरानन |
करूँ प्रदान वेदादि ग्रन्थ निकले जो मेरे आनन || (१३-१५)

भावार्थ: आदि काल में विश्व की उत्पत्ति के लिए ब्रह्मा का सृजन करता हूँ| वेदादि ग्रन्थ को प्रदान करता हूँ जो मेरे मुख से निकले हैं|

हूँ मैं ही अविनाशी गुरु सभी योगी महन |
हूँ रक्षक धर्मात्मा और नाशक द्वेषी वेद पावन || (१३-१६)

भावार्थ: मैं ही बुद्धिमान योगियों का अविनाशी गुरु हूँ, धर्मात्माओं का रक्षक और पवित्र वेदों के द्वेषी का नाशक हूँ|

देता योगीगण मैं ही ज्ञान योग तप और निर्मोचन |
हूँ यद्यपि रहित जग पर हूँ मैं ही हेतु जग सृजन || (१३-१७)

भावार्थ: योगियों को मैं ही योग ज्ञान, तप और मोक्ष देता हूँ| यद्यपि संसार से अलिप्त हूँ, परन्तु संसार की उत्पत्ति का कारण हूँ|

हूँ मैं ही सृजक पालक संहारक हे पुत्र-पवन |
करे भ्रमित मेरी माया सब सुर असुर और भूजन || (१३-१८)

भावार्थ: हे हनुमान, मैं ही सृजक, पालक और संहारक हूँ| मेरी माया सभी सुर, असुर और प्राणियों को मोहित करती है|

हूँ मैं ही ज्ञान विद्यमान हृदय जो ज्ञानी पावन |
करूँ मैं ही दूर माया छल हो स्थित योगी के मन || (१३-१९)

भावार्थ: मैं ही पवित्र ज्ञानियों के हृदय में विद्यमान ज्ञान हूँ| योगियों के मन में स्थित हो मैं ही छल, माया को दूर करता हूँ|

करूँ मैं ही प्रवृत्त शक्ति सब योगी और मुनिगन |
हूँ आधारभूत सब और निधि सोम हे रूप ब्राह्मन || (१३-२०)

भावार्थ: मैं ही सब योगी और मुनिगणों में शक्ति प्रवृत्त करता हूँ| हे ब्राह्मण रूप (हनुमान), सबका आधारभूत और अमृत का कोष हूँ|

मेरी सर्वग परम प्रभुत्व शक्ति करती विश्व उत्पन्न |
हूँ मैं ही जगन्नाथ अविनाशी अजर अमर भगवन || (१३-२१)

भावार्थ: मेरी सर्वव्यापी परम प्राधिकारी शक्ति विश्व को उत्पन्न करती है| वह ही अविनाशी अजर अमर भगवान् जगन्नाथ हूँ|

है एक तीसरी शक्ति भी जो करती विश्व विघटन |
है वह तामसी रूद्र रूप कलात्मा विवृति जतिन || (१३-२२)

भावार्थ: एक तीसरी शक्ति भी (प्रथम सृजक, द्वितीय पोषक और तृतीय नाशक) है जो विश्व का विनाश करती है| वह तामसी कलात्मा रूद्र रूप शंकर का स्वरुप है|

समझे कोई मुझे माध्यम ध्यान कोई ज्ञान ब्राह्मन |
कोई कर्मयोग कोई भक्तियोग कोई अन्य साधन ||
पर मुझे अति प्रिय भक्त करे जो पूर्ण समर्पन || (१३-२३)

भावार्थ: हे ब्राह्मण (रूप हनुमान), कोई मुझे ध्यान के माध्यम से समझता है, कोई ज्ञान, कोई कर्मयोग, कोई भक्तियोग, कोई अन्य साधना परन्तु मुझे वह भक्त अति प्रिय है जिसने सम्पूर्ण समर्पण कर दिया है|

करे प्रयास पा सके मुझे माध्यम ज्ञान से जो जन |
नहीं जाता प्रयास व्यर्थ समझो यह यथार्थ वचन ||
पा सके मुझे कोई ज्ञान ध्यान या कर्म विधि पूजन || (१३-२४)

भावार्थ: जो मुझे ज्ञान के माध्यम से पाने का प्रयास करता है, मेरे यथार्थ वचन सुनो, उसका प्रयास व्यर्थ नहीं जाता| किसी भी विधि, ज्ञान,ध्यान या कर्म से मेरा पूजन करने पर मेरी प्राप्ति होती है|

कर लें जो प्राप्त मुझे नहीं होता उनका कभी पतन |
हूँ मैं स्वामी जग जो समझे है वह सम अमृत जन || (१३-२५)

भावार्थ: जो मुझे प्राप्त कर लेते हैं, उनका कभी पतन नहीं होता| मैं विश्व का स्वामी हूँ, जो यह समझते हैं वह अमृत समान प्राणी हैं|

हैं मेरे आधार शाश्वत योग साधना और चिंतन |
कर सके न कोई प्रभावित मुझे हूँ मैं ही भगवन || (१३-२६)

भावार्थ: मेरे आधार शाश्वत योग, साधना और चिंतन हैं| मुझे कोई प्रभावित नहीं कर सकता| मैं ही भगवान हूँ (दूसरों को प्रभावित करता हूँ)|

कहें ग्रन्थ योग रूप जिन माया ईश योगी भगवन |
हूँ मैं वही प्रभु योगेश्वर हे विप्र रूप पुत्र-पवन || (१३-२७)

भावार्थ: हे विप्र रूप धारी पवन-पुत्र, ग्रन्थ जिन माया के स्वामी योगी भगवान् को योग रूप कहते हैं, वह योगेश्वर प्रभु मैं ही हूँ|

जानें हेतु सृजन जग योगी हैं जो दक्ष साधन चिंतन |
समझो हैं महादेव महेश्वर स्वामी योगी तपस्विन || (१३-२८)

भावार्थ: योगी जो साधना और चिंतन में निपुण है, वह विश्व की उत्पत्ति का कारण जानते हैं| महादेव को महा प्रभु समझो वह इन योगी और तपस्वियों के स्वामी हैं|

हैं जो सर्वग ब्रह्म करते निवास दैह्य सब भूजन |
युक्त सतगुण परम भाव कहलाते वह चतुरानन || (१३-२९)

भावार्थ: जो सब प्राणियों की आत्मा में निवास करते हैं, सर्वव्यापी ब्रह्म सतगुण और परम भाव से युक्त हैं उन्हें ब्रह्मा नाम से सम्बोधित किया जाता है|

समझे जो मुझे महायोगेश्वर है वही सत्य प्राज्ञजन |
निःसंदेह रहता वह जन स्थिर अविचलित समय साधन || (१३-३०)

भावार्थ: जो मुझे महायोगेश्वर समझता है, वही सत्य ज्ञानी है| वह निःसंदेह साधना के समय स्थिर और अविचलित रहता है|

हूँ मैं ही शक्ति सभी सुर बलशाली परम भगवन |
रहूँ स्थित नित्य योग समझे जो वह वेद प्राज्ञ जन || (१३-३१)

भावार्थ: मैं ही देवताओं की शक्ति बलशाली ईश्वर हूँ| में नित्य योग मैं स्थित रहता हूँ, जो यह जानता है वह वेद का ज्ञानी है|

है यह सार सभी वेद धर्मवत ग्रन्थ हे ब्राह्मन |
दो यह ज्ञान केवल अग्निहोत्र वेदी प्रसन्न मन जन || (१३-३२)

भावार्थ: हे ब्राह्मण (विप्र रूपधारी), यह वेद और सभी धार्मिक ग्रंथों का सार है| इसे केवल प्रसन्न चित्त अग्निहोत्र वेद ज्ञानी प्राणियों को ही दो|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'राम का भक्तियोग कथन' नाम त्रयोदश सर्ग समाप्त|

चतुर्दश सर्ग
रामचंद्र और महावीर संवाद

हूँ मैं ही हे विप्र सृजक पालक संहारक त्रिभुवन |
समझो मुझे तुम अजर अमर सर्वग नित्य सनातन || (१४-१)

भावार्थ: हे विप्र (विप्र रूप धारी हनुमान), मैं ही तीनों लोकों का सृजक, पालक और संहारक हूँ| मुझे तुम अजर, अमर, सर्वव्यापी, पवित्र और सनातन समझो|

हूँ मैं अन्तर्यामी जनयित्र सभी सुर असुर भूजन |
नहीं स्थित मैं किसी पर स्थित सभी मेरे अंतःकरन || (१४-२)

भावार्थ: मैं सभी सुर, असुर और प्राणियों का अन्तर्यामी पिता हूँ| यह सब मुझ में स्थित हैं, पर मैं किसी में स्थित नहीं हूँ|

जो देख रहे मेरा अद्भुत यह रूप तुम अभी हे सुवन |
स्व-इच्छा और माया से किया मैंने इसका सृजन || (१४-३)

भावार्थ: हे वत्स, जो तुम अभी यह मेरा अद्भुत रूप देख रहे हो (मनुष्य रूप), वह मैंने अपनी इच्छा और माया से रचा है|

हूँ स्थित मैं अंतर सब भाव करूँ प्रेरित त्रिभुवन |
है यह मेरी क्रिया शक्ति समझो तुम पुत्र-पवन || (१४-४)

भावार्थ: मैं ही सब भावों के अंतर में स्थित हूँ| मैं ही विश्व को प्रेरणा देता हूँ| हे पवन-पुत्र, तुम इसे मेरी क्रिया शक्ति समझो|

मेरा सृजित जगत करे सदैव मेरा ही अनुसरन |
करूँ प्रारम्भ उचित काल सृजन मैं ही त्रिभुवन || (१४-५)

भावार्थ: मेरे द्वारा सृजित यह विश्व मेरा ही अनुसरण करता है| उचित समय पर मैं तीनों लोकों का सृजन प्रारम्भ करता हूँ|

है मेरा ही रूप द्वित करे जो संहार कालान्त भुवन |
हूँ मैं रहित आदि मध्य अंत हे धारी रूप ब्राह्मन ||
हूँ मैं ही पति माया करती जो भ्रांतिमय भूजन || (१४-६)

भावार्थ: मेरा दूसरा रूप प्रलय के समय विश्व का संहार करता है| हे ब्राह्मण रूप धारी, मैं आदि, मध्य और अंत से रहित हूँ| जो प्राणियों को मोहित करती है, उस माया का मैं स्वामी हूँ|

हूँ मैं ही विभो हेतु आदि सृष्टि किए प्राप्त क्षोभन |
सर्वग बलशाली हरि और प्रधान पुरुष के मन ||
जिनके परस्पर संयुक्त से हुआ इस विश्व का सृजन || (१४-७)

भावार्थ: मैं ही विभो (भगवान् का अन्य रूप) हूँ जिसके कारण सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वव्यापी, बलशाली भगवान् और प्रधान पुरुष के मन क्षोभित हुए और उनके परस्पर संयुक्त से इस विश्व का सृजन हुआ|

महद आदि रूप मेरे कर रहे मेरा यश परिगमन |
हूँ मैं साक्षी और कर्ता प्रवृत्त कालचक्र भुवन || (१४-८)

भावार्थ: महद (परमात्मा) आदि रूप मेरे यश को फैलाते हैं| मैं विश्व के कालचक्र को प्रवृत्त करने वाला और उसका साक्षी हूँ|

सम स्वरूप सूर्य हिरण्यगर्भ हुए प्रकट मेरे तन |
मैंने ही दिया उन्हें दिव्य पावन ज्ञान सनातन || (१४-९)

भावार्थ: सूर्य के समान स्वरूप वाले (अति ओजस्वी) हिरण्यगर्भ मेरे ही शरीर से उत्पन्न हुए| मैंने ही उन्हें दिव्य पवित्र सनातन ज्ञान दिया|

आदि कल्प मैंने ही किए उत्पन्न श्री चतुरानन |
दिया ज्ञान चतुर्वेद किए तब वह प्रारंभ सृजन ||
हैं वह अनुयायी मेरे करें मेरा हर विधि पालन || (१४-१०)

भावार्थ: कल्प के प्रारम्भ में मैंने श्री ब्रह्मदेव को उत्पन्न किया| उन्हें चारों वेदों का ज्ञान दिया तब उन्होंने (सृष्टि का) सृजन प्रारंभ किया| वह मेरे अनुयायी हैं और मेरी प्रत्येक आज्ञा का पालन करते हैं|

करते धारण मेरा दिव्य ऐश्वर्य रूप चतुरानन |
हैं वह जनयित्र सभी करते सदा मेरी आज्ञा पालन || (१४-११)

भावार्थ: ब्रह्मदेव मेरे दिव्य ऐश्वर्य रूप को धारण करते हैं| वह सभी के सृजक हैं| मेरी आज्ञा का सदैव पालन करते हैं|

कर धारण चार शीश करते ब्रह्मा सृष्टि सृजन |
हूँ मैं अक्षय त्रिलोक ईश अनंत श्रीपति नारायन || (१४-१२)

भावार्थ: चार सर धारण कर ब्रह्मा सृष्टि का सृजन करते हैं| मैं अविनाशी, तीनों लोकों का स्वामी, अनंत (जिसका प्रारम्भ और अंत न पाया जा सके) श्रीपति नारायण हूँ|

है मेरी ही परम मूर्ति जो करे जगत का पालन |
रूद्र भी रूप मेरा करे काल प्रलय जग विघटन || (१४-१३)

भावार्थ: जो संसार का पालन करते हैं, वह मेरा ही परम स्वरुप है| जो प्रलय काल में विश्व का विनाश करते हैं, वह रूद्र भी मेरा ही रूप है|

कर धारण तन रूद्र करूँ मैं विनाश त्रिभुवन |
पक्व पावन भोग हेतु यज्ञ पितृ अर्पन अथवा पूजन || (१४-१४)
पा बल मुझ से ही पकाती अग्नि वह भोग पावन |
है मेरा ही बल जठराग्नि जो पचाती वह भोजन || (१४-१५)

भावार्थ: मैं रूद्र का शरीर धारण कर तीनों लोकों का संहार करता हूँ| जो पवित्र भोग यज्ञ और पितरों के अर्पण के लिए पकता है, अग्नि उस पवित्र भोग को मेरे ही बल से पकाती है| मेरी ही शक्ति से जठराग्नि उस भोजन को पचाती है|

पावक वैश्वानर करती सदा मेरी आज्ञा पालन |
श्रेष्ठ देव वरुण जो हैं संरक्षक और जल स्वामिन् || (१४-१६)
पा बल मेरा देते जीवन करते पालन मेरा निर्देशन |
रहते स्थित जो बाह्य अन्तर् सब नर नारि श्री निरंजन || (१४-१७)
कर पालन मेरी आज्ञा करते वह विश्व का पालन |
सोम जिस हेतु सुर पा सके अमरत्व वह संजीवन || (१४-१८)
किरणें चंद्र देव देतीं जो शीतलता त्रिभुवन |
होता यह सब संभव प्रताप मेरे समझो पुत्र- पवन || (१४-१९)

भावार्थ: पवित्र अग्नि (वैश्वानर) मेरी ही आज्ञा का पालन करती है| जल के संरक्षक और स्वामी श्रेष्ठ वरुण देव मेरी ही आज्ञा से (प्राणियों को) जीवन दान देते हैं (जल प्राप्त कराते हैं) और मेरे निर्देश का पालन करते हैं| जो सब प्राणियों के बाह्य और अन्तःकरण में स्थित हैं, वह श्री निरंजन मेरी ही आज्ञा से विश्व का पालन करते हैं| वह संजीवन अमृत जिसने सब देवताओं को अमरत्व दिया तथा चंद्र देव की किरणें जो तीनों लोकों को शीतलता प्रदान करती हैं, यह सब मेरे ही प्रताप से संभव होता है, हे हनुमान, इसे समझो|

रवि जो करते प्रकाशित विश्व हेतु उज्जवल किरन |
बनते हेतु वर्षा पाकर निर्देश मेरे स्वम्भू निरूपन || (१४-२०)

भावार्थ: सूर्य जो अपनी उज्जवल किरणों से विश्व को प्रकाशित करते हैं, वह मेरे स्वम्भू स्वरुप से निर्देश पा वर्षा के माध्यम बनते हैं|

देते इंद्रदेव शुभ फल यज्ञ पाकर मेरा निर्देशन |
अनुसार विधि रचित मम देते वह दंड दुष्ट दुर्जन || (१४-२१)

भावार्थ: इंद्र देव मेरी आज्ञा से यज्ञ के शुभ फल देते हैं| वह ही मेरे द्वारा बनाये नियमों से दुष्ट प्राणियों को दंड देते हैं|

वैवस्वत मनु यम आदि देव और देवी त्रिभुवन |
हैं जो ईश वैभव ऐश्वर्य आदि और दाता धन || (१४-२२)
देव कुबेर करते पालन सदैव मेरा अनुशासन |
मेरे बल से वह देते शुभ अशुभ फल असुर भूजन || (१४-२३)

भावार्थ: तीनों लोकों में वैवस्वत मनु, यम आदि देव और देवी, कुबेर देव जो वैभव और ऐश्वर्य के स्वामी हैं तथा धन दाता हैं, वह सब मेरी आज्ञा का पालन करते हैं| मेरे बल से ही वह शुभ अशुभ फल असुर और प्राणियों को देते हैं|

करें पालन मेरे नियम निर्धारित निऋति भगवन |
स्वामी भूत वेताल देते वह उन्हें फल कर्म उपपन्न || (१४-२४)

भावार्थ: निऋति भगवान् (शिव शंकर के रूप) मेरे नियमों का पालन करते हैं| वह वेताल, भूतों के स्वामी हैं और उनके कर्मों के उचित फल देते हैं|

हे हनुमान महादेव ईशान हैं मेरा ही वर्पन् |
प्रधान रूद्र वामदेव और संगी हैं मेरे उपसर्जन || (१४-२५)
पा बल मुझ से ही करते यह रक्षा सब योगीगन |
सर्व जग पूजनीय विघ्नहारक श्री गणेश भगवन || (१४-२६)
विनायक धर्म नेता करते कार्य पा मेरा अनुशासन |
ज्ञानी वेद सेनापति सुर सैन्यदल पुत्र जतिन || (१४-२७)
अति बलशाली परम स्कन्द करते मेरी आज्ञा पालन |
प्रजापति मारीच आदि महर्षि करते मेरा पूजन || (१४-२८)

भावार्थ: हे हनुमान, महादेव ईशान मेरे ही रूप हैं| प्रधान रूद्र वामदेव और उनके अनुयायी मेरे अधीन हैं| मेरे ही बल से वह सभी योगियों की रक्षा करते हैं| समस्त विश्व से पूजित विघ्नहारक विनायक धर्म नेता श्री गणेश भगवान् मेरे ही आदेश से कार्य करते हैं| वेदों के ज्ञाता देवताओं की सेना के सेनापति शिव पुत्र महा बलशाली पावन

स्कन्द मेरी आज्ञा का पालन करते हैं| प्रजापति, मारीच आदि महर्षि मेरा ही पूजन करते हैं|

करते सृजन प्रजापति विविध लोक पा मेरा निर्देशन |
देतीं जो नारायणी महाश्री ऐश्वर्य वैभव सर्व जन || (१४-२९)
भार्या जनार्दन करतीं पालन मेरा अनुशासन |
विपुल दाता वाणी सरस्वती हैं मेरी शिष्य-रूपिन् || (१४-३०)
देतीं वर ज्ञान हो प्रेरित निर्देश मेरा पुत्र-पवन |
होता संभव इस ज्ञान करें प्राप्त मोक्ष अनेक जन || (१४-३१)

भावार्थ: प्रजापति (ब्रह्मदेव के पुत्र) मेरा ही निर्देश पा विविध लोकों की रचना करते हैं (नारायण के आदेश पर पिता ब्रह्मा और पुत्र प्रजापति विविध लोकों का उपयुक्त समय पर सृजन करते हैं)| (भगवान्) जनार्दन की पत्नी नारायणी मेरा ही आदेश पा सर्व प्राणियों को धन-धान्य, ऐश्वर्य वैभव देती हैं| विपुल वाणी देने वाली सरस्वती मेरी ही शिष्या रूप हैं| हे हनुमान, वह मेरी आज्ञा से प्रेरित हो ज्ञान का वर देती हैं जिससे अनेक प्राणियों का तर जाना सम्भव होता है|

नहीं देवी सावित्री पृथक मुझ से है यह सत्यापन |
परमा देवी शिवा देतीं जो ज्ञान ब्रह्म त्रिभुवन || (१४-३२)
प्रेरित आज्ञा मेरी देतीं वर यथोचित कर्म जन |
देवाधिपति अनंत शेष करें जन जिनका पूजन || (१४-३३)
मेरा आज्ञा से ही करते धारण स्व-शीश यह भुवन |
विनाशक शाश्वत पावक वडवा जलती प्रशत्त्वन् || (१४-३४)
निगल जाती वृहद सागर पा मेरा ही अनुशासन |
आदित्य वसु रूद्र अश्वनीकुमार हैं मेरे उपसर्जन || (१४-३५)

भावार्थ: सावित्री देवी मुझ से अलग नहीं हैं, यह सत्य कथन है| परम पवित्र देवी पार्वती जो तीनों लोकों को ब्रह्म ज्ञान देती हैं, वह मेरी आज्ञा से प्रेरित हो सब प्राणियों को उनके कर्म अनुसार वर देती हैं| देवाधिपति अनंत शेषनाग जिनका सब प्राणी पूजन करते हैं, वह मेरी आज्ञा से ही अपने सर पर पृथ्वी का धारण करते हैं| विनाशक

शाश्वत अग्नि वडवा सागर में जलती है वह मेरी ही आज्ञा पा महान सागर को निगल जाती है (सुखा देती है)| आदित्य, वसु, रूद्र, अश्वनीकुमार, मेरे आधीन हैं|

गंधर्व उरग यक्ष सिद्ध साध्य और सभी चारन |
सुर आदि त्रिभुवन करते मेरी आज्ञा का पालन || (१४-३६)

भावार्थ: गंधर्व, उरग (पेट के बल चलने वाले जंतु सर्प आदि) यक्ष, सिद्ध, साध्य, सभी जन जाति, देवता आदि तीनों लोकों में मेरी ही आज्ञा का पालन करते हैं|

भूत पिशाच राक्षस हैं आधीन मेरे स्वयम्भू वर्पन् |
काल अंश सम कला काष्ठा निमेष मुहूर्त दिवन् || (१४-३७)
ऋतु वर्ष माह पखवारा युग मन्वन्तर परिकर्षन |
करते सब स्व-कार्य त्रिभुवन पा मेरा निर्देशन || (१४-३८)

भावार्थ: भूत, पिशाच, राक्षस सब मेरे ही स्वयम्भू रूप के आधीन हैं| समय के भाग चक्र जैसे कला (२३१ मिनट), काष्ठा (७२ मिनट), निमेष (तत्काल, पालक झपकने का समय), मुहूर्त दिवस, ऋतु,वर्च, माह,पखवारा, युग, मन्वन्तर (सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग एवं कलियुग के ७१ चक्र) आदि अपने कार्य तीनों लोकों में मेरे निर्देश से ही करते हैं|

सभी काल भेद सम परा विषय परार्द्ध हे हनुमन |
अन्दज स्वदेज उद्भिज जरायुज चतुर्भूत चर अचर जन || (१४-३९)
करें कर्म अनुसार इच्छा मम रूप स्वयंभू भगवन |
है मेरी आज्ञा अलंघ्य समझो भली भांति पुत्र-पवन || (१४-४०)

भावार्थ: हे हनुमान, सभी काल भेद जैसे अलौकिक, परार्द्ध (ब्रह्मदेव के जीवन का अर्ध काल), अन्दज (अंडे से उत्पन्न प्राणी जैसे पक्षी), स्वदेज (पसीने और आर्द्रता से उत्पन्न प्राणी जैसे जीवाणु, फफूंद आदि), उद्भिज (बीज से उत्पन्न जीव जैसे पौधे, वृक्ष आदि), जरायुज (गर्भ से उत्पन्न होने वाले प्राणी जैसे मनुष्य) सभी चारों प्रकार के चर अचर प्राणी मेरे रूप भगवान् स्वयंभू की इच्छा से ही कर्म करते हैं| हे पवन पुत्र, मेरी आज्ञा को टाला नहीं जा सकता, यह भली भांति समझो|

पा बल मेरा किए अनेक ब्रह्माण्ड सृजित चतुरानन |
करते सब चर अचर जीव सरिर मेरी आज्ञा पालन || (१४-४१)

भावार्थ: मेरे बल से ब्रह्मा ने असंख्य ब्रह्माण्ड सृजित किए| ब्रह्माण्ड में सब चर, अचर जीव मेरी आज्ञा का पालन करते हैं|

हैं विभिन्न गुण नाना रूपेण समाहित विभिन्न भुवन |
यद्यपि भिन्न परिसर पर करें नियंत्रण एक भगवन || (१४-४२)

भावार्थ: विभिन्न लोकों में असंख्य रूप के विभिन्न गुण समाहित हैं| यद्यपि वातावरण भिन्न हैं पर एक ही भगवान् के द्वारा नियंत्रित हैं (वह भगवान् मैं ही हूँ)|

कर्मानुसार करते यहां सब मेरी आज्ञा पालन |
मन बुद्धि और पंचतत्व भूमि जल अग्नि नभ पवन || (१४-४३)
भूतादि प्रकृति नहीं संभव करें आदेश उल्लंघन |
करती जो मोहित सम्पूर्ण जग और देहधारी जन || (१४-४४)
है वह माया मेरे आधीन करती मोहित मेरा शासन |
कर सकें दूर प्रभाव माया इस भू जिस गुण जन || (१४-४५)
होता क्रियान्वित पा आदेश रूद्र जो मैं हनुमन |
कहूँ क्या अधिक समझो हूँ मैं ऊर्जा सब भुवन || (१४-४६)

भावार्थ: कर्मानुसार (सभी प्राणी) यहां (ब्रह्माण्ड में) सब मेरी आज्ञा का ही पालन करते हैं| मन, बुद्धि, पांच तत्व जैसे भूमि, जल, अग्नि, आकाश और वायु, भूतादि, प्रकृति के लिए मेरे आदेश का उल्लंघन करना संभव नहीं| जो माया सम्पूर्ण जगत और शरीर धारी प्राणियों को मोहित करती है, वह मेरे आधीन है और मेरे आदेश से ही (इन्हें) मोहित करती है| इस माया के प्रभाव को जिस गुण से दूर किया जा सकता है वह ज्ञान महादेव के आदेश से क्रियान्वित होता है, जो हे हनुमान, मैं ही हूँ (महादेव भी मैं ही हूँ)| अधिक क्या कहूँ, समझो कि समस्त ब्रह्माण्ड की ऊर्जा मैं ही हूँ|

हो जग पूर्ण मुझ से हो विलय मुझ में काल विघटन |
हूँ मैं ही ईश्वर स्व-ज्योति सनातन स्वामी भुवन || (१४-४७)

भावार्थः मुझ से विश्व पूर्ण हो प्रलय काल में मुझ में विलय हो जाता है| मैं ही ईश्वर, आत्म-प्रकाशित, सनातन और लोक स्वामी हूँ|

हूँ मैं ही परब्रह्म परमात्मा पावन दिव्य भगवन |
नहीं मेरे सम कोई विश्व जानो यह गुह्य ज्ञान पावन || (१४-४८)

भावार्थः मैं ही परब्रह्म, परमात्मा, पावन, दिव्य भगवान् हूँ| मेरे समान इस विश्व में कोई नहीं है| इस पवित्र गुह्य ज्ञान को जानो|

जान यह ज्ञान छूटें बंधन चक्र जन्म-मरण भूजन |
हो आश्रित माया हुआ अवतरित मैं दशरथ भवन || (१४-४९)

भावार्थः यह ज्ञान जानने से प्राणियों का जन्म-मरण चक्र बंधन से छुटकारा मिल जाता है| माया के आश्रित हो (जन कल्याण हेतु) मैंने दशरथ के महल में जन्म लिया है|

हुआ प्रकट मैं संग भ्राता भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न |
यद्यपि हैं तन चार पर समझो एक हे पुत्र-पवन || (१४-५०)

भावार्थः मैं भाई भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न के साथ प्रकट हुआ हूँ| हे पवन पुत्र, यद्यपि चार शरीर हैं, पर एक ही समझो|

हे महावीर रखो हिय जो कहा मैंने अति गुह्य कथन |
हो श्रद्धा और विश्वास इन सत्य और पावन वचन || (१४-५१)
करेंगे जो नित्य पठन श्रवण यह पुण्य संवाद भूजन |
हो अघहीन पाएंगे वह निःसंदेह मुक्ति जीवन-मरन || (१४-५२)

भावार्थः हे महावीर, जो मैंने अत्यंत रहस्यमय वचन कहे उन्हें हृदय में धारण करो| इन सत्य पवित्र वचनों पर श्रद्धा और विश्वास हो| जो प्राणी इस पवित्र संवाद का नित्य पठन, श्रवण करेंगे, वह पाप-हीन होकर निःसंदेह जीवन-मरण से मुक्ति पाएंगे|

जो सुनाएंगे यह वचन परायण ब्रह्मचर्य ब्राह्मन |
इसके चिंतन से निःसंशय पाएंगे वह निर्मोचन || (१४-५३)

भावार्थ: जो यह वचन ब्रह्मचर्य परायण ब्राह्मणों को सुनाएंगे, इसके चिंतन से निःसंदेह वह मोक्ष प्राप्ति करेंगे|

जो ध्यानरत द्रढ़व्रत सुनेंगे नित्य यह पावन वचन |
हो रहित-पाप जाएंगे वह ब्रह्मलोक पश्चात मरन || (१४-५४)

भावार्थ: जो अभियुक्त द्दढ़व्रत से इन पवित्र वचनों को सुनेंगे, वह पाप रहित होकर मरण पश्चात ब्रह्मलोक को जाएंगे (मोक्ष प्राप्ति करेंगे)|

हेतु स्व-कल्याण करें प्रमत चिंतन इन पावन वचन |
करें पठन श्रवण मनन विशेषकर ब्रह्म ज्ञानी जन || (१४-५५)

भावार्थ: अपने कल्याण के लिए बुद्धिमान इस पवित्र वचनों पर चिंतन करें| विशेषकर ब्रह्म ज्ञानी प्राणी (ब्राह्मण) इसका पठन, श्रवण और मनन करें|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रामचंद्र और महावीर संवाद' नाम चतुर्दश सर्ग समाप्त|

पंचदश सर्ग
हनुमान जी का रामचंद्र की स्तुति करना

रख मन हिय हरि किए दंडवत प्रणाम पुत्र-पवन |
करबद्ध हुए खड़े सम्मुख प्रभु करते ॐ उच्चारन || (१५-१)

भावार्थ: अपने हृदय में प्रभु को रखकर, दंडवत प्रणाम कर, हाथ जोड़, ॐ का उच्चारण करते हुए पवन पुत्र प्रभु के सम्मुख खड़े हो गए|

कर अभिनंदन बोले महावीर तब मृदुल वचन |
हे महान उदार स्वामी अतुलित बल वैभव भगवन ||
हुआ अति प्रसन्न मन सुन आपके ब्रह्ममय वचन ||
कीजिए स्वीकार नमन मेरा हे अप्रमेय भगवन || (५-२)

भावार्थ: अभिनंदन कर हनुमान जी तब मधुर वचन बोले, 'हे महान उदार अतुलित बल और वैभव के स्वामी भगवान्, आपके ब्रह्ममय वचनों को सुनकर मेरा मन अत्यंत प्रसन्न हुआ| हे अप्रमेय (जिनको मापा न जा सके) भगवान्, आप मेरा नमन स्वीकार कीजिए|

हो तुम ही पुरुषोत्तम प्राणेश्वर श्रीपति भगवन |
स्थित अंतर सब सुर असुर भूजन हो नित्य सनातन ||
करूँ नमस्कार हे प्रचेतस ब्रह्ममय हरि पावन || (१५-३)

भावार्थ: आप ही पुरुषोत्तम, प्राणेश्वर, श्रीपति भगवान् हैं| सभी सुर, असुर और प्राणियों के अंतर में स्थित नित्य सनातन हैं| हे प्रचेतस (आह्लादित), ब्रह्ममय पवित्र प्रभु, नमस्कार करता हूँ|

देखें आपको ब्रह्म स्वरुप ज्ञानी ऋषि मुनिगन |
हैं आप उदार परोपकारी शुभेच्छु सब भूजन ||
शान्ति प्रिय निर्मल शांत अकलंक अत्यंत पावन ||
स्थित आत्मा सर्व जन अपरिमित महत श्रेष्ठ राजन् || (१५-४)

भावार्थ: ज्ञानी ऋषि और मुनि आपको ब्रह्म स्वरुप देखते हैं| आप उदार, परोपकारी, सभी प्राणियों का शुभ चाहने वाले हैं| आप शांति प्रिय, निर्मल, शांत, अकलंक और अत्यंत पवित्र हैं| सब प्राणियों की आत्मा में स्थित आप अप्रमेय, महान एवं श्रेष्ठ सम्राट हैं|

हैं आप ही सृजक ब्रह्माण्ड और कर्ता पालन |
सर्वात्मा सूक्ष्म महानतम कहें संत महा चेतन || (१५-५)

भावार्थ: आप ही ब्रह्माण्ड के सृजक और पालन कर्ता हैं| आप सर्वात्मा, सूक्ष्म (रूप धारित), महानतम हैं जिन्हें संत महात्मा कहते हैं|

हो आप ही हिरण्यगर्भ विश्वात्मा विराट भगवन |
दिए विधान आप जग हेतु उचित वृत्ति कर सृजन || (१५-६)

भावार्थ: आप ही विश्व की आत्मा विराट हिरण्यगर्भ भगवान् हैं| इस जगत का सृजन कर आपने विधान दिए जिससे उचित निर्वाह हो सके|

आप ही सृजक चतुर्वेद हों स्थित आप में अंत जन |
हैं आप बीज भूत जग होइए स्थित मेरे हिय भगवन || (१५-७)

भावार्थ: आप ने ही चारों वेदों की रचना की| आप में अंत में सब प्राणी स्थित होते हैं| आप ही विश्व के प्राणियों के बीज हैं (आप से उनका जन्म होता है)| हे भगवान्, मेरे हृदय में स्थित होईए|

घुमाते आप ब्रह्माण्ड चक्र हैं आप नाथ सब भुवन |
हैं आप सार योग चैतन्य हेतु सरिर सृजन विघटन ||
त्राहि त्राहि हे प्रभु आया मैं आपकी शरन || (१५-८)

भावार्थ: आप ही ब्रह्माण्ड का चक्र घुमाते हैं| आप ही सब लोकों के स्वामी हैं| आप चैतन्य योगात्मा हैं| आप ही ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विनाश का कारण हैं| हे प्रभु, रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए, मैं आपकी शरण में आया हूँ|

देखता हूँ मैं हैं स्थित आप मध्य परम शून्य गगन |
कर स्मरण सगुण भव्य वर्ण होता आनंद अतिशयन || (१५-९)

भावार्थ: मैं आपको परम शून्य आकाश के मध्य में स्थित देखता हूँ| मैं आपकी सगुण भव्य महिमा का स्मरण कर अति आनंदित होता हूँ|

ओंकार मुक्तिबीज वाचक हैं आप ही अक्षर भगवन |
कहते संतगण सत्व आपको हैं आप ईश स्व-द्योतन || (१५-१०)

भावार्थ: आप ही ओंकार एवं मुक्तिबीज वाचक (वर्णमाला के सृजक) अक्षर (अविनाशी) भगवान् हैं| आप ही स्व-प्रकाशित ईश हैं| संतगण आपको सत्व नाम से पुकारते हैं|

करते स्तुति नित्य आपकी सुर अकलंक ऋषि नमन |
प्रिय शम सत्यसंध आप ही आधार वरिष्ठ योगीगन || (१५-११)

भावार्थ: देवता आपकी निरंतर स्तुति करते हैं| अकलंक (दोष रहित) ऋषि आपको नमन करते हैं| शान्ति प्रिय, सत्य स्वरुप आप ही वरिष्ठ योगियों के आधार हैं|

हैं यद्यपि वेद चार पर करें एक प्रकार ही वर्णन |
दिखते भिन्न स्वरुप आपके पर हैं आप एक भगवन ||
पाएं नित्य शम जो लें शरण आपके कमल सम चरन || (१५-१२)

भावार्थ: वेद यद्यपि चार हैं परन्तु एक प्रकार से ही वर्णन करते हैं कि आपके भिन्न स्वरुप दिखाई देते हैं पर आप एक (एकेश्वर) हैं| जो आपके कमल रूपी चरण की शरण लेते हैं उन्हें नित्य (अनंत) शान्ति मिलती है|

हैं आप ही शिव तुलजा पति धारी अणिमा गोरन् |
हैं परमेष्ठी परब्रह्म स्व-दीपित मुक्त-माया भुवन || (१५-१३)

भावार्थ: आप ही अणिमा शक्ति धारी भवानी पति शिव हैं| परमेष्ठी (त्रिदेव एवं सभी देवताओं के स्वामी), परब्रह्म, स्व-प्रकाशित, सृष्टि की माया से मुक्त हैं|

हैं आप ही एक देव प्रकृष्ट करते जो सृष्टि सृजन |
इस अखिल ब्रह्माण्ड का करते एक आप ही पोषन ||
होता विलीन आप में यह विश्व होता जब विघटन ||
आया शरण मैं आपकी करो स्वीकार मेरा नमन || (१५-१४)

भावार्थ: आप ही एक सर्वश्रेष्ठ देव हैं जो सृष्टि का सृजन करते हैं| इस समस्त ब्रह्माण्ड का आप ही एक हैं जो पोषण करते हैं| प्रलय काल में यह विश्व आप में ही विलीन हो जाता है| मैं आपकी शरण आया हूँ, मेरा नमस्कार स्वीकार कीजिए|

हे राम आप ही परम प्राण दाता सत मित्र भगवन |
हैं सब आपके ही रूप शिव सचिन सोम सूर्य पवन || (१५-१५)

भावार्थ: हे राम, आप ही नित्य, प्राण दाता, सत्य मित्र भगवान् हैं| शिव, इंद्र, चन्द्रमा, सूर्य, पवन सब आप ही के रूप हैं|

हैं आप ही धर्म रक्षक अविनाशी ईश ज्ञेय पावन |
अति उच्च अनंत सत्य शाश्वत सगुण सुजात सनातन || (१५-१६)

भावार्थ: आप ही धर्म रक्षक, अविनाशी, स्वामी, जानने योग्य, पवित्र, शाश्वत, अनंत सत्य, अति उच्च, सगुण, कुलीन और सनातन हैं|

हैं आप ही एक धारी रूप रूद्र विष्णु चतुरानन |
हैं आप नाभि विश्व प्रकृति सर्वेश्वर परम भगवन || (१५-१७)

भावार्थ: आप ही एक (त्रिदेव) शिव, विष्णु, ब्रह्मा रूप धारी हैं| आप विश्व की नाभि (केंद्र स्थान), प्रकृति, सर्वेश्वर, परम स्वामी हैं|

हैं आप ही आदि पुरुष परे तम सम सूर्य वर्पन् |
चिन्मात्र अव्यक्त अचिन्त्य निर्गुण स्वामी त्रिभुवन || (१५-१८)

भावार्थ: आप ही आदि पुरुष, अंधकार रहित, सूर्य समान स्वरुप, चिन्मात्र, अव्यक्त, अचिन्त्य, निर्गुण, तीनों लोकों के स्वामी हैं|

होता दीपित जग हेतु आभा आपकी अनश्वर पावन |
रूप आपका प्रकाशवान तत्व ज्ञानी और अचिन्त्यन || (१५-१९)

भावार्थ: संसार आपकी अविनाशी पवित्र आभा के कारण प्रकाशित होता है| आपका रूप प्रकाशवान, तत्व ज्ञानी एवं अचिन्त्य है|

करते इच्छा हम पा सकें शरण रूप योगेश्वर भगवन |
धारी अनंत शक्ति ब्रह्म स्वरुप चपल शौर्यवान महन ||
होईए प्रसन्न जान दीन हे दयालु करते हम नमन || (१५-२०)

भावार्थ: हमारी इच्छा है कि हम योगेश्वर रूप, अनंत शक्ति धारी, ब्रह्म स्वरुप, चपल, शौर्यवान, महान भगवान् की शरण पा सकें| हे दयालु, हमें दीन समझ प्रसन्न होईए| हम आपको नमस्कार करते हैं|

करते स्मरण जब भूजन आपके कमल स्वरुप चरन |
मिलता मोक्ष होते नष्ट सब मूल कारण जन्म-मरन ||
करूँ प्रयास हों प्रसन्न आप कर नियंत्रित तन मन || (१५-२१)

भावार्थ: जब प्राणी आपके कमल रूपी चरणों को स्मरण करते हैं तब उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती है| उनके जन्म-मरण के मूल कारण नष्ट हो जाते हैं (अर्थात भव बंधन से मुक्त हो जाते हैं)| मैं तन, मन को नियंत्रित कर आपको प्रसन्न करने का प्रयास करता हूँ|

हे हेतु जग सृजन पालन विघटन करूँ मैं नमन |
धारी रूप असंख्य मूर्तिमत पावक रूद्र भगवन || (१५-२२)

भावार्थ: हे विश्व के सृजक, पालक, विनाशक, असंख्य रूप धारी, शिव, अग्नि समान भगवान्, मैं आपको नमन करता हूँ|

हो प्रसन्न हनुमान स्तुति छिपाए मूल रूप भगवन |
हुए प्रकट रूप मनुज पुनः श्री राम संग लक्ष्मन || (१५-२३)

भावार्थ: हनुमान जी की स्तुति से प्रसन्न हो भगवान् ने अपना मूल स्वरुप छिपा लिया| श्री राम लक्ष्मण जी सहित पुनः मनुष्य रूप में प्रकट हो गए|

सुन अति विनम्र वचन महावीर हुए गंभीर भगवन |
मायावश कर अभिनय सशोक बोले तब मधुर वचन || (१५-२४)

भावार्थ: हनुमान जी के अति विनम्र वचन सुन भगवान् गम्भीर हो, मायावश शोकमय अभिनय करते हुए तब मधुर वचन बोले|

करें जो भूजन स्तुति रामचंद्र सम किए पुत्र-पवन |
पाएं मोक्ष हों प्रिय सिय संग चारों भाई रघुनन्दन ||
महावीर करो कार्य उपयुक्त दें तुम्हें जो भगवन || (१५-२५)

भावार्थ: जो प्राणी रामचंद्र की स्तुति उसी प्रकार करते हैं जैसे हनुमान जी ने की, उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती है और वह सीता सहित राम के चारों भाइयों के प्रिय होते हैं| हे हनुमान, आप को जो उपयुक्त कार्य प्रभु दें, उसे करो|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में ' हनुमान जी का रामचंद्र की स्तुति करना' नाम पंचदश सर्ग समाप्त|

षोडश सर्ग
रामचंद्र का रावण को मार राज्य पाना

कहने लगे राम सुनो हे महावीर मेरा कदर्थन |
किया दुष्ट रावण मेरी भार्या सीता का हरन || (१६-१)

भावार्थ: राम कहने लगे, 'हे महावीर, मेरा कष्ट सुनो| दुष्ट रावण ने मेरी पत्नी सीता का हरण कर लिया है|'

वानर श्रेष्ठ कराओ मित्रता हमारी संग राजन |
करें सुग्रीव मदद हमारी रण संग दुष्ट रावन ||
बोले हंसकर तब महावीर कर्णप्रिय मधुर वचन || (६-२)

भावार्थ: हे वानर श्रेष्ठ (हनुमान), हमारी (अपने) सम्राट के साथ मित्रता कराओ| सुग्रीव हमारी रावण के साथ युद्ध में मदद करें| तब महावीर हंसकर कर्णप्रिय मधुर वचन बोले|

है यह विदित रावण किया प्रभु भार्या हरन |
क्या है हेतु इस लीला जानें केवल आप भगवन || (१६-३)

भावार्थ: रावण ने प्रभु की पत्नी का हरण किया है, यह विदित है| इस लीला का कारण क्या है, यह तो प्रभु आप ही जानते हैं|

है कर्तव्य हमारा करें प्रभु हम आज्ञा पालन |
देख विनम्रता हरि राम हुए महावीर अति प्रसन्न || (१६-४)

भावार्थ: हमारा कर्तव्य है कि हम प्रभु की आज्ञा का पालन करें| प्रभु श्री राम की विनम्रता देख महावीर अत्यंत प्रसन्न हुए|

शीघ्र चढ़ाए स्व-स्कंध द्वि भ्राता राम और लक्ष्मन |
पहुंचे ऋष्यमूक शैल समीप तुरंत सुग्रीव राजन ||
देख द्वि भ्राता हुए वानर श्रेष्ठ सुग्रीव प्रसन्न || (१६-५)
करूँ प्राप्त रूमा और जीतूं बाली अब असंशयन |
हूँ पुण्यवत करूँ मित्रता अवधेश राम भगवन || (१६-६)

भावार्थ: शीघ्र दोनों भाई राम और लक्ष्मण को अपने कन्धों पर चढ़ाया और तुरंत ऋष्यमूक पर्वत पर सम्राट सुग्रीव के समीप पहुंचे| दोनों भाइयों को देखकर वानरोत्तम सुग्रीव प्रसन्न हुए| (उन्हें विचार आया) मैं निश्चय ही बाली को जीत कर अब (अपनी पत्नी) रूमा को प्राप्त करूंगा| अवध के नृप राम से मित्रता मेरे लिए पुण्यवत है|

सुन दुःख सुग्रीव हुए हरि दुःखी दिया आश्वासन |
किया वध बाली तुरंत दिया राज्य सुग्रीव राजन ||
बुलाए वानरगण देश देशांतर हेतु कार्य भगवन || (१६-७)

भावार्थ: सुग्रीव का दुःख सुन भगवान् दुःखी हुए और उन्होंने आश्वासन दिया| तुरंत बाली का वध किया और सुग्रीव को राज्य दिया| तब देश देशांतर से भगवान् के कार्य हेतु वानर समूह बुलाए|

गए लंका पाए निश्चित स्थिति जानकी पुत्र-पवन |
संग समूह वानर रीछ गए तब तट समुद्र राम लक्ष्मन || (१६-८)

भावार्थ: हनुमान जी ने लंका जाकर सीता जी की निश्चय स्थिति पाई| तब वानर और रीछ समूह सहित राम और लक्ष्मण समुद्र तट गए|

थी लंका पुरी स्थित दूर परतट सागर देखे भगवन |
बोले राम करो वही कर सकें पार हम सागर लक्ष्मन || (१६-९)

भावार्थ: भगवान् ने देखा कि लंका पुरी सागर के दूसरे तट पर स्थित थी| तब राम बोले, 'लक्ष्मण वही करो जिससे हम सागर को पार कर सकें|'

सुन वचन भ्राता राम किए सम्बोधित सागर लक्ष्मन |
हो जाओ सागर स्थिर करें पार वानर रीछ सैन्यगन || (१६-१०)

भावार्थ: भ्राता राम के वचन सुन लक्ष्मण सागर को सम्बोधित किए, 'हे समुद्र तुम स्थिर हो जाओ जिससे वानर और रीछों की सेना पार कर सके|'

किए वचन अनसुने सागर तब हो गए क्रोधित लक्ष्मन |
पड़े कूद मध्य सागर हुआ लाल अग्निमय क्रोधित तन || (१६-११)

भावार्थ: जब समुद्र ने उनके वचन अनसुने कर दिए तब लक्ष्मण क्रोधित हो गए| वह सागर के मध्य में कूद पड़े| उनका क्रोधित शरीर अग्नि की भांति लाल हो गया|

सुखाने लगे जल सागर हेतु सम अग्नि ज्वाला तन |
हो व्याकुल जल जीव सुर आदि करने लगे पलायन || (१६-१२)

भावार्थ: अपने शरीर की अग्नि समान ज्वाला से वह सागर का जल सुखाने लगे| तब जल जंतु और देवता आदि व्याकुल हो पलायन करने लगे|

हुए विस्मित सैन्यगण देख महा बल सुमित्रा-नंदन |
करने लगे हाहाकार चर अचर जंतु जीव सब भुवन || (१६-१३)

भावार्थ: सुमित्रा नंदन का महा बल देख सैन्य समूह आश्चर्य चकित हुए| सभी लोकों में चर, अचर जीव-जंतु हाहाकार करने लगे|

कहने लगे स्वस्ति स्वस्ति सभी ऋषि मुनि सुर भूजन |
बोले राम हे भ्राता नहीं यह उचित दें कष्ट अन्य जन || (१६-१४)

भावार्थ: सभी ऋषि, मुनि,सुर और प्राणी स्वस्ति, स्वस्ति (कल्याण करो, कल्याण करो) कहने लगे| तब राम बोले, 'हे भाई, अन्य प्राणियों को कष्ट देना उचित नहीं है|'

करूँ पूर्ण सागर हेतु वियोग सिय जो जल नयन|
कह यह वचन भर दिए जल सागर पुनः श्री राम भगवन || (१६-१५)

भावार्थ: सीता के वियोग में जो मेरे अश्रु हैं, उनसे मैं समुद्र को पूर्ण करूंगा| यह वचन कहकर श्री राम भगवान् ने समुद्र को फिर से भर दिया|

हुई गगन से पुष्प वर्षा ऊपर तब श्री राम भगवन |
हुए स्वस्थ्य सब लोक करें स्तुति प्रभु सुर भूजन || (१६-१६)

भावार्थ: तब भगवान् श्री राम के ऊपर आकाश से पुष्प वर्षा हुई| सब लोक स्वस्थ्य हो गए| देवता और प्राणी प्रभु की स्तुति करने लगे|

किए स्तुति सिंधु भांति अनेक हुए तब प्रसन्न भगवन |
बांधा सेतु हुआ पार सैन्यदल यथा सागर कथन ||
पहुँच लंका किया वध सहित अनुचर दुष्ट रावन || (१६-१७)
हो सवार पुष्पक विमान चले तब संग सीता विभीषन |
हनुमान आदि भक्त ओर अवध तब श्री राम लक्ष्मन || (१६-१८)

भावार्थ: अनेक प्रकार से सागर ने प्रभु की स्तुति की, तब प्रभु प्रसन्न हुए| जैसा सागर ने बतलाया उस के अनुसार पुल बांधा और सैन्यदल पार हुआ| लंका पहुँच कर उन्होंने दुष्ट रावण का उसके साथियों सहित वध किया| तब सीता, विभीषण, हनुमान आदि भक्तों को लेकर पुष्पक विमान पर सवार हो श्री राम और लक्ष्मण अयोध्या की ओर चले|

पहुँच अवध दिया आनंद भ्राता माता प्रजाजन |
हुआ तिलक आया राम-राज्य हुए सुखी सब भुवन || (१६-१९)
पा नृप सम श्री राम हुए खग पशु भी अति प्रसन्न |
बजा दुंदभी नभ सुर आदि करने लगे पुष्प वर्षन || (१६-२०)

भावार्थ: अवध पहुँच उन्होंने भ्राता (भरत आदि), माता एवं प्रजा को आनंदित किया| उनके राज तिलक से राम राज्य आया, सभी लोक सुखी हुए| श्री राम जैसा सम्राट

पाकर पशु पक्षी भी अत्यंत प्रसन्न हुए| आकाश से दुन्दभी बजाकर देवता पुष्पों की वर्षा करने लगे|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रामचंद्र का रावण को मार राज्य पाना' नाम षोडश सर्ग समाप्त|

सप्तदश सर्ग
जानकी जी द्वारा सहस्रमुख रावण का वृतांत

कर वध असुरगण जिस काल लौटे अवध राम भगवन |
किया राज्याभिषेक उनका गुरु वशिष्ठ संग ऋषिगन ||
आया संत समाज तब हेतु पाने कृपा नृप रघुनन्दन || (१७-१)

भावार्थ: जिस समय श्री राम भगवान् राक्षसगणों का वध कर अयोध्या लौटे तब गुरु वशिष्ठ और ऋषिगणों ने उनका राज्याभिषेक किया| तब संत समाज सम्राट श्री राम की कृपा लेने आया|

विश्वामित्र यवक्रीत रैभ्य मुनि श्रेष्ठ कण्व च्यवन |
निवास जिनका दिशा पूर्व आए हेतु हरि दर्शन || (१७-२)

भावार्थ: विश्वामित्र, यवक्रीत, रैभ्य, मुनि श्रेष्ठ कण्व, च्यवन, पूर्व दिशा में रहने वाले ऋषि भगवान् के दर्शन के लिए आए|

आए स्वस्ति आत्रेय नमुच अरिमुच अगस्त्य महन |
संग शिष्य और ऋषि करें निवास जो दिशा दक्खिन || (१७-३)

भावार्थ: स्वस्ति, आत्रेय, नमुच, अरिमुच, महात्मा अगस्त्य अपने शिष्य एवं अन्य ऋषियों के साथ जो दक्षिण दिशा में वास करते हैं, आए|

उपगु कामथ धूम्र रौद्राश्व आदि श्रेष्ठ ऋषिगन |
आए संग श्रावक सभी करें जो वास पश्चिमांगन || (१७-४)

भावार्थ: उपगु, कामथ, धूम्र, रौद्राश्व आदि श्रेष्ठ ऋषिगण जो पश्चिम दिशा में वास करते हैं, वह सभी अपने शिष्यों के साथ आए|

महर्षि वशिष्ठ संग सभी शिष्य उपशिष्य पूज्यगन |
आए दिशा उत्तर करने राज्याभिषेक श्री भगवन || (१७-५)

भावार्थ: सभी शिष्यों, उपशिष्यों और पूजित गणों के साथ महर्षि वशिष्ठ भगवान् का राज्याभिषेक करने उत्तर दिशा से आए|

पधारे यह सभी महात्मा श्री रामचंद्र भवन |
लाए संग कंद मूल फल आदि याच्य वस्तुएं पावन ||
थे विराजित वहां श्री रामचंद्र धर सम पावक तन || (१७-६)

भावार्थ: यह सभी महात्मा श्री रामचंद्र के महल में पधारे|वह अपने साथ कंद, मूल, फल आदि आवश्यक (राज्याभिषेक हेतु) वस्तुएं ले कर आए| वहां श्री रामचंद्र अग्नि समान शरीर को धारण कर विराजमान थे|

दिए मंत्रीगण उचित परमासन इन सभी महात्मन |
हो रहे शोभित संग जानकी बैठे हरि स्वर्ण आसन || (१७-७)

भावार्थ: मंत्रीगणों ने इन सभी महात्माओं को उचित पवित्र आसन दिए| सीता सहित प्रभु स्वर्ण आसन पर बैठे शोभित हो रहे थे|

संग प्रजा मंत्रीगण भ्राता भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न |
करने लगे मुनि वेद विधि सिय और राम का पूजन || (१७-८)

भावार्थ: प्रजा, मंत्रीगण और भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न भाइयों के साथ वेद विधि से मुनिगण सीता और भगवान् राम का पूजन करने लगे|

चतुर वाचस्पति सम महर्षि अगस्त्य करने लगे वाचन |
हैं हम धन्य हुए माँ सीता और हरि रामचंद्र दर्शन || (१७-९)

भावार्थ: महर्षि अगस्त्य समान चतुर वक्ता कहने लगे, 'हम धन्य हैं जो माँ सीता और प्रभु रामचंद्र के दर्शन हुए|

हे जगन्नाथ राम हो तुम्हीं जो करें उपकार भुवन |
संग भ्राता मित्र सैन्यदल किए तुम वध दुष्ट रावन || (१७-१०)

भावार्थ: हे जगन्नाथ भगवन राम, आप ही लोक उपकारी हैं| भ्राता (लक्ष्मण) और मित्र के सैन्यदल के साथ आपने दुष्ट रावण का वध किया|

जग मंगल हेतु किया कार्य जो आपने श्री भगवन |
नहीं था कोई अधिक भय-दायक दुष्ट सम रावन || (१७-११)

भावार्थ: हे भगवन, आपने विश्व के मंगल हेतु कार्य किया| रावण के समान कोई अधिक भय देने वाला दुष्ट नहीं था|

करते पालन आज्ञा उसकी चहुँ ओर सुर असुर भूजन |
हैं हम धन्य किया उद्धार आपने कर उसका हनन || (१७-१२)

भावार्थ: हर (दसों दिशाओं) ओर सुर, असुर और प्राणी उस की आज्ञा का पालन करते थे| हम धन्य हैं| उसका वध कर आपने (संसार का) उद्धार किया है|

किए धारण आप विश्वरूप किए जब स्तुति चतुरानन |
हे श्याम वर्ण अजनबाहु सुन्दर कमल समान नयन || (१७-१३)

भावार्थ: ब्रह्मदेव की स्तुति पर आपने विश्वरूप धारण किया| आपका श्याम वर्ण, लम्बी भुजाएं तथा कमल के समान सुन्दर नेत्र हैं|

दिए आनंद कुल इक्ष्वाकु ले जन्म अयोध्या पट्टन |
हैं आमोदित हृदय हमारे कर आपके दर्शन || (१७-१४)

भावार्थ: आपने अयोध्या नगरी में जन्म लेकर इक्ष्वाकु कुल को आंनद दिया| आपके दर्शन से हमारे हृदय प्रसन्न हैं|

करें तप निर्भय वन ऋषिगण प्रताप आपके भगवन |
होते हम दुःखी सोच पाईं माँ सीता अत्यंत कदर्थन || (१७-१५)
होता व्याकुल चित्त हमारा कर यह दृश्य सुमरन |
भर हृदय करुणा कहे ऋषिगण यह मार्मिक वचन || (१७-१६)

भावार्थ: हे भगवान्, आपके प्रताप से ऋषिगण वन में निर्भय तप करते हैं| माँ सीता का अत्यंत कष्ट (लंका में) सोच हम दुःखी होते हैं| इस दृश्य को स्मरण कर हमारी हृदय व्याकुल हो जाता है| हृदय में करुणा भर यह मार्मिक वचन ऋषियों ने कहे|

हंस पड़ीं पावन जनकसुता सुन यह ऋषिगण वचन |
कहने लगीं हसित माँ सुनो सब सुर असुर भूजन || (१७-१७)

भावार्थ: ऋषियों के यह वचन सुन पावन सीता हंस पड़ीं| हँसते हुए माँ बोलीं, 'सब सुर, असुर और प्राणीगण सुनो|'

कहे जो कुछ वचन आपने अभी सम्बन्ध वध रावन |
यद्यपि की हरि प्रशंसा आपने पर है यह अति वर्णन || (१७-१८)

भावार्थ: जो कुछ आपने रावण के मरण के सम्बन्ध में कहा, यद्यपि आपने भगवान् की प्रशंसा की, पर यह अतिशयोक्ति है|

निःसंदेह है सत्य था दुराचारी दुष्ट क्रूर रावन |
पा शिव वर यह दशानन करता अवश्य जग उद्वेजन || (१७-१९)

भावार्थ: निःसंदेह यह सत्य है कि रावण दुराचार, दुष्ट और क्रूर था| शिव का वरदान पा कर यह दशानन संसार को दुःखी करता था|

परन्तु है नहीं योग्य प्रशंसा विशेष वध दशानन |
हुए विस्मित उपस्थित सभी सुन माता के यह वचन || (१७-२०)

भावार्थ: परन्तु रावण का वध विशेष प्रशंसा के योग्य नहीं है| माता (सीता) के यह वचन सुन सभी उपस्थित आश्चर्य चकित हुए|

बोले सब ऋषि एक साथ करते माँ मुख अवलोकन |
क्या कहतीं सीता आप वधु इक्ष्वाकु कुल महन || (१७-२१)

व्यंग्य भरे हास्य वचन देते नहीं शोभा मुख देवाङ्गन |
नहीं जानते हेतु कथन तब बोलीं माँ यह वचन || (१७-२२)

भावार्थ: सब ऋषिगण माँ (सीता) का मुख देखते हुए एक साथ बोले, 'सीता, आप महान इक्ष्वाकु कुल की वधु हैं| यह आप क्या कहती हैं? व्यंग्य भरे यह हास्य वचन दैवीय मुख से शोभित नहीं होते| हम इसका कारण नहीं जानते|' तब माँ यह बोलीं|

ऋषिगण क्रोध से हो भयभीत करीं वह अभिवादन |
करें क्षमा हूँ नहीं असत्य भाषी सम पामर जन || (१७-२३)

भावार्थ: ऋषियों के क्रोध से भयभीत हो अभिनन्दन कर बोलीं, 'मुझे क्षमा करें| मैं साधारण चापलूस प्राणियों की भांति असत्य भाषी नहीं हूँ|'

हो यदि आज्ञा तो करूँ सब कथा आदि से विवरन |
सुन विनीत वचन जानकी बोले तब अगस्त्य वचन || (१७-२४)
हे देवी तत्पर हम सुनें विवृति जो आपके अंतर्मन |
सुन वचन प्राज्ञ बोलीं तब पुण्यवत माँ मधुर वचन || (१७-२५)
दें आज्ञा पति श्री राम तीनों देवर और मन्त्रीगन |
करूँ विवरण पूर्व वृतांत सुन हों दूर संशयन || (१७-२६)

भावार्थ: 'यदि आज्ञा हो तो मैं सम्पूर्ण कथा का प्रारम्भ से विवरण करूँ|' जानकी के विनम्र वचन सुन तब (महर्षि) अगस्त्य बोले, 'हे देवी, जो भी आपके मन के अंदर है, उसे सुनने को हम तत्पर हैं|' ज्ञानी (ऋषि) के वचन सुन तब अत्यंत सौभाग्यशाली माँ मधुर वचन बोलीं, 'मुझे पति श्री राम, तीनों देवर (भरत, शत्रुघ्न एवं लक्ष्मण) और मंत्रीगण आज्ञा दें तो मैं पूर्व वृतांत सुनाऊँ जिससे संदेह दूर हो|'

बोलीं तब सीता सुनो हे समस्त उपस्थित अतिथिगन |
आए एक ब्राह्मण महल पिता पूर्व पाणिग्रहन || (१७-२७)

भावार्थ: तब सीता बोलीं, 'हे समस्त उपस्थित अतिथिगण सुनो| मेरे विवाह से पूर्व एक ब्राह्मण मेरे पिता (जनक) के महल में आए |'

कहने लगे वह ब्राह्मण है मेरी एक विनती राजन |
दो आज्ञा रहूँ महल आपके इस ऋतु वर्षिन् || (१७-२८)

भावार्थ: वह ब्राह्मण कहने लगे, 'हे सम्राट मेरी एक विनती है| आप आज्ञा दें की इस वर्षा ऋतु में मैं आपके महल में रहूँ|'

करोगे यदि सेवा मेरी होगे रुप देव तुम राजन |
जानें सब आप पिता मेरे द्विज देव भक्ति पारायन || (१७-२९)

भावार्थ: 'यदि मेरी सेवा करोगे तो हे सम्राट, तुम देव स्वरुप होगे|' आप सब जानते हैं कि मेरे पिता ब्राह्मण और देवताओं की भक्ति के पारायण हैं|

की हर प्रकार सेवा उस ब्राह्मण श्री जनक राजन |
दिए मुझे आदेश रखूँ ध्यान सुख सुविधा इन महन || (१७-३०)

भावार्थ: सम्राट श्री जनक ने ब्राह्मण की हर प्रकार से सेवा की| मुझे आदेश दिया कि मैं इन महात्मा की सुख सुविधा का ध्यान रखूँ|

परमार्थ प्रमत द्विज देते जो आदेश करती पालन |
रात दिन हो निरालस्य भाव भक्ति करती सम्पादन || (२७-३१)

भावार्थ: परमार्थ ज्ञानी ब्राह्मण जो आदेश देते, उसका पालन करती| रात दिन भक्ति भाव से निरालस्य हो मैं सम्पादन करती|

थे अति प्राज्ञ द्विज किए वह अनेक तीर्थ अभिगमन |
कहते कथा रोचक प्रति दिन हो मोहित जिससे मन || (१७-३२)

भावार्थ: अत्यंत ज्ञानी ब्राह्मण ने अनेक तीर्थों का भ्रमण किया था| वह प्रतिदिन रोचक कथा सुनाते थे जिससे मन मोहित हो जाता था|

हो संतुष्ट मेरी सेवा धैर्य अनुकूलता हुए प्रसन्न |
मधुर भाषी ब्राह्मण तब कहे मुझ से यह प्रिय वचन || (१७-३३)

भावार्थ: मेरी सेवा, धैर्य और अनुकूलता से संतुष्ट हो वह प्रसन्न हुए| तब मधुर भाषी ब्राह्मण मुझ से अत्यंत प्रिय वचन बोले|

सुनो उपस्थित सभी यहां हे महाप्राज्ञ अतिथिगन |
कर कर्म सूर्य अर्घ आदि प्रातः काल एक दिवन् || (१७-३४)
कर सम्बोधित मुझे बोले सुनो तुम पुत्री राजन |
देखा एक आश्चर्य मैंने करूँ मैं तुमसे वह विवरन || (१७-३५)

भावार्थ: सभी यहां उपस्थित हे महाज्ञानी अतिथिगण सुनो| एक दिन प्रातः काल सूर्य अर्घ आदि कर्म करने के बाद वह मुझे सम्बोधित कर बोले, 'हे राजपुत्री, सुनो| मैंने एक आश्चर्य देखा है उसका मैं तुमसे विवरण करता हूँ|'

परे परिपूर्ण जल समेत लवण फेन दधिमण्ड धृत्वन् |
है सागर एक स्थित पुष्कर द्वीप पूर्ण जल पावन || (१७-३६)

भावार्थ: क्षारीय, फेन और दही से युक्त सागर के परे एक पुष्कर द्वीप में स्थित शुद्ध जल का एक समुद्र है|

हैं प्रकाशित कमल पुष्प वहां सम शिखा परिज्वन् |
है निर्मित दस सहस्त्र पर्ण कमल से वहां ब्रह्मासन || (१७-३७)

भावार्थ: वहां अग्नि शिखा समान कमल पुष्प प्रकाशित हैं| वहां दस सहस्त्र कमल पर्ण से ब्रह्मा जी का आसन निर्मित है|

है स्थित मर्यादा शैल श्रंखला मध्य द्वीप पुष्करन् |
समझो इसे समान शैल कैलाश जहाँ वास जतिन || (१७-३८)

भावार्थः पुष्कर द्वीप के मध्य में मर्यादा (नामक) पर्वत श्रृंखला है| इसे कैलाश पर्वत के समान समझो जहां महादेव वास करते हैं|

हैं बसे सम इन्द्रादि सुर पुर चहुँ ओर पर्वत पावन |
किए निर्मित विश्वकर्मा यह पुर हेतु मनोरंजन || (१७-३९)

भावार्थः पावन पर्वत के चारों ओर इन्द्रादि देवों के समान नगर बसे हैं| इन नगरों को विश्वकर्मा ने (देवों के) मनोरंजन हेतु निर्मित किया है|

हुआ यहां भीषण रण मध्य सुर व् सहस्त्रमुख रावन |
जीत युद्ध करता निवास यह रावण यहां संग परिजन ||
है वह पुत्र कैकसी और महर्षि विश्रवा भ्राता दशानन || (१७-४०)
दीं जन्म वह द्वि रावन एक दश दूजा सहस्त्र आनन |
थे दोनों संरूप अति बलशाली दिए सुर नाम रावन || (१७-४१)

भावार्थः यहां देवताओं और सहस्त्र मुख रावण के मध्य घोर युद्ध हुआ| युद्ध जीत कर यह (सहस्त्र मुख) रावण अपने परिवार के साथ यहां निवास करता था| वह माता कैकसी और महर्षि विश्रवा का पुत्र दशानन (लंकाधीश) का भाई था| इन्होंने (माता कैकसी और महर्षि विश्रवा) दो रावण को जन्म दिया था, एक दशमुख और दूसरा सहस्त्रमुख| दोनों ही संरूप (एक से दिखने वाले) और अति बलशाली थे अतः देवताओं ने उनको (दोनों को) रावण नाम दिया|

कर तप घोर दोनों रावण किए प्रसन्न चतुरानन |
सहस्त्रमुख पाया राज पुष्कर और लंका दशानन ||
किए तप फिर शिव और पाए वर बने अतीव सहोवन् || (१७-४२)

भावार्थः दोनों रावणों ने घोर तप से ब्रह्मा को प्रसन्न किया| सहस्त्र मुख रावण ने पुष्कर द्वीप और दशानन ने लंका का राज्य पाया| महादेव की भी (उन्होंने) घोर तपस्या की और उनसे अत्यंत बलशाली होने का वर पाया|

दिए महादेव स्वरुप दक्षिणा लंका विश्रवा महन |
थी निर्मित द्वारा कुबेर यह सुन्दर नगरी स्वर्न ||
दिए पिता पुर पुत्र रावण रहता वहां संग परिजन ||
पा वर ब्रह्मा करता तिरस्कार वह सब सुर भूजन || (१७-४३)

भावार्थ: महर्षि विश्रवा ने इसे दक्षिणा में महादेव से प्राप्त किया था| यह कुबेर द्वारा निर्मित सुन्दर स्वर्ण नगरी थी| पिता ने यह नगरी पुत्र को दे दी जो अपने परिवार के साथ वहां रहता था| ब्रह्मदेव का वर पा वह सभी देवताओं और प्राणियों का तिरस्कार करता था|

था अवश्य क्रूर दशानन किया जिसका पतिदेव हनन |
है अपेक्षया क्रूरतम पुष्कर द्वीप नृप सहस्त्रानन || (१७-४४)

भावार्थ: दशानन क्रूर अवश्य था जिसका पतिदेव ने वध किया| सहस्त्रमुख जो पुष्कर द्वीप का सम्राट है वह अपेक्षया क्रूरतम है|

समझ गेंद सम सूर्य सोम करता वह क्रीड़ा अकरुन |
कुलाचल पर्वत को भी ठोकर से करता वह क्षतिन् || (१७-४५)

भावार्थ: सूर्य और चंद्र को गेंद समझ वह निर्दयपूर्वक क्रीड़ा करता है| कुलाचल पर्वत को भी ठोकर से घायल करता है|

जीत लिए सब निवास देव दैवीय पर्वत इस रावन |
हैं जो भी स्थित उत्तर मानसरोवर निवास जतिन || (१७-४६)

भावार्थ: इस रावण (सहस्त्र मुख रावण) ने महादेव के निवास मानसरोवर के उत्तर दिशा में स्थित सभी दैवीय पर्वत जहां देवता निवास करते हैं, जीत लिए हैं|

करता निवास असुर वहां संग कुल माता परिजन |
जीत इंद्रपुरी हो स्थित करता वहां सदैव रमन || (१७-४७)

भावार्थ: वह असुर वहां अपनी माता के कुल के परिवार के साथ निवास करता है| इंद्रपुरी को जीत वहां रहते हुए सदैव आनंदित होता है|

किए प्रदान धन-धान्य उच्च पद इस असुर स्व-परिजन |
है यह पुरी परम दुर्लभ पहुँच सकें सुर और भूजन || (१७-४८)

भावार्थ: अपने सम्बन्धियों को इस असुर ने धन-धान्य एवं उच्चपद दिए हैं| यह नगर देव और प्राणियों को पहुंचने के लिए अत्यंत दुर्लभ है|

किया निर्मित नगर कर प्रयोग उत्कृष्ट प्रकरन |
समान वृक्ष चम्पक मदार अशोक कदली अर्जुन || (१७-४९)
पाटल जम्बू कोविदार पनस साल तमाल ताल चन्दन |
देवदारु आदि जो दुर्लभ हों प्राप्त सामान्य जन || (१७-५०)

भावार्थ: उसने अपना नगर उत्कृष्ट साधनों से निर्मित किया है जो साधारण प्राणियों को प्राप्त करना दुर्लभ है, जैसे, चम्पक, मदार, अशोक, कदली, अर्जुन, पाटल, जम्बू, कोविदार, पनस, साल, तमाल, ताल, चन्दन, देवदारु वृक्ष आदि|

अतिरिक्त इनके है अलंकृत बकुल परिजात शोभन |
कल्प वृक्ष और पुष्प सुगन्धित खिलें जो हर ऋतुन || (१७-५१)

भावार्थ: इनके अतिरिक्त सुन्दर बकुल, परिजात, कल्प वृक्ष और सुगन्धित पुष्प जो हर समय खिलते हैं, उनसे अलंकृत है|

युक्त दिव्य गंध रस फल पुष्प सभी ऋतु षट् भुवन |
करते गुंजन भोरें करें नाना खग सम कोयल गायन || (१७-५२)

भावार्थ: फल और पुष्पों के दिव्य गंध से युक्त हो सभी जग की छै ऋतुओं में भोरें गुंजन करते हैं और कोयल समान नाना पक्षी गायन करते हैं|

हैं निर्मित भवन अग्नि शिखा सम स्वर्ण युक्त मणि रत्न |
वृक्ष उच्च सम नीलांजल गिरि करते शोभित पट्टन || (१७-५३)

भावार्थ: अग्नि शिखा के समान मणि और रत्नों से युक्त स्वर्ण से भवन निर्मित हैं| नीलांजल पर्वत के समान ऊंचे वृक्ष नगर को शोभित करते हैं|

हैं अनेक ताल सरोवर परिपूर्ण जल अति पावन |
घाट अति सुन्दर युक्त मणि रत्न चरण हर लेते मन || (१७-५४)

भावार्थ: अनेक ताल तल्लैया शुद्ध जल से परिपूर्ण हैं| अति सुन्दर घाट की सीढ़ियां मणि और रत्नों से युक्त हैं जो मन को मोहित कर लेती हैं|

हैं अनेक वन युक्त पुष्प कमल और गुलाब सुरभिन् |
शोभित उन पर चकवा चकवी करें सुन्दर खग नादन || (१७-५५)

भावार्थ: अनेक वन कमल और सुगन्धित गुलाब से युक्त हैं| उन पर चकवा, चकवी शोभित हैं| सुन्दर पक्षी नाद (गायन) कर रहे हैं|

वन परिसर ग्राम हैं युक्त वैडर्य मणि प्रकाशन |
चहुँ ओर वन पशु सम हिरण सिंह वाघ हर लेते मन || (१७-५६)

भावार्थ: ग्रामीण परिसर के वन वैडर्य मणि से प्रकाशित हैं| चारों ओर वन पशु जैसे हिरण, सिंह, वाघ आदि मन को हर लेते हैं|

हैं सुन्दर आकर्षक वृक्ष पुष्पित फलित हर हरिमन् |
नंदकवन से लाए जिन पर कोकिला कर रहे रमन || (१७-५७)

भावार्थ: नंदकवन से लाए सुन्दर आकर्षक वृक्ष हैं जो हर ऋतु में पुष्पित और फलित होते हैं| इन पर (नर) कोकिला रमण कर रहीं हैं|

हैं स्थित नगरी पुष्कर सुशोभित भव्य अद्भुत भवन |
चरण युक्त मणि रत्न हैं चंहु ओर अनेक निर्गमन || (१७-५८)

भावार्थ: पुष्कर (द्वीप) नगरी में अद्भुत भव्य महल हैं| चारों ओर मणि रत्न से युक्त सीढ़ी वाले अनेक द्वार हैं|

निर्मित अद्भुत भव्य चरण महल युक्त मणि और रत्न |
हैं शमित महल बिन प्रकाश रवि या विद्युत गगन || (१७-५९)

भावार्थ: अद्भुत भव्य मणि और रत्नों से युक्त महल में सीढ़ियां हैं जो महल को सूर्य या आकाश विद्युत के बिना प्रकाशित कर रही हैं|

नहीं कर सकते अनुभव वैभव सुर वासी व्योमन |
कर रहे तप महन पा सकें वर ब्रह्मा विष्णु जतिन || (१७-६०)

भावार्थ: सुर और स्वर्ग में निवास करने वाले इस भव्यता का अनुभव नहीं कर सकते| महात्मा यहां तप कर रहे हैं जिससे उन्हें ब्रह्मा, विष्णु और महादेव से वर प्राप्त हो|

है पुष्कर द्वीप सम्राट दुष्ट रावण सहस्त्रानन |
करता वास वह यहां जीतकर भुज बल कई भुवन || (१७-६१)

भावार्थ: पुष्कर द्वीप का सम्राट सहस्त्र मुख रावण ही है जो अनेक लोकों को अपने भुज बल से जीत कर यहां निवास करता है|

किए पराजित उसने इन्द्रादि देव किन्नर विषानन |
गन्धर्व दानव विद्याधर आदि शूरवीर त्रिभुवन || (१७-६२)

भावार्थ: उसने तीनों लोकों में इंद्र आदि देवता, किन्नर, सर्प, गन्धर्व, दानव और विद्याधर आदि शूरवीरों को पराजित किया है|

करता बाल क्रीड़ा सम तन्तुभ वह गिरि मेरु महन |
समझता सागर वह समान गौ खुर और सब लोक तृन || (१७-६३)

भावार्थ: वह महान मेरु पर्वत से सरसों के बीज समान बाल क्रीड़ा करता है (वह मेरु पर्वत को सरसों के बीज के सामान मानता है)| वह समुद्र को गाय के खुर और समस्त लोकों को तृण समान समझता है|

समझे धरा सम भूखंड और शूरवीर सम भगवन |
करे त्रास त्रिलोक न हो सके सम्मुख कोई युद्धिवन || (१७-६४)

भावार्थ: धरा को भूखंड (मिट्टी के ढेले) और भगवान् के समान (अपने आप को) शूरवीर समझता है| तीनों लोकों को त्रासित करता है| कोई भी योद्धा सम्मुख नहीं आता (उसका सामना नहीं कर सकता)|

समझाए पितामह पुलस्त्य पिता विश्रवा इस रावन |
कर सम्बोधित पुत्र तात वत्स और कह विनम्र वचन ||
कर सकें नियंत्रित उसे किए उन्होंने अनेक यत्न || (१७-६५)

भावार्थ: पितामह (महर्षि) पुलस्त्य और पिता (महर्षि) विश्रवा ने इस रावण को विनम्र वचन कह और पुत्र, तात, वत्स सम्बोधित कर समझाया| उसे नियंत्रित करने के अनेक प्रयास किए|

कहे द्विज करे इस प्रकार यह राज पुष्कर द्वीप महन |
सुन नाम इसका हो जाते भयभीत सभी सुर भूजन || (१७-६६)
बनाए सम्राट लंका विश्रवा लघु भ्राता दशानन |
कर वध श्री राम जिसका दिए निवास धाम भगवन || (१७-६७)

भावार्थ: हे महात्माओं, ब्राह्मण मुझ से बोले कि इस प्रकार यह (सहस्त्र मुख) रावण पुष्कर द्वीप में राज करता है| इसका नाम सुनते ही सभी देवगण और प्राणी भयभीत हो जाते हैं| छोटे भाई दशानन को विश्रवा (पिता) ने लंका का सम्राट बनाया जिसे श्री राम ने वध कर साकेत धाम का निवास दिया|

कहते अद्भुत कथा किए निवास चार मास ब्राह्मन |
गए तीर्थाटन दे आशीष तब मुझे और जनक राजन || (१७-६८)

भावार्थ: अद्भुत कथाएं कहते हुए ब्राह्मण ने चार महीने निवास (सम्राट जनक के महल में) किया|तत्पश्चात मुझे और सम्राट जनक को आशीर्वाद दे तीर्थ यात्रा पर चले गए|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'जानकी जी द्वारा सहस्रमुख रावण का वृतांत' नाम सप्तदश सर्ग समाप्त|

अष्टादश सर्ग
रावण की सेना का निकलना

अतिथिगण सुना आपने वृतांत सहस्त्रमुख रावन |
हुई थी विस्मित मैं सुन कथा मुख दिव्य ब्राह्मन || (१८-१)

भावार्थ: हे अतिथिगण, आपने सहस्त्रमुख रावण का वृतांत सुना| दिव्य ब्राह्मण के मुख से कथा सुन मैं आश्चर्यचकित हुई थी|

है कथा जीवित मम हिय जैसे कही अभी ब्राह्मन |
किया वध स्वामी भुजबल केवल एक भ्राता दशानन || (१८-२)

भावार्थ: यह कथा मेरे हृदय में जीवित है जैसे कि ब्राह्मण ने अभी कही हो| स्वामी ने अपने भुजबल से केवल एक भाई दशानन का वध किया है|

जलाई लंका बांधा पुल सागर थे साथ विभीषन |
हेतु मेरे किया वध रावण उसके पुत्र और परिजन || (१८-३)

भावार्थ: लंका जलाई (हनुमान जी ने लंका जलाई)| समुद्र पर पुल बांधा| विभीषण को साथ लिया| मेरे निमित्त रावण (दशानन), उसके पुत्र और अनुयायीओं का वध किया|

हुए सहाय हनुमान सुग्रीव आदि कपि ऋक्ष युध्वन् |
किया अद्भुत कार्य मिली मुक्ति संताप त्रिभुवन || (१८-४)

भावार्थ: हनुमान, सुग्रीव आदि वानर और रीछ योद्धा सहायक हुए| यह अद्भुत कार्य था जिससे तीनों लोकों को (रावण की) यातना से मुक्ति मिली|

नहीं आश्चर्य मुझे निःसंदेह यह तथ्य सत्य महन |
है प्रतीक्षा करें हरि वध क्रूर सहस्त्रमुख रावन || (१८-५)

होगा निर्भय जग तब और फैलेगी कीर्ति भगवन |
हेतु इस करें क्षमा हास्य मेरा प्रमत ऋषि मुनिगन || (१८-६)

भावार्थ: निःसंदेह मुझे इसमें कोई आश्चर्य नहीं हुआ, हे महात्मा, यह तथ्य सत्य है| प्रतीक्षा है कि भगवान् क्रूर सहस्त्रमुख रावण का वध करें| तभी विश्व निर्भय होगा और प्रभु की कीर्ति फैलेगी| हे बुद्धिमान ऋषि और मुनिगण, इस कारण मेरे हंसी को क्षमा करें|

सब उपस्थित ऋषिगण कहें धन्य धन्य सुन यह वचन |
जय जय हे जगत हितकारिणी माँ सीता तुम्हें नमन || (१८-७)

भावार्थ: यह वचन सुन सभी उपस्थित ऋषिगण धन्य धन्य कहने लगे| हे विश्व का हित करने वाली माँ सीता जय हो, जय हो, हम आपको नमन करते हैं|

सुन वचन वीर जानकी उठे श्री राम निज आसन |
कर सिहंनाद दिए आदेश हो तत्पर तुरंत हेतु रन || (१८-८)

भावार्थ: जानकी के वीरता पूर्ण वचन सुन श्री राम अपने सिंहासन से उठे| सिहंनाद कर (अपनी सेना को) आदेश दिया कि तुरंत युद्ध के लिए तत्पर हो|

सुनो हे ऋषि मुनि और समस्त उपस्थित अतिथिगन |
करें प्रस्थान आज ही हेतु वध दुष्ट सहस्त्रानन ||
दो आदेश अभी सैन्यदल हे भरत शत्रुघ्न और लक्ष्मन || (१८-९)

भावार्थ: हे ऋषि, मुनि और समस्त उपस्थित अतिथिगण सुनो| हम आज ही सहस्त्रमुख (रावण) का वध करने के लिए प्रस्थान करेंगे| हे भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण, सैन्यदल को अभी आदेश दो|

दो आदेश स्वसैन्य दल हे हनुमान सुग्रीव राजन |
करें वध क्रूर सहस्त्रमुख रावण संग सब परिजन || (१८-१०)

भावार्थ: हे हनुमान और सम्राट सुग्रीव, अपने सैन्य दल को आदेश दो| दुष्ट सहस्त्रमुख रावण का सब परिवार सहित वध करें|

किए स्मरण विमान पुष्पक स्व-हृदय तब श्री भगवन |
हुआ उपस्थित तुरंत विमान पा आदेश पति-भुवन || (१८-११)

भावार्थ: तब श्री हरि ने अपने हृदय में पुष्पक विमान का स्मरण किया| भुवनेश का आदेश पा विमान तुरंत उपस्थित हो गया|

बैठे हरि विमान संग भ्राता भरत शत्रुघ्न लक्ष्मन |
थे चमक रहे उत्तप्त मुख उनके समान विद्युत् गगन || (१८-१२)
थे संग अन्य वीर सम सुग्रीव विभीषण पुत्र-पवन |
जीत सकें त्रिभुवन किए वह ऐसी भयावह गर्जन || (१८-१३)

भावार्थ: भगवान् (श्री राम) अपने भाइयों, भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण सहित विमान पर विराजमान हुए| उनके जोशीले मुख आकाश में बिजली की भांति चमक रहे थे| सभी अन्य वीर जैसे सम्राट सुग्रीव, विभीषण, हनुमान के साथ विमान पर विराजमान हुए| तीनों लोकों को जीत सकें, ऐसी घोर गर्जना उन्होंने की|

नहीं बोले कुछ वचन जनयित्र से कोई युद्धिवन |
चले हेतु युद्ध पा आज्ञा स्वामी श्री राम भगवन || (१८-१४)

भावार्थ: इन योद्धाओं ने अपने माता पिता से कुछ वचन नहीं कहे (उनसे भी आज्ञा नहीं ली)| स्वामी श्री राम भगवान् की आज्ञा पा युद्ध हेतु प्रस्थान किए|

थे सम्मिलित सैन्यदल सुमंत्र आदि सभी मन्त्रीगन |
किए धारण अनेक प्रकार आयुध तत्पर वध रावण ||(१८-१५)

भावार्थ: सैन्यदल (सहस्त्र मुख) रावण का वध करने हेतु अनेक शस्त्रों से सुसज्जित जिसमें सुमंत्र आदि मंत्री थे, तत्पर हुआ|

करने लोग घोर सिंहनाद यह सभी वीर युद्धिवन |
हुए चलायमान भू शैल सुन धनु टंकार भगवन || (१८-१६)
टूटने लगे ग्रह तारा सूखने लगे नदी वार्यपन |
हो अकुलित छोड़ मर्यादा खोए नियन्त्रण धृत्वन् || (१८-१७)

भावार्थ: सभी वीर योद्धा घोर सिंहनाद करने लगे| भगवान् के धनुष की टंकार सुन पृथ्वी और पर्वत चलायमान हो गए (अर्थात पृथ्वी और पर्वत हिलने लगे)| तारा ग्रह टूटने लगे| नदी और ताल सूखने लगे| घबरा कर समुद्र ने मर्यादा छोड़ दी और अनियंत्रित हो गए (अर्थात उनमें प्रवात आ गया जिससे द्वीप आदि डूबने लगे)|

होता प्रतीत जैसे निगल जाएंगे यह वीर गगन |
सुग्रीव विभीषण नल जामवंत और पुत्र पवन || (१८-१८)

भावार्थ: ऐसा प्रतीत होता था कि सुग्रीव, विभीषण, नल, जामवंत और पवन पुत्र जैसे वीर आकाश को निगल जाएंगे|

हुईं विराजित माँ सीता भी पुष्पक विमान तत्क्षन |
जल रहे नेत्र सम अंगार करें ग्रसन सैन्य संग रावन || (१८-१९)

भावार्थ: माँ सीता भी पुष्पक विमान पर तुरंत विराजित हुईं| नेत्र अंगार के समान जल रहे थे जैसे रावण को सेना सहित निगल जाएं|

हो गए विराजमान जब हरि संग सीता भाई स्नेहन् |
करने लगे प्रतीक्षा पुष्पक दें आदेश गमन भगवन || (१८-२०)
देखे श्री राम रिपु-जित भट हैं तत्पर सब हेतु रन |
दी आज्ञा तब उड़ें पुष्पक ओर पुष्कर द्वीप तत्क्षन || (१८-२१)

भावार्थ: जब भगवान् (श्री राम) सीता जी, भाई एवं मित्रों के साथ (पुष्पक विमान पर) विराजित हो गए तब पुष्पक विमान प्रतीक्षा करने लगे कि प्रभु उन्हें चलने का आदेश दें| राम ने सभी शत्रुओं को जीतने वाले योद्धाओं की ओर देखा कि सभी युद्ध के लिए तत्पर हैं, तब पुष्पक (विमान) को पुष्कर द्वीप की ओर उड़ने की तुरंत आज्ञा दी|

उड़े विमान तब गति अति तीव्र सम मन और पवन |
पहुंचे निवास सहस्त्रमुख मानसोत्तर द्वीप तत्क्षन || (१८-२२)

भावार्थ: तब (पुष्पक) विमान मन और पवन समान तीव्र गति से उड़े| तुरंत ही वह सहस्त्रमुख (रावण) के निवास मानसरोवर के उत्तर द्वीप में पहुँच गए|

भट वीर संग राम आए पुष्कर समीप उसके भवन |
हुआ विस्मित सहस्त्रमुख रावण देख दृश्य विलक्षन || (१८-२३)

भावार्थ: पुष्कर (द्वीप) में राम वीर योद्धाओं के साथ आए विलक्षण दृश्य को देख सहस्त्र मुख रावण आश्चर्यचकित हो गया|

देख दुष्ट स्व-समक्ष किए सिंहनाद वानर रीछ युध्वन् |
खींचे धनुष हरि ओर रिपु दी ललकार लड़ें रन || (१८-२४)

भावार्थ: दुष्ट (सहस्त्रमुख रावण) को अपने समक्ष देख वानर और रीछ योद्धाओं ने सिंहनाद किया| भगवान् ने अपना धनुष खींच शत्रु को युद्ध के लिए ललकारा|

अति घोर रण नाद गूँज उठा भू शैल और गगन |
सुन सके स्वर भयंकर अपि पाताल वासी असुरगन || (१८-२५)

भावार्थ: अत्यंत घोर रण नाद से पृथ्वी, पर्वत और आकाश गूँज उठे| इस भयंकर स्वर को पाताल वासी असुरों ने भी सुना|

हुआ विस्मित सहस्त्रमुख नहीं समझा हेतु कुछ क्षन |
संभल फिर हो क्रोधित दिया आदेश सैन्य करो रन ||(१८-२६)

भावार्थ: कुछ क्षण के लिए सहस्त्रमुख (रावण) विस्मित हो गया और इसका कारण नहीं समझ सका| फिर संभलकर सेना को आदेश दिया कि युद्ध करो|

निकला दुर्ग संग सेना लड़ने युद्ध श्री राम भगवन |
था क्रोधित हुआ लाल चेहरा चबा रहा होंठ सनन || (१८-२७)
चमक रहे सहस्त्र सिर सम बारह आदित्य समासन |
किया घोर सिंहनाद बढ़ाया साहस स्व-सैन्यगन || (१८-२८)

भावार्थ: श्री राम से युद्ध लड़ने अपनी सेना सहित वह दुर्ग से निकला| क्रोध से उसका चेहरा लाल था और लगातार अपने होंठ चबा रहा था| उसके एक सहस्त्र शीश एक साथ बारह आदित्य के समान चमक रहे थे| अपनी सेना का साहस बढ़ाने के लिए घोर सिंहनाद किया|

लगता त्रस्नु वह युक्त द्वि सहस्त्र भुजा द्वि सहस्त्र नयन |
था क्रोध समान अग्नि बड़वा तत्पर करे भस्म द्वेषन || (१८-२९)

भावार्थ: दो सहस्त्र भुजा एवं दो सहस्त्र नेत्रों से युक्त वह डरावना लग रहा था| उसका क्रोध बड़वा अग्नि के समान लग रहा था जैसे शत्रुओं को तुरंत भस्म कर दे|

था वह युक्त शस्त्र सम परिघ प्रास तोमर दुर्धर्षन |
थे वह समान कांति रवि डरा रहे हृदय युद्धिवन || (१८-३०)

भावार्थ: वह परिघ, प्रास, तोमर समान घातक शस्त्रों से युक्त था| सूर्य की कांति के समान यह योद्धाओं के हृदय को भयभीत कर रहे थे|

थे अन्य कर युक्त भुशुण्डी वज्र परशु मुदगर शस्त्रिन् |
चक्र पाश धनुष बाण और अनेक सम शस्त्र त्रासिन् || (१८-३१)

भावार्थ: अन्य हाथ भुशुण्डी, वज्र, परशु, मुदगर, चक्र पाश,धनुष बाण, और अनेक समान डरावने शस्त्रों से युक्त थे|

हुए विस्मित सुग्रीव विभीषण आदि देख शस्त्र रावन |
थे तीव्र सम अर्ध चंद्र नश्तर करें रिपु तुरंत हनन || (१८-३२)

भावार्थ: रावण के शस्त्र देख सुग्रीव, विभीषण आदि (योद्धा) आश्चर्यचकित हुए| वह तीव्र अर्ध चंद्राकार छुरी के समान थे जो तुरंत शत्रु का वध कर दें|

हुआ प्रकट समक्ष वह धनुर्धर श्री राम भगवन |
सम उल्का जल रहे क्रोधित उसके द्वि सहस्त्र नयन || (१८-३३)

भावार्थ: वह धनुर्धर भगवान् श्री राम के समक्ष प्रकट हुआ| उसके द्वि सहस्त्र नेत्र उल्का के समान क्रोध में जल रहे थे|

करता हुआ वमन अग्नि मुख बोला वह कड़वे वचन |
हो कौन तुम हुआ साहस कैसे किए प्रवेश मेरे पट्टन || (१८-३४)

भावार्थ: मुख से अग्नि वमन करता हुआ कड़वे वचन बोला, 'तुम कौन हो? मेरे नगर में प्रवेश करने का साहस कैसे हुआ?'

कर सके साहस रिपु कोई सम्मुख विजयी त्रिभुवन |
है शर्मनाक यह मेरे लिए सुनो सभी इच्छुक रन ||
नहीं जानते क्या हैं इन्द्रादि लोकपाल मेरे निघ्न || (१८-३५)

भावार्थ: कोई शत्रु तीनों लोकों को जीतने वाले के सम्मुख साहस कर सके, हे युद्ध के इच्छुक सुनो, यह मेरे लिए शर्मनाक है| क्या नहीं जानते कि इन्द्रादि लोकपाल मेरे आधीन हैं?

रख सकूं स्वर्ग एक छिद्र पाताल और पाताल व्योमन |
सम भूसा कर एकत्रित भर सकूं एक भाजन भूजन || (१८-३६)

भावार्थ: मैं स्वर्ग को पाताल के एक छिद्र में और पाताल को स्वर्ग में रख सकता हूँ| सभी प्राणियों को भूसे के समान एकत्रित कर एक बोरे में भर सकता हूँ|

मिला सकूं धूल में मेरु सम शैल सुनो हे द्वेषन |
हूँ समर्थ कर सकूं देवलोक भूलोक में परिवर्तन ||
समझो सत्य सामर्थ्य बना सकूं भूलोक मैं व्योमन || (१८-३७)

भावार्थ: हे विरोधी सुनो, मेरु समान पर्वत को मैं धूल में मिला सकता हूँ (अर्थात उसका चूर्ण बना सकता हूँ)| भूलोक को देवलोक और देवलोक को भूलोक में परिवर्तित करने की सामर्थ्य मुझ में है|

हूँ समर्थ खुरच सकूं स्व-नख शेषनाग और भुवन |
किया आरम्भ यह पर रोका सुन विनती चतुरानन || (१८-३८)

भावार्थ: सामर्थ्य है की अपने नख से शेषनाग और पृथ्वी को खुरच सकता हूँ| यह मैंने आरम्भ कर भी दिया था पर ब्रह्मा की विनती पर रोक दिया|

न करते विनती यदि ब्रह्मा करता उन्मूलन भूजन |
करते निवास केवल दानव तब भू न कोई अन्य जन ||
करता निश्चय सौर चंद्र वर्ष पाद ले रूप सोम द्युवन् || (१८-३९)

भावार्थ: यदि ब्रह्मा विनती नहीं करते तो मैं पृथ्वी प्राणियों को नष्ट कर देता| वहां दानवों के अतिरिक्त कोई नहीं रहता| सूर्य और चन्द्रमा का रूप ले सौर और चंद्र वर्ष पाद स्थापित करता|

हूँ समर्थ लूँ रूप इंद्र करूँ मेघ वर्षा नियंत्रन |
करूँ निर्धारित भाग्य अग्नि जल और धन-राजन || (१८-४०)

भावार्थ: (मुझ में) सामर्थ्य है कि इंद्र का रूप ले मेघ और वर्षा को नियंत्रित करूँ| कुबेर, अग्नि और जल का भाग्य निर्धारित करूँ|

करते हुए बहु भांति इस प्रकार निरर्थक गर्जन |
संग सेनापति पहुंचा रावण समीप राम भगवन || (१८-४१)

भावार्थ: इस प्रकार बहु भांति अनर्गल गर्जन करता हुआ रावण अपने सेनापतियों के साथ राम भगवान् के पास पहुंचा|

थी सेना उसकी युक्त विविध शस्त्र बलशाली हनन |
चले इस भांति वह वीर डोल रही भार उनके भुवन || (१८-४२)

भावार्थ: उसकी सेना विभिन्न प्रकार के मारक बलशाली शास्त्रों से युक्त थी| यह वीर इस भांति चले कि उनके भार से पृथ्वी डोल रही थी|

सुनो महर्षि द्विज भारद्वाज नाम कुछ उन युद्धिवन |
थे उपस्थित कोटिश मनस शाल पाल हलीमुख पूरन || (१८-४३)
पिच्छल कौणप चक्र कालवेग प्रकालक कक्षक शरन ||
हिरण्यबाहु कालदंतक सूर सम सहस्त्रमुख रावन || (१८-४४)
पुछांदक मंडलक पिंडसेक्ता रभेणक उच्छीकन |
थे विद्यमान वीर करभ भद्र विश्वजेता और विरोहन || (१८-४५)
शिली शलकर मूक सुकुमार अजित वीर प्ररेशन |
मुद्गर शशरोमा सुरोमा महामुनि समान युद्धिवन || (१८-४६)

भावार्थ: हे महर्षि ब्राह्मण भारद्वाज, कुछ उन योद्धाओं के नाम सुनो| कोटिश, मनस, शाल, पाल, हलीमुख, पूरन, पिच्छल, कौणप, चक्र, कालवेग, प्रकालक, कक्षक, शरन, हिरण्यबाहु, कालदंतक उपस्थित थे जो सहस्त्रमुख रावण के समान ही शूरवीर थे| पुछांदक, मंडलक, पिंडसेक्ता, रभेणक, उच्छीकन, वीर, करभ, भद्र, विश्वजेता और विरोहन भी विद्यमान थे| शिली, शलकर, मूक, सुकुमार, अजित वीर प्ररेशन, मुद्गर, शशरोमा, सुरोमा, महामुनि समान योद्धा थे|

पारावत पारियात्र पाण्डुर क्रश विहंग हरिन |
थे अन्य वीर सम शरभ दक्षप्रमोद और सहातापन || (१८-४७)

भावार्थ: पारावत, पारियात्र, पाण्डुर, क्रश, विहंग, हरिन, शरभ, दक्षप्रमोद और सहातापन समान अन्य वीर थे|

थे अन्य मुख्य नाम कृकर कुंदर वैणी वैणीस्कंदन |
कुमारक बाहुक शंखवेग धूर्तक पात पातकन || (१८-४८)
पिटरक् कुटीरमुख सेचक पूर्णामुख शंकुकरन |
भाष शकुलि हरि आदि वीर प्रमुख दानव युद्धिवन || (१८-४९)

भावार्थ: अन्य प्रमुख दानव योद्धाओं के नाम थे, कृकर, कुंदर, वैणी, वैणीस्कंदन, कुमारक, बाहुक, शंखवेग, धूर्तक,पात, पातकन, पिटरक्, कुटीरमुख, सेचक, पूर्णामुख, शंकुकरन, भाष, शकुलि, हरि आदि|

अमाहिठ कामठक सुषेण मानस भैरव मुंड व्ययन |
देवांग चोडपालक सुन नाम जिन भागें रिपु क्षेत्र रन || (१८-५०)

भावार्थ: अमाहिठ, कामठक, सुषेण, मानस, भैरव, मुंड, व्ययन, देवांग, चोडपालक जिनके नाम सुन कर रिपु रणक्षेत्र से भाग जाते हैं|

ऋषभ वेगवान पिण्डारक महाहनु सम वीर महन |
रक्तांग सर्वसारङ्ग समृद्ध पाटक वासक युद्धिवन || (१८-५१)
वराहक रावणक सुत्रिच चित्रवेगिक पराशर अरुन |
तरुण मणिस्कंध सम लूँ कितने नाम श्रेष्ठ ब्राह्मन || (१८-५२)

भावार्थ: ऋषभ, वेगवान, पिण्डारक, महाहनु, रक्तांग, सर्वसारङ्ग, समृद्ध, पाटक, वासक, वराहक, रावणक, सुत्रिच, चित्रवेगिक, पराशर, अरुन, तरुण, मणिस्कंध समान महान योद्धा थे| हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, कितने नाम लूँ|

महर्षि कहे कुछ नाम ही मैंने जो थे मुख्य युद्धिवन |
थे अनगिनत योद्धा असंभव करूँ मैं सबका वर्णन || (१८-५३)

भावार्थ: हे महर्षि, मैंने कुछ ही सेना के मुखियों के नाम लिए हैं| अनगिनत योद्धा वहां थे जिनका वर्णन करना असंभव है|

नहीं कर सकता गिनती आए जो लड़ने रण युद्धिवन |
थे विविध आकार विविध रूप रक्त नील हेतु विष तन || (१८-५४)

भावार्थ: जो योद्धा युद्ध लड़ने आए उनकी गिनती नहीं कर सकता| वह विविध आकार, विविध रूप के थे जिनका रक्त शरीर में विष के कारण नीला था|

थे युक्त दो पांच सात शीश दानव सम काल वर्पन् |
समान कालानल महा घोर अग्नि थे उनके भीरु तन || (१८-५५)

भावार्थ: दो, पांच, सात शीश से युक्त यह दानव काल रूप थे| उनके डरावने शरीर महा घोर अग्नि के समान कालानल (मृत्यु देने वाली अग्नि) थे|

थे महाकाय समान शैल श्रृंग चलते द्रुति जवनिमन् |
लगते चौड़े कुछ एक कुछ दो और कुछ कई योजन || (१८-५६)

भावार्थ: पर्वत श्रेणी के समान महाकाय और तीव्र गति से चलने वाले थे| कुछ एक, कुछ दो, कुछ कई योजन चौड़े प्रतीत होते थे|

ले सकते मन चाहा रूप यह मायावी असुर दुर्जन |
समान दहकती अग्नि तप रहे थे उनके चमकीले तन ||
निःसंदेह थे वह शूरवीर साहसी बलशाली युद्धिवन || (१८-५७)

भावार्थ: वह मायावी दुष्ट असुर मन चाहा रूप धर सकते थे| उनके चमकीले तन दहकती अग्नि के समान जल रहे थे| निःसंदेह वह शूरवीर, साहसी और बलशाली योद्धा थे|

थे कुछ सेनापति युक्त दिव्य शस्त्र सुनो वह ब्राह्मन |
विभूषित विविध वेश कर रहे वह जय जयकार रावन || (१८-५८)

भावार्थ: हे ब्राह्मण सुनो, कुछ सेनापति दिव्य शस्त्रों से युक्त थे| विविध वेशभूषा में वह रावण की जय जयकार कर रहे थे|

थे वीर समान इंद्र जैसे नाम उनके पद्म उपकृष्न |
शंकुकर्ण निकुम्भ अनंत मुकुद द्वादसभुजा कृप्र || (१८-५९)

भावार्थ: इंद्र समान वीर उनके नाम थे, शंकुकर्ण, निकुम्भ, पद्म, अनंत, उपकृष्न, मुकुद, द्वादसभुजा, कृप्र|

घ्राणश्रवा कपिस्कंध कांचनाक्ष अक्षसन्तर्दन |
जलंधम कुन्दीक तमोभृकृत खड़े संग दुष्ट रावन || (१८-६०)
एकाक्ष द्वादसाक्ष एकजरा सहस्त्रबाहु क्षितिकम्पन |
विकत व्याघ्र जिनके समान वीर न कोई सुर भूजन || (१८-६१)

भावार्थ: दुष्ट रावण के साथ खड़े घ्राणश्रवा, कपिस्कंध, कांचनाक्ष, अक्षसन्तर्दन, जलंधम, कुन्दीक, तमोभृकृत, एकाक्ष, द्वादसाक्ष, एकजरा, सहस्त्रबाहु, क्षितिकम्पन, विकत, व्याघ्र के समान वीर न कोई सुर और प्राणी था|

पुण्यनाम अनुनाम सुवक्त्र परिश्रित हे ब्राह्मन |
कोकनद सेवक सुब्रमण्य प्रियमाल्यानुलेपन || (१८-६२)
अजोदर गजशिर स्कन्धाक्ष कराल जटी शतलोचन |
ज्वालाजिह्व सितकेश हरि वरदानस्त श्री जतिन || (१८-६३)
चतुर्द्दंष्ट्र ओष्टजिह्व मेघनाद पृथुश्रवन |
विकृताक्ष धनुर्वचक्र जाठर मारुताशन || (१८-६४)
उदराक्ष रथाक्ष वज्रनाभ वसुप्रभ नीति प्राज्ञ रन |
समुद्रवेग शैलकम्पी युक्त सामर्थ्य करें शैल खंडन || (१८-६५)
वृषमेशप्रवाह नन्द धूम्रश्वेत मायावी महन |
कलिंग उपनन्द सिद्धार्थ वरद रक्षित चतुरानन || (१८-६६)
प्रियक बहुवीर्य प्रतापवान अंगरक्षक रावन |
एकनंद आनंद प्रमोद स्वस्तिक ध्रुव अजित रन || (१८-६७)
क्षेमबाहु सिद्धिपात्र गौब्रज स्वामी महावन |
सुव्रत कानकापीड महापारिषदेश्वर महन || (१८-६८)
बाण वीरवान खड्ग कत्थक रावण निज मन्तु गायन |
वैताली गतिशाली वातिक विष्णु तपस्वी दमन || (१८-६९)

हंसज पंकदिग्धांग समुद्र रणोत्कट उन्मादन |
प्रहास वेतसिद्ध नन्दक युक्त वक्रखड्ग त्रिदशन || (१८-७०)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, पुण्यनाम, अनुनाम, सुवक्त्र,परिश्रित, कोकनद, सुब्रमण्यम सेवक प्रियमाल्यानुलेपन, अजोदर, गजशिर, स्कन्धाक्ष, कराल, जटी, शतलोचन, ज्वालाजिह्व ,सितकेश, महादेव के वरदानस्त हरि, चतुर्दंष्ट्र, ओष्टजिह्व, मेघनाद, पृथुश्रवन, विकृताक्ष, धनुर्वचक्र, जाठर, मारुताशन, उदराक्ष रथाक्ष, वज्रनाभ, युद्ध नीति निपुण वसुप्रभ, समुद्रवेग, शैलकम्पी जिसमें पर्वतों को खंडित करने की सामर्थ्य है,वृषमेशप्रवाह, नन्द, महा मायावी धूम्रश्वेत, कलिंग, उपनन्द, सिद्धार्थ, ब्रह्मदेव से रक्षित वरद, प्रियक, बहुवीर्य, रावण का अंगरक्षक प्रतापवान, एकनंद, आनंद प्रमोद, स्वस्तिक, युद्ध में अजित ध्रुव, क्षेमबाहु, सिद्धिपात्र, महावन का स्वामी गौब्रज, सुव्रत, कानकापीड, महान महापारिषदेश्वर, बाण, वीरवान, खड्ग, कत्थक, रावण का निजी सलाहकार गायन,वैताली, गतिशाली, वातिक, विष्णु तपस्वी दमन, हंसज, पंकदिग्धांग, समुद्र, रणोत्कट, उन्मादन, प्रहास, वेतसिद्ध, दिव्य तलवार से युक्त नन्दक|

यह सब सेनापति असुर हो सवार निज निज वाहन |
युक्त घातक शस्त्र चले करने रण श्री राम भगवन || (१८-७१)

भावार्थ: यह सब असुर सेनापति घातक शास्त्रों से युक्त अपने अपने वाहन पर सवार हो श्री राम भगवान् से युद्ध करने चले|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रावण की सेना का निकलना' नाम अष्टादश सर्ग समाप्त|

नवदश सर्ग
सहस्त्रमुखी रावण के पुत्रों का युद्ध को चलना

चले करने युद्ध पुत्र सहस्रमुख रावण संग परिजन |
थे युक्त दिव्यास्त्र पूर्ण आत्मविश्वास जीतें रन || (१९-१)

भावार्थ: सहस्रमुख रावण के पुत्र अपने अनुयायीओं के साथ युद्ध करने चले| वह दिव्यास्त्रों से युक्त थे और पूर्ण आत्मविश्वास था कि युद्ध जीतेंगे|

कहूँ मैं नाम अब पुत्र सहस्त्रमुख रावण हे ब्राह्मन |
कालकण्ठ प्रभाष कुम्भाडक कालकक्ष शित उन्मथन || (१९-२)
भूतक यज्ञवाहु प्रवाहु देवयाजी सोमप वारन |
थे यह सभी दैवीय शस्त्रधारी और युद्ध निपुन || (११-३)
हैं अन्य नाम महातेजस्वी मज्जाल घटक क्रथन |
क्राथ वसुव्रत तुहर तुहार चित्रदेव वीर्यवन || (११-४)
मधुर मायावी वसन जो समर्थ ढक सके सेना छादन |
सुप्रसाद महाबली किरीट कलशोदर मधुवर्न || (११-५)
धर्मद मन्मथकर सुचिवक्तृ श्वेतवक्त्र सुवक्त्रन |
चारुवक्त्र सम शिला शैल अति वीर पांडुरन || (११-६)
दंडबाहु कोकिलक बालेश सेनापति अति निपुन |
सुबाहु अचल कालाकाक्ष बालभक्षक अग्रेय दुर्जन || (११-७)
सज्ञानक कोकनद गृध्रपत्र जम्बूक बलशाली जवन |
कुम्भवत्र लोहाजवक्त्र युक्त उग्र लाल मेक वदन || (११-८)
मुंडग्रीव कृष्णौजा हंसवक्त्र कुंजर थे पुत्र रावन |
थे वह सभी महाबली पराक्रमी युद्ध कला निपुन || (११-९)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, अब मैं सहस्त्र मुख रावण के पुत्रों के नाम बताता हूँ| कालकण्ठ, प्रभाष, कुम्भाडक, कालकक्ष, शित, उन्मथन, भूतक, यज्ञवाहु, प्रवाहु, देवयाजी, अजित सोमप, यह सभी दैवीय शस्त्रधारी और युद्ध में निपुण थे| अन्य नाम हैं, महातेजस्वी, मज्जाल, घटक, क्रथन, क्राथ, वसुव्रत, तुहर, तुहार, चित्रदेव, वीर्यवन, मधुर, मायावी वसन जो सेना को आवरण में ढकने में समर्थ था, सुप्रसाद, महाबली,

किरीट, कलशोदर, मधुवर्न, धर्मद, मन्मथकर ,सुचिवक्तृ, श्वेतवक्त्र, सुवक्त्रन, चारुवक्त्र, पर्वत की शिला के समान अति वीर पांडुरन, दंडबाहु, कोकिलक, अत्यंत निपुण सेनापति बालेश, सुबाहु, अचल, कालाकाक्ष, अग्नि समान दुष्ट बालभक्षक, सज्ञानक, कोकनद, गृध्रपत्र, जम्बूक, बलशाली जवन, कुम्भवत्र, भयावह लाल बकरे के मुख वाला लोहाजवक्त्र, मुंडग्रीव, कृष्णौजा, हंसवक्त्र ,कुंजर, यह रावण के पुत्र थे| वह सभी महाबली, पराक्रमी और युद्ध कला में निपुण थे|

करते हुए भयानक सुर स्व-शस्त्र पहुंचे समीप भगवन |
कर सिंहनाद घेरीं इन्होंने दसों दिशाएं क्षेत्र रन || (१९-१०)

भावार्थ: अपने शस्त्रों से भयानक स्वर करते हुए यह भगवान् के समीप पहुंचे| सिंहनाद करते हुए इन्होंने युद्ध के क्षेत्र की दसों दिशाओं को घेर लिया|

थे यह सब विभिन्न आकार असुर मुख प्रकार भिन्न |
कूर्म कुक्कुट दन्त समान सर्प लिए आयुध मारन || (१९-११)

भावार्थ: सब असुर विभिन्न प्रकार के आकार और विभिन्न प्रकार के मुख,कछुए, मुर्गा, सर्प समान दन्त, वाले थे| वह प्राण घातक शस्त्र लिए थे|

कुछ समान सियार कुछ खरगोश कुछ खर आसन |
कुछ ऊँट कुछ वन वराह थे इस प्रकार भिन्न भिन्न || (१९-१२)

भावार्थ: कुछ के मुख सियार, कुछ खरगोश, कुछ गधा, कुछ ऊँट और कुछ वन सूकर समान भिन्न भिन्न प्रकार के थे|

कुछ मुख समान भेड़ कुछ मार्जार और कुछ भूजन |
कुछ लघु कुछ विशाल कुछ चपटे कुछ लम्बे आनन || (१९-१३)

भावार्थ: किसी के मुख भेड़ जैसे, किसी के बिल्ली जैसे और कुछ मनुष्यों जैसे थे| किसी का मुंह छोटा, किसी का बड़ा, किसी का चपटा और किसी का लंबा था|

थे विभिन्न प्रकार मुख जैसे नेवला उल्लू दिवाटन |
मूषक सर्प रूप वभ्रु मोर आदि आदि कोटिगुन || (१९-१४)

भावार्थ: मुख जैसे नेवला, उल्लू, काक, चूहा, सर्प समान वभ्रु, मोर आदि आदि विभिन्न असंख्य प्रकार के थे|

मत्स्य बकरा रीछ बाघ सिंह समान भयानक पशु वन |
कितने ही प्रकार के थे मुख इन असुर दानव दुष्टजन || (१९-१५)

भावार्थ: मछली, बकरा, रीछ, बाघ, शेर समान भयानक वन पशु, कितने ही प्रकार के इन असुर दानव दुष्टों के मुख थे|

थे कुछ के मुख समान क्रोधित क्रूर कञ्जर घातिन |
कुछ समान नर भक्षी नाक कुछ बैल कुछ दंष्ट्रजन || (१९-१६)

भावार्थ: कुछ के मुख क्रूर क्रोधित भंयकर गज, कुछ के नर भक्षी नाक, कुछ बैल के समान और कुछ तीव्र दन्त के थे|

थे कुछ पतले कुछ मोटे कुछ लघु पग कुछ दीर्घ चरन |
कुछ के नेत्र कुचित कुछ प्रथुल कुछ दुर्मुख विलक्षन || (१९-१७)

भावार्थ: कुछ पतले थे, कुछ मोटे थे, कुछ के पग छोटे थे, कुछ के लम्बे| कुछ के नेत्र सकरे और कुछ के फैले हुए थे| कुछ विलक्षण कुरूप मुख वाले थे|

थे कुछ के मुख समान खग जैसे कोकिल बाज कृकन |
कुछ वन कुलाहक आदि पहने सब श्वेत युद्ध आभरन || (१९-१८)

भावार्थ: कुछ के मुख पक्षियों जैसे कोकिल, बाज और तीतर, कुछ के वन छिपकली आदि थे| वह सब श्वेत युद्ध परिधान पहने थे|

थे विचित्र मुख समान व्याल कुछ शुक कुछ शुभानन |
कुछ उखाड़ वृक्ष कुछ शिला कुछ बाण फेंकते दुष्टजन || (१९-१९)

भावार्थ: विचित्र मुख वाले जैसे कुछ भेड़िया, कुछ तोता और कुछ सुन्दर तन वाले थे| दुष्ट प्राणी कुछ वृक्ष उखाड़ कर, कुछ पत्थर और कुछ बाण फेंकते थे|

थे कुछ के शीश सम अश्व कुछ के कर्ण गज पंखावरन |
पहने कंठ कुछ सर्प माला कुछ घटक उरग सम वृश्चन || (१९-२०)

भावार्थ: कुछ के शीश घोड़े के समान थे, कुछ के कान हाथी समान पंख रूपी थे| कुछ गले में सर्पों की और कुछ घातक उरग (उदार के बल चलने वाले प्राणी) जैसे बिच्छू की माला पहने हुए थे|

पहने कुछ वस्त्र बने गज चर्म और कुछ कृष्णवर्न |
हे श्रेष्ठ महर्षि थे कुछ के मुख निहित स्कंध कुछ वक्षन || (१९-२१)

भावार्थ: कुछ हाथी के चमड़े से बने वस्त्र पहने थे और कुछ काले रंग के| हे श्रेष्ठ महर्षि, कुछ के मुख कन्धों में थे और कुछ के उदर में|

थे कुछ के मुख स्थित पीठ और कुछ के कपि वर्पन् |
थे कुछ के मुख संलग्न उरु और कुछ के अन्य अंग तन || (१९-२२)

भावार्थ: कुछ के मुख पीठ पर स्थित थे और कुछ के बन्दर समान| कुछ के मुख जंघा में लगे थे और कुछ के शरीर के अन्य भागों में|

कुछ के मुख सम कृकन कीट कुछ क्रूर सिंह विषानन |
युक्त आयुध मारक सभी वीर बली साहसी महन || (१९-२३)

भावार्थ: कुछ के मुख कीट कृमि समान थे कुछ के क्रूर सिंह और सर्प| सभी मारक शस्त्रों से युक्त अत्यंत वीर, बली और साहसी थे|

भिन्न भिन्न तन वक्ष भुजा पग सम मुख अजगर वनश्वन् |
कुछ समान खग गरुड़ तत्पर खाएं शत्रु सम विषानन || (१९-२४)

भावार्थ: भिन्न भिन्न शरीर, वक्ष, भुजा और पैर अजगर और लोमश के समान थे| कुछ गरुड़ पक्षी के समान थे जो शत्रुओं को सर्प समान खाने को तत्पर हैं|

करते विस्मित वस्त्र उनके जैसे ढीले कुर्ते पहने तन |
कुछ पहने वस्त्र सम कवच कठिन करूँ सब विवरन ||
पहने कंठहार प्रकार भिन्न अवलिप्त विविध गंध तन || (१९-२५)

भावार्थ: उनके वस्त्र आश्चर्यजनक थे, जैसे ढीले कुर्ते शरीर पर पहने थे तो कुछ कवच समान वस्त्र| सब विवरण करना अति कठिन है| अनेक प्रकार की कंठ माला पहने थे और विविध प्रकार के गंध शरीर पर लेपित थे|

थे नाना प्रकार आवरण त्वच मुकुट और शिरस्त्रन |
ग्रीवा सम शंख हो रहा था प्रज्वलित सम अग्नि तन || (१९-२६)

भावार्थ: नाना प्रकार के उनके वस्त्र, खाल, मुकुट और शिरस्त्राण थे| उनकी गर्दन शंख के समान थी| उनके शरीर अग्नि के समान प्रज्वलित हो रहे थे|

अनुसार शीश सम एक दो तीन पांच या दस गणन |
पहने अनगिनत शिखाएं करने स्व-शीश वज्र सलक्षन || (१९-२७)

भावार्थ: शीश की संख्या के अनुसार जैसे एक, दो, तीन, पांच या दस, वह अनगिनत शिखाएं अपने शीश को वज्र समान बनाने पहने थे|

थे कुछ जटाधारी लग रहीं जटा सम शिरोभूषन |
परंतु थे कुछ जटाहीन अकेश देख हो अति भयन || (१९-२८)

भावार्थ: कुछ जटाधारी थे जिनकी जटाएं शीश कवच लग रहीं थीं| परन्तु कुछ केशहीन गंजे थे जिन्हें देख डर लग रहा था|

थे अजेय यह सब असुर योद्धा सम्मुख देव भूयुध्वन् |
कृष्ण वर्ण अमांस मुख दीर्घ पृष्ठ उदर अति महन || (१९-२९)

भावार्थ: यह सब असुर योद्धा देव और पृथ्वी के शूरवीरों से अजेय थे| काले वर्ण, मुख पर बिना मांस, विशाल पीठ और वृहद पेट वाले थे|

कहा जैसे थे कुछ दीर्घ पृष्ठ कुछ स्थूल पृष्ठ युध्वन् |
कुछ पतले बिन मांस कुछ मोटे कठिन जिन्हें चलन ||
कुछ महाभुज सम पाद अग्र गज कुछ रूप वामन || (१९-३०)

भावार्थ: जैसा कहा कुछ योद्धा वृहद पीठ वाले कुछ छोटी पीठ वाले, कुछ पतले जैसे बिना मांस, कुछ मोटे जिनके लिए चलना कठिन था, कुछ हाथी के अग्र पद के समान महाभुज और कुछ बौने थे|

कुछ कुबड़े कुछ युक्त सम गज शीश नासिका श्रवन |
कुछ नटुक सम शुण्ड गज कुछ धूर्तक कुछ भेक थूथन || (१९-३१)

भावार्थ: कुछ कुबड़े थे| कुछ की नाक, कान, शीश हाथी के समान थे| कुछ की नासिका हाथी की शुण्ड के समान, कुछ सिया और कुछ की मेढक के थूथन समान थी|

थे कुछ युक्त नासिका सम बाण अग्र कुछ छिन्नभिन्न |
कुछ के कर्ण सम चक्र रथ कुछ पीत वर्णयुक्त नयन ||
कुछ अलंकृत भव्य दीप्तिमान लगते थे अति मोहन || (१९-३२)

भावार्थ: कुछ की नाक बाण के अग्र भाग के समान (नुकीली) थी, कुछ की विकृत| कुछ के कान रथ के चक्र के समान थे,कुछ की आँखें पीत वर्ण की थीं| कुछ भव्य, दीप्तिमान, अलंकृत, अति मोहक लग रहे थे|

कुछ के दंत वृहद कुछ के विकृत भयंकर दारुन |
कुछ के शिथिल ओंठ कुछ शीश सम वृहद महीधरन ||
कुछ युक्त बहु पग कर अधर सर और दन्त पंक्तिन || (१९-३३)

भावार्थ: कुछ के दांत बड़े थे, कुछ के भयंकर, दारुण और विकृत थे|कुछ के ओंठ शिथिल थे| कुछ के शीश पर्वत के समान बड़े थे| कुछ अनेक पैर, हाथ, ओंठ, शीश और दन्त पंक्तियों से युक्त थे|

पहने आवरण प्रकार अनेक कर सकें सुरक्षा रन |
लग रही थी सेना असुर भयानक हे श्रेष्ठ ब्राह्मन || (१९-३४)

भावार्थ: हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, युद्ध में सुरक्षा हेतु अनेक प्रकार के आवरण पहनी असुर सेना अति भयानक लग रही थी|

थे कुछ दीर्घ शीश कुछ दीर्घ नख कुछ दीर्घ गर्दन |
कुछ नीलकंठ कुछ पीत नेत्र कुछ कर्ण सम स्वर्न || (१९-३५)

भावार्थ: कुछ लम्बे शीश, कुछ लम्बे नाखून, कुछ लम्बी गर्दन, कुछ नीलकंठ (कंठ जिनके नीले थे), कुछ पीले नेत्र और कुछ के कान स्वर्ण समान थे|

कुछ वृकोदर कुछ श्वेत नेत्र कुछ समान शैल महन |
कुछ के कंठ लाल कुछ नील और कुछ के रंग विभिन्न || (१९-३६)

भावार्थ: कुछ वृक (भेड़िया) समान उदर के, कुछ श्वेत नेत्र, कुछ बड़े पर्वत के समान, कुछ के लाल कंठ, कुछ के नीले और कुछ के विभिन्न रंग थे|

कुछ कृष्ण भुज कुछ पट्ट भुज सब भिन्न भिन्न रंग तन |
कुछ भुज सम मोर शिखा युक्त श्वेत या कृष्ण रोमन || (१९-३७)

भावार्थ: कुछ की काली भुजा,कुछ की धारीदार, सब भिन्न भिन्न तन वर्ण के थे| कुछ की भुजाएं श्वेत या काली मोर शिखा समान पंख से युक्त थीं|

चमक रहे कुछ सम स्वर्ण कुछ सुन्दर सम मोर मोहन |
कुछ के कर युक्त हार कुछ पाश और कुछ उद्बन्धन ||
लग रहे कुछ समान खर लगता मुख फैला योजन || (१९-३८)

भावार्थ: कुछ स्वर्ण के समान चमक रहे थे| कुछ मोर के समान सुन्दर मोहित कर रहे थे| कुछ के हाथों में हस्तमाल, कुछ के फंदा और कुछ के गुलेल थी| कुछ गधे के समान लग रहे थे जिनका मुख योजन तक फैला लगता था|

थे कुछ के कर आयुध सम शतघ्नी चक्र आकार वपन |
कुछ लिए मुद्गर कुछ दंड थे तत्पर करें आक्रमन || (१९-३९)

भावार्थ: कुछ के हाथों में शतघ्नी, चक्र और छुरे के आकार के समान शस्त्र थे| कुछ मुद्गर और कुछ दंड लिए आक्रमण करने को तत्पर थे|

कुछ के हस्त गदा कुछ भुशुण्ड और कुछ तोमर प्रहरन |
युक्त घातक अस्त्र लग रही असुर सेना उग्र जित्वन् || (१९-४०)

भावार्थ: कुछ हाथों में गदा, कुछ भुशुण्ड और कुछ तोमर अस्त्र लिए थे| घातक शास्त्रों से युक्त असुर सेना उग्र और अजेय लग रही थी|

निःसंदेह लग रही सेना बली जीत सके रिपु अयत्न |
असंख्य असुर बजाते ढोल करते थे नृत्य क्षेत्र रन || (१९-४१)

भावार्थ: निःसंदेह सेना बलशाली लग रही थी जो बिना प्रयत्न के शत्रु को जीत सके| असंख्य असुर ढोल बजाते हुए युद्ध क्षेत्र में नृत्य कर रहे थे|

करने लगे प्रहार असंख्य विकृत क्रूर असुर युध्वन् |
कहते क्रूर वचन सम पकड़ो मारो भागे ओर भगवन || (१९-४२)

भावार्थ: असंख्य विकृत क्रूर असुर योद्धा प्रहार करने लगे| 'पकड़ो', 'मारो' समान क्रूर वचन बोलते हुए वह भगवान् की ओर भागे|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'सहस्त्रमुखी रावण के पुत्रों का युद्ध को चलना' नाम नवदश सर्ग समाप्त|

विंशति सर्ग
संकुल युद्ध वर्णन

है कौन कहाँ से आया यह रिपु सोचने लगा रावन |
हो क्रोधित कर टंकार साधा धनुष ओर भगवन || (२०-१)

भावार्थ: रावण सोचने लगा, 'यह शत्रु कौन है और कहाँ से आया है'| क्रोधित हो टंकार करते हुए उसने धनुष भगवान् की ओर साधा|

हुई उस काल वाणी गगन सुन हे सहस्त्रमुख रावन |
हेतु वध तेरा पधारे अवध नृप श्री रामचंद्र भगवन || (१०-२)

भावार्थ: उस समय आकाशवाणी हुई, 'हे सहस्त्र मुख रावण सुन, अवध नरेश श्री राम चंद्र भगवान् तेरे वध हेतु पधारे हैं|'

हैं यह धर्म स्वरुप अवतार स्वयं श्री जनार्दन |
किए वध यह लंकापति दशमुख रावण सहित परिजन || (२०-३)

भावार्थ: यह स्वयं श्री विष्णु के अवतार धर्म स्वरूप हैं| यही लंकापति दशमुख रावण का परिवार सहित वध किए|

किए यह रण संग भ्राता रावण कपि भालू और ऋक्षन |
पा विजय लंका दिए राज दशमुख भ्राता विभीषन || (२०-४)

भावार्थ: इन्होंने (लंकापति) रावण के साथ भाई (लक्ष्मण), भालू और रीछों के साथ युद्ध किया| लंका पर विजय पाकर दशमुख (रावण) के भाई विभीषण को राज्य दे दिया|

हुआ अति क्रोधित सहस्त्रमुख रावण सुन नभ वचन |
है यह रिपु घोर मेरा किया वध इसने भ्राता दशानन || (२०-५)

भावार्थ: यह आकाशवाणी सुन सहस्त्र मुख रावण अत्यंत क्रोधित हुआ| यह मेरा घोर शत्रु है| इसने मेरे भाई दशानन (लंकापति रावण) का वध किया है|

करो वध इसका तुरंत दिया आदेश स्व-सेना रावन |
हुआ कैसे साहस जो करे युद्ध मुझ अजेय त्रिभुवन || (२०-६)

भावार्थ: 'इसका तुरंत वध करो', यह आदेश रावण ने अपनी सेना को दिया| इसका साहस कैसे हुआ कि मुझ त्रिभुवन अजेय से युद्ध करे|

सुन आदेश नृप भागा असुर सैन्यदल ओर भगवन |
छोड़े स्वयं भी बाण घातक घेर पुष्पक वायुवाहन ||
साथ में चक्र तोमर आदि आयुध फेंके ओर द्विषन || (२०-७)

भावार्थ: अपने स्वामी का आदेश पा असुर सैन्यदल भगवान् की ओर दौड़ा| स्वयं भी उसने पुष्पक विमान की ओर घातक बाण और शत्रुओं की ओर चक्र, तोमर आदि शस्त्र फेंके|

खाने लगे असुर कर वध ऋक्ष वानर प्रभु सैन्यगन |
मारो काटो खाओ स्वर गूँज रहा चंहु ओर क्षेत्र रन || (२०-८)

भावार्थ: रीछ, वानर आदि प्रभु की सेना का वध कर असुर उन्हें खाने लगे| चारों और युद्ध क्षेत्र में 'मारो, काटो, खाओ' का स्वर गूंजने लगा|

चलाते बाण घातक फेंकते घोर गिरि असुर सैन्यगन |
करें नष्ट समस्त रिपु राम सैन्यदल कर रहे घोर यत्न || (२०-९)

भावार्थ: घातक बाण चलाते, विशाल पर्वतों को फेंकते असुर सेना गहन प्रयास कर रही थी कि शत्रु राम की सेना को नष्ट कर दें|

निःसंदेह सैन्यदल द्वि ओर पूर्ण साहस असाधारन |
कर रहे थे वध एक दूजे असुर वानर ऋक्ष भूजन || (२०-१०)

भावार्थ: निःसंदेह दोनों ओर का सैन्यदल साहस से पूर्ण और उत्कृष्ट था| असुर (रावण की सेना) एवं वानर, ऋक्ष और प्राणी (प्रभु श्री राम की सेना) एक दूसरे का वध कर रहे थे|

देख कर रहे प्रहार भीषण चंहु ओर असुर सैन्यगन |
हुए क्रोधित राम भ्राता भरत लक्ष्मण और शत्रुघ्न || (२०-११)
ले अस्त्र कूदे तुरंत रण सुग्रीव जामवंत पुत्र-पवन |
संग वीर नल नील और विभीषण करने लगे घोर रन || (२०-१२)

भावार्थ: चारों ओर असुर भीषण प्रहार कर रहे हैं, यह देख श्री राम के भाई भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न क्रोधित हुए| सुग्रीव, जामवंत, हनुमान वीर नल, नील और विभीषण के साथ अस्त्र ले वह भी घोर युद्ध करने लगे|

करते कोलाहल करने लगे खेल संग असुर युद्धिवन |
कपि ऋक्ष मनुज सेना श्री राम थी उत्कृष्ट क्षेत्र रन || (२०-१३)

भावार्थ: कोलाहल करते हुए वह असुर योद्धाओं के साथ क्रीड़ा करने लगे| श्री राम की सेना, वानर, रीछ और प्राणी, युद्ध क्षेत्र में अति उत्तम थी|

हुई चपल भू सुन कोलाहल सैन्यदल राम भगवन |
स्वर सिंहनाद द्वि सैन्य असुर और राम गूंज़ा गगन || (२०-१४)

भावार्थ: राम भगवान् की सेना के कोलाहल से पृथ्वी चलायमान हो गई| दोनों सेना, असुर और राम, के सिंहनाद स्वर से आकाश गूँज उठा|

करने लगे रण बली असुर युक्त उत्साह हो प्रसन्न |
ले शिला हस्त दौड़ें ओर सैन्य वानर ऋक्ष भूजन || (२०-१५)
असुर सेना भिड़ गई सैन्यदल श्री राम भगवन |
चंहु ओर था स्वर भयानक रथ अश्व और गज कङ्कन || (२०-१६)

भावार्थ: बलवान असुर उत्साह में प्रसन्न होकर युद्ध करने लगे| अपने हाथों में शिलाएं लेकर वह वानर, रीछ और प्राणियों की सेना की ओर दौड़े| असुर सेना श्री राम भगवान् की सेना से भिड़ गई| चारों ओर अश्व और हाथी के रथों के कङ्कण का भयानक स्वर था|

उठाए असुर शिला और शस्त्र समान नीलमेघ महन |
चहुँ ओर देख सकें केवल दीप्तमत अग्नि प्रतिदिवन् || (२०-१७)

भावार्थ: असुर विशाल नीलमेघ के समान शिला और शस्त्र उठाए थे| चारों ओर केवल प्रज्वलित अग्नि और सूर्य ही दिखाई देता था|

देख आक्रमण असुर हुई   क्रोधित सेना भगवन |
हो एकत्रित करने लगे प्रहार सम वज्र यह युद्धिवन || (२०-१८)

भावार्थ: असुरों का आक्रमण देख भगवान् की सेना क्रोधित हुई| यह योद्धा एकत्रित होकर वज्र के समान प्रहार करने लगे|

उखाड़ वृक्ष शैल करने लगे वर्षा कपि प्रति रावन |
अति बलधारी सैन्यबल हरि किए पीड़ित द्विषन || (२०-१९)

भावार्थ: वृक्ष और पर्वत उखाड़ कर वानर रावण पर वर्षा करने लगे| अत्यंत बलशाली प्रभु का सैन्यदल विरोधियों को पीड़ित करने लगा|

करने लगे हाहाकार वीर सैन्यदल सहस्त्रानन |
थे अति क्रोधित वानर ऋक्ष मनुज सेना भगवन || (२०-२०)

भावार्थ: सहस्त्र मुख (रावण) के वीर सैन्यदल हाहाकार करने लगे| भगवान् की सेना के वानर, रीछ और प्राणीगण अत्यंत क्रोधित थे|

कोई सवार रथ गज कोई अश्व करें प्रहार नैधन |
कोई पैदल कूद कूद कर करें वानर असुर हनन || (२०-२१)

भावार्थ: कोई हाथी रथ, कोई घोड़ा रथ पर सवार प्राण घातक प्रहार करने लगे| कोई पैदल वानर (सेना) कूद कूद कर असुरों का वध करने लगे|

मुष्टी प्रहार से वानर ऋक्ष निकालें असुर नयन |
हो कम्पित तब गिर पड़ें वीर सेना असुर तल भुवन || (२०-२२)

भावार्थ: मुक्के के प्रहार से वानर और रीछ असुरों के नेत्र निकाल देते थे| तब असुर सेना के वीर कम्पित हो पृथ्वी पर गिर पड़ते थे|

हुई भू लाल असुर रक्तमय हेतु प्रहार सेना भगवन |
तड़प रहे घायल वीर असुर यहां वहां क्षेत्र रन || (२०-२३)

भावार्थ: भगवान् की सेना द्वारा मारे गए असुरों के रक्त से पृथ्वी लाल हो गई| युद्ध क्षेत्र में यहां वहां वीर असुर घायल हो तड़प रहे थे|

हो क्रोधित तब किए प्रतिवार असुर सैन्यदल भगवन |
तोड़ वृक्ष शैल शिलाखंड आदि किए रण वह असुरगन || (२०-२४)

भावार्थ: तब क्रोधित हो असुर सेना ने भगवान् की सेना पर प्रतिवार किया| वह असुर वृक्ष, गिरि शिलाखंड आदि तोड़ युद्ध किए|

भिड़ रहे अश्वरथी रथी से गजरथी गज आधोरन |
पिस रहे मध्य पैदल सैन्यदल इन गज अश्व रथीगन || (२०-२५)

भावार्थ: अश्वरथी (अश्व) रथी से और गजरथी गज पर सवारों से भिड़ रहे थे| पैदल सैन्यदल इन गज और अश्व रथियों के मध्य पिस रहे थे |

कर रहे समूह असुर वानर एक दूजे का मर्दन |
कर रहे इस प्रकार असुर सैन्य हरि सेना ताड़न || (२०-२६)

भावार्थ: असुर और वानर समूह एक दूसरे को पीस रहे थे| इस प्रकार असुर सेना भगवान् की सेना को प्रताड़ित कर रही थी|

कर रहे प्रहार असुर उखाड़ वृक्ष और शिला खण्डन |
कर रहे प्रतिवार वानर वीर कर शस्त्र उनके छेदन || (२०-२७)

भावार्थ: असुर वृक्ष और शिला खंड से प्रहार कर रहे थे| वीर वानर उनके शस्त्रों को निस्तार कर उन पर प्रतिवार कर रहे थे|

करते हुए प्रहार द्वि पक्ष इस प्रकार हे ब्राह्मन |
करते क्रंदन निर्दत गरज रहे सम सिंह क्षेत्र रन || (२०-२८)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, इस प्रकार दोनों पक्ष प्रहार करते हुए हिंसक क्रंदन कर सिंह के समान युद्ध क्षेत्र में गरज रहे थे|

प्रहार वानर ऋक्ष कर न सकें असुर सैन्य सहन |
हो रही रंगित भू रंग लाल हेतु रुधिर इन दुष्टजन || (२०-२९)

भावार्थ: वानर और रीछों के प्रहार को असुर सेना सहन नहीं कर पा रही थी| इन दुर्जनों के रक्त से पृथ्वी लाल रंग की हो रही थी|

लग रही विजय सुनिश्चित शिविर सैन्य राम भगवन |
जान यह दशा हुआ क्षोभ नगर असुर सहस्त्रानन || (२०-३०)

भावार्थ: राम भगवान् के सेना शिविर में उनकी विजय निश्चित लग रही थी| यह स्थित जान असुर सहस्रमुख रावण के नगर में क्षोभ हुआ|

देख हो रही सेना असुर विसर्जित ताड़ित भग्न |
कर प्रशस्ति गर्जन नाच रहे सुर ऋषि हो प्रसन्न ||
बढ़ा रहे उत्साह वानर ऋक्ष भूजन सैन्य धर्मजन || (३०-३१)

भावार्थः असुर सेना को विसर्जित, ताड़ित और भग्न हुई देख प्रशंसा से गर्जन करते हुए देवता और ऋषिगण प्रसन्न हो नाच रहे थे| वह धार्मिक जन वानर, रीछ और प्राणियों की सेना (श्री राम की सेना) का उत्साह बढ़ा रहे थे|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'संकुल युद्ध वर्णन' नाम विंशति सर्ग समाप्त|

एकविंशति सर्ग
रावण का राम की सेना को विक्षेप करना

जान हुई सेना मम भग्न हुआ अति क्रोधित रावन |
हो सवार रथ द्रुत गति चपल गतित समान पवन ||
किया प्रवेश सम तन्तुनाग चक्र सैन्यदल भगवन || (२१-१)

भावार्थ: यह जान कि मेरी सेना भग्न हो रही है, रावण अति क्रोधित हुआ| पवन के समान चलने वाले चपल, द्रुति गति रथ में सवार हो वह तंतुनाग (शार्क) के समान भगवान् की सेना के व्यूह में घुस गया|

हुए भयभीत वानर ऋक्ष देख उग्र रूप सहस्त्रानन |
हुआ अति प्रसन्न देख दयनीय दशा सेना द्विषन ||
करूँ वध राम संग सेना तुरंत करने लगा यह मन्मन् || (२१-२)
पर नहीं लगता उचित यह सोचे तत्क्षण चैतन्य मन |
आए छोड़ यह क्षुद्र घर संपत्ति लगा रहे बाजी तन || (२१-३)

भावार्थ: सहस्रमुख रावण का उग्र रूप देख वानर, रीछ भयभीत हो गए| विरोधी पक्ष की यह दयनीय दशा देख वह अति प्रसन्न हुआ| राम सहित सेना का तुरंत वध करूँ, ऐसी इच्छा करने लगा| परन्तु तत्क्षण उसका चैतन्य मन विचार करने लगा कि यह उचित नहीं है| यह क्षुद्र अपना घर संपत्ति छोड़ अपने प्राणों की बाजी लगा रहे हैं|

आए द्वीप पुष्कर करने रण मुझ से पा सकें धामन् |
क्या मिलेगा मुझे कर वध इन निर्दोष प्राणीजन || (२१-४)

भावार्थ: पुष्कर द्वीप में यह मुझ से युद्ध करने आए हैं ताकि इन्हें यश मिले| इन निर्दोष प्राणियों का वध कर मुझे क्या मिलेगा?

भेजूं स्व-बल देश उनके आए जहां से यह युद्धिवन |
नहीं मिलता शौर्य कर वध क्षुद्र वानर ऋक्ष भूजन || (२१-५)

भावार्थ: अपने बल से इन योद्धाओं को उनके देश भेज देता हूँ जहां से यह आए हैं| क्षुद्र वानर, रीछ और भू प्राणियों को मारने से कोई यश नहीं मिलता|

कर विचार किया आरूढ़ धनुष बाण वायव्य रावन |
था अति प्रभावी बाण हुआ तुरंत प्रभाव प्रति द्विषन || (२१-६)
लौटे देश आए जहां से सभी वानर ऋक्ष भूजन |
जैसे पकड़ गलबन्द निकालें बलात चोर रक्षक राजन || (२१-७)

भावार्थ: यह विचार कर रावण ने अपने धनुष पर 'वायव्य' बाण चढ़ाया| यह अति प्रभावशाली बाण था जिसका विरोधियों पर तत्काल प्रभाव हुआ| सभी वानर, रीछ तथा प्राणी अपने देश लौटे जैसे गला पकड़कर बलात राज्य रक्षक (सिपाही) चोर को निकालते हैं|

देख स्व-गृह करने लगे विचार वानर आदि सैन्यगन |
हम थे द्वीप पुष्कर अब स्व-गृह क्या देख रहे हैं स्वप्न || (२१-८)

भावार्थ: अपना घर देख वानर आदि सैन्यगण यह विचार करने लगे कि हम पुष्कर द्वीप में थे और अब अपने गृह, क्या स्वप्न देख रहे हैं?

हुए आहत भ्राता राम सम वेग प्रलय काल पवन |
हुआ क्या सोचने लगे हनुमत भरत शत्रुघ्न लखन || (२१-९)

भावार्थ: प्रलय काल में पवन के वेग के समान राम के भ्राता आहत हुए| हनुमान,भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण सोचने लगे कि यह क्या हुआ?

वानर सुग्रीव नल नील ऋक्ष जामवंत सम युद्धिवन |
हेतु इस दिव्य बाण हुए कुछ घायल और कुछ अचेतन || (२१-१०)

भावार्थ: वानर सुग्रीव, नल, नील और रीछ जामवंत समान योद्धा इस दिव्य बाण से कुछ घायल हुए और कुछ अचेत|

हुए विस्मित पहुँच अपने गृह वानर ऋक्ष भूजन |
किए विचार नहीं उचित हुआ यह प्रति राम भगवन || (२१-११)

भावार्थ: वानर, रीछ तथा प्राणी अपने घर पहुँच विस्मित हुए और विचार करने लगे कि यह भगवान् राम के प्रति उचित नहीं हुआ|

केवल संग सीता रहे स्थित पुष्पक विमान भगवन |
था असमर्थ करे चलायमान यह बाण ईश त्रिभुवन || (२१-१२)

भावार्थ: केवल सीता के साथ भगवान् (राम) पुष्पक विमान पर स्थित रहे| यह बाण तीनों लोकों के स्वामी को चलायमान करने में असमर्थ था|

करें विचार महर्षि हुआ कैसे संभव यह प्रवर्तन |
केवल पुण्यवत माँ सीता थीं अविक्षिप्त और शन ||
देख रहीं सब विस्मित घटित दृश्य अनिवृत्त हसन् || (२१-१३)

भावार्थ: महर्षि विचार करने लगे कि यह कैसे घटित हुआ? केवल पुण्यवत माँ सीता ही एकाग्रचित और शांत थीं| वह सब आश्चर्यजनक घटना को मुसकुराती हुई निरंतर देख रहीं थीं|

देख रण क्षेत्र सम गन्धर्व नगर बिन सेना भगवन |
स्वस्ति स्वस्ति कह करने लगे शान्ति जप सब ऋषिगन || (२१-१४)

भावार्थ: बिना प्रभु की सेना के रण क्षेत्र को गंधर्व नगरी समान देख स्वस्ति स्वस्ति कह सब ऋषिगण शान्ति जप करने लगे|

करने लगे हाहाकार सब अंतरिक्षचारी जीवगन |
इंद्र अग्नि सुरादि सोचें किया क्या यह रावन || (२१-१५)

भावार्थ: सभी गगन वासी (सुरादि) प्राणी हाहाकार करने लगे| इंद्र, अग्नि आदि देव सोचने लगे कि यह रावण ने क्या किया?

जिस प्रकार है वर्णित कथा एक ग्रन्थ सनातन |
हेतु वध रावण आए एक बार चढ़ गरुड़ जनार्दन ||
किया विष्टपि हरि ओर सागर बिन प्रयास रावन || (२१-१६)
किया यह कार्य बाम हस्त हँसते हुए उस दुष्टजन |
तब से ही सुर गंधर्व किन्नर अप्सरा रहें दूर रावन || (२१-१७)
जैसे शाकाल होता भयभीत गंध सिंह राजा वन |
समान नहीं कर सकें गंध सहन यह सब रावण तन ||
लिए अवतार बन दशरथ पुत्र अब वही जनार्दन || (२१-१८)

भावार्थ: जिस प्रकार सनातन ग्रन्थ में एक कथा वर्णित है कि एक बार गरुड़ पर सवार हो श्री विष्णु भगवान् रावण के वध हेतु आए| तब रावण ने बिना प्रयास ही भगवान् को समुद्र की ओर विस्थापित कर दिया था| यह कार्य उसने अपने बाम हस्त से हँसते हुए किया था| तभी से सुर, गन्धर्व, किन्नर अप्सरा (आदि) रावण से दूर रहते हैं| जिस प्रकार गीदड़ वन के राजा सिंह की गंध से भयभीत हो जाता है, वैसे ही यह सब रावण के शरीर की गंध को सहन नहीं कर सकते| उन्हीं विष्णु भगवान् ने अब दशरथ के पुत्र बन अवतार लिया है|

पाएं विजय शीघ्र आप कर वध दुष्ट सहस्त्रानन |
हो रहे विचलित हम करें दूर हमारा शिरोवेदन ||
सब सुर आदि करबद्ध कर रहे यह प्रभु से निवेदन || (२१-१९)

भावार्थ: इस दुष्ट सहस्त्रमुख रावण का शीघ्र वध कर आप विजय पाएं| हम विचलित हो रहे हैं, हमारी चिंता दूर करें| सभी देवता आदि करबद्ध प्रभु से यह विनती कर रहे हैं|

समझ क्षुद्र हरि रामचंद्र करने लगा रावण गर्जन |
हुए विस्मित देख यह दुष्कर्म श्री रामचंद्र भगवन || (२१-२०)

भावार्थ: भगवान् रामचंद्र को क्षुद्र समझ रावण गर्जना करने लगा| यह (रावण का) दुष्कर्म देख भगवान् श्री रामचंद्र आश्चर्य चकित हुए|

करें वध रावण हुए क्रोधित तब श्री राम भगवन |
हंसा उपहासित देख क्रोधित हरि मूर्ख रावन ||
देख कर रहा अपमान मेरा हँसते हुए यह दुर्जन ||
किए निश्चित तब कमल लोचन करें वध इस दुष्टजन ||
होना लगा रण नाना प्रकार मध्य इन द्वि युद्धिवन ||
देख भीषण युद्ध होने लगे कम्पित भय सागर त्रिभुवन || (२१-२१)

भावार्थ: तब श्री राम भगवान् क्रोधित हुए और रावण का वध करने को तत्पर हुए| प्रभु को क्रोधित देख मूर्ख रावण उपहास से हंसने लगा| यह देख कि यह पापी हँसते हुए मेरा अपमान कर रहा है तब कमललोचन (प्रभु) ने निश्चित किया कि वह इस दुष्ट का वध करें| इन दोनों योद्धाओं में अनेक प्रकार से युद्ध होने लगा| इस भीषण युद्ध को देखकर भय से समुद्र और तीनों लोक कांपने लगे|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रावण का राम की सेना को विक्षेप करना' नाम एकविंशति सर्ग समाप्त|

द्वाविंशति सर्ग
रामचंद्र का मूर्छित होना

देख कर रहा निरर्थक सहस्त्रानन रावण गर्जन |
हुए तब क्रुद्ध रिपु विनाशी श्री रामचंद्र भगवन || (२२-१)

भावार्थ: यह देख कि सहस्रमुख रावण निरर्थक गर्जना कर रहा है, शत्रुओं का नाश करने वाले श्री रामचंद्र क्रोधित हुए|

खींच धनुष सम वेग प्रलय किए प्रहार घोर धन्विन् |
हुआ विचलित रिपु लगे बाण मर्म स्थान उसके तन || (२२-२)

भावार्थ: धनुर्धर (श्री राम) ने धनुष को प्रलय के समान वेग से खींच घोर प्रहार किया| शत्रु के तन में मर्म स्थान पर यह बाण लगे जिससे वह विचलित हो गया|

श्री राम बाण करने लगे खंड खंड असुर युद्धिवन |
था विसर्जन शल्य अति तीव्र भांति उच्च वेग पवन || (२२-३)

भावार्थ: श्री राम के बाण असुर योद्धाओं को खंड खंड करने लगे| बाणों का चलना अत्यंत वेग पवन के सामान अति तीव्र था|

कर रहे वध त्वरित रिपु घातक बाण राम भगवन |
जैसे करते असुर हनन रुद्र क्रुद्ध रूप जतिन || (२२-४)

भावार्थ: भगवान् राम के बाण शत्रुओं को शीघ्रता से मार रहे थे जैसे महादेव का क्रुद्ध रूप रुद्र असुरों का वध करता है|

देख दुष्कर कर्म श्री राम हुआ अति विस्मित रावन |
हो क्रुद्ध युक्त पूर्ण ऊर्जा करने लगा उनसे रन || (२२-५)

भावार्थ: श्री राम का दुष्कर कृत देख रावण अति विस्मित हुआ| क्रोधित हो पूर्ण ऊर्जा के साथ वह उनसे युद्ध करने लाए|

कर सम्बोधित निज सेना बोला मदोद्धत दुर्जन |
हो शांत देखो बल अब मेरा जीते जिसने त्रिभुवन ||
हूँ समर्थ कर सकूं अकेला मैं वध उपस्थित द्विषन || (२२-६)

भावार्थ: अपनी सेना को सम्बोधित करते हुआ अहंकारी दुष्ट बोला, 'शांत हो अब मेरा बल देखो जिसने तीनों लोकों को जीत लिया था| मैं अकेला ही उपस्थित शत्रुओं का वध करने में समर्थ हूँ|'

शीघ्र ही कर दूंगा आज मैं मनुष्यहीन भुवन |
होंगे रहित सुर उच्च लोक और सागर बिन कवन || (२२-७)

भावार्थ: शीघ्र ही मैं आज पृथ्वी को मनुष्य हीन कर दूंगा| उच्च लोक (स्वर्गादि) देव रहित होंगे और सागर जल रहित|

करूँ शैल चूर्ण और हों नक्षत्रों का गगन से पतन |
सुन हे राम नहीं पुष्कर द्वीप समान लंका पट्टन ||
जिस पर पा विजय सौंप सके राज्य स्व-रूचि राजन || (२२-८)

भावार्थ: पर्वतों को चूर्ण कर दूंगा और तारे आकाश से गिरा दूंगा| हे राम सुन, पुष्कर द्वीप लंका नगरी के समान नहीं है जिस पर विजय पाकर अपनी रूचि के नृप को राज्य सौंप सके|

करूँ खंडित शीश तेरा आज हेतु मम दैव्य कृपन |
होंगे तृप्त अनुचर मेरे पा आहार मांस मनुज तन || (२२-९)

भावार्थ: अपनी दैव्य तलवार से आज तेरे शीश के टुकड़े कर दूंगा| मनुष्य के शरीर के मांस का आहार पा मेरे अनुचर तृप्त होंगे|

मेरी गदा कर देगी शीघ्र चूर्ण तेरा शीश और तन |
करे गज जैसे भग्न पुष्प फल और तने कैंथ वन || (२२-१०)

भावार्थ: मेरी गदा तेरे शीश और शरीर को चूर्ण कर देगी जैसे हाथी वन में कैंथ (एक प्रकार का वन सेब) के तने, फल और पुष्प को चूर्ण कर देता है|

कह यह वचन करने लगा संग राम घोर युद्ध रावन |
था यह रण भयंकर समान बासव और बाली राजन || (२२-११)

भावार्थ: यह वचन बोल रावण राम के साथ घोर युद्ध करने लगा| यह युद्ध बासव और सम्राट बाली के समान भयंकर था|

देख वीर समान सहस्रमुख हुए प्रसन्न राम भगवन |
होने लगा युद्ध मध्य द्वि योद्धा जो था अति रोमहर्षन || (२२-१२)

भावार्थ: सहस्रमुख (रावण) के समान वीर योद्धा देख भगवान् राम प्रसन्न हुए| दो योद्धाओं के मध्य अति रोमहर्षण युद्ध होने लगा|

था घोर यह युद्ध मध्य योद्धा राम और सहस्त्रानन |
कर रहे प्रयोग दोनों दिव्य शस्त्र सम गन्धर्व दैवन || (२२-१३)

भावार्थ: राम और सहस्रमुख (रावण) योद्धाओं के मध्य युद्ध घोर था| दोनों ही गन्धर्व और दैवन समान दिव्य शास्त्रों का प्रयोग कर रहे थे|

परमास्त्र ज्ञाता रामचंद्र किए अस्त्र रावण खंडन |
पर नहीं था कम किसी रूप वह राक्षस नृप रावन || (२२-१४)

भावार्थ: अस्त्रों के परम ज्ञाता रामचंद्र ने रावण के अस्त्रों को खंडित किया| लेकिन वह राक्षस राज रावण किसी प्रकार से कम नहीं था|

किया प्रहार उसने कर प्रयोग पन्नग अस्त्र भीषन |
थे यह बाण सशक्त मन्त्र ऊर्जित मंडित स्वर्न ||
गिरे यह बाण रूप सविष सर्प तन श्री राम भगवन || (२२-१५)

भावार्थ: उसने भीषण पन्नग अस्त्र से प्रहार किया| यह स्वर्ण मंडित बाण अत्यंत शक्तिशाली और मन्त्रों से अभिमंत्रित थे| श्री राम भगवान् के शरीर पर विषैले सर्प का रूप धारण कर गिरे|

यह विषैले सर्प स्व-मुख करने लगे दाह अग्नि वमन |
हुआ प्रतीत कुछ क्षण जल रहा श्री रामचंद्र का तन || (२२-१६)

भावार्थ: यह विषयुक्त सर्प अपने मुख से जलती हुई अग्नि उगल रहे थे| कुछ क्षण के लिए ऐसा प्रतीत हुआ कि श्री रामचंद्र का शरीर जल रहा है|

फैलाए मुख थे यह सर्प सम स्वरूप वासुकि महन |
कर रहे प्रयास बाँध सकें श्री रामचंद्र भगवन || (२२-१७)

भावार्थ: इनका मुख फैला हुआ था| यह महान वासुकि समान लग रहे थे| रामचंद्र भगवान् को बांधने का प्रयास कर रहे थे|

देखे हरि हो रहे व्यापित गगन सब ओर विषानन |
आ रहे अति वेग ओर उनकी करने उनका हनन || (२२-१८)

भावार्थ: प्रभु ने देखा कि आकाश में सब ओर यह विषयुक्त सर्प छा रहे हैं| उनका वध करने अति वेग से उनकी ओर आ रहे हैं|

किए मन्त्रित बाण तब प्रतिविष गरुड़ास्त्र रघुनन्दन |
हुए प्रकट गरुड़ तत्क्षण समझे निर्देश श्री भगवन || (२२-१९)
विचरने लगे गति अति वेग तपस गरुड़ उस क्षेत्र रन |
चुन चुन सब सर्प भयंकर करने लगे उनका भोजन || (२२-२०)

भावार्थ: तब हरि ने बाण को विष के विरुद्ध गरुड़ास्त्र से मन्त्रित किया| तत्क्षण गरुड़ प्रकट हो गए और उन्होंने भगवान् की आज्ञा को समझा| उस युद्ध क्षेत्र में वह शीघ्रता से घूमने लगे| इन भयंकर सर्पों को चुन चुन कर अपना भोजन बनाया|

देख दृश्य रण क्षेत्र कि कर रहे गरुड़ नाश विषानन |
हुआ अति क्रोधित राक्षसराज सहस्रमुख रावन || (२२-२१)

भावार्थ: युद्ध क्षेत्र में यह दृश्य देख कि गरुण सर्पों का नाश कर रहे हैं, राक्षस राज सहस्रमुख रावण अत्यंत क्रोधित हुआ|

करने लगा वर्षा शिला खंड तब वह ऊपर भगवन |
छोड़ा लक्ष एक बाण कर ऊर्जित मन्त्र वह दुर्जन || (२२-२२)

भावार्थ: वह दुष्ट तब भगवान् पर पत्थर की वर्षा करने लगा| उसने अभिमन्त्रित (मन्त्रों से ऊर्जित) एक लाख बाण छोड़े|

घातक मन्त्रित बाण करने लगे नष्ट प्रहार भगवन |
हुए दुःखी देख यह देव गंधर्व पितर और चारन || (२२-२३)

भावार्थ: यह मन्त्रित घातक बाण भगवान् के प्रहार को नष्ट करने लगे| यह देख सुर, गन्धर्व, पितर और चारण दुःखी हुए|

समझे सिद्ध ज्ञानी हो रहे व्याकुल रामचंद्र भगवन |
जैसे कर रहे हों केतु और राहु सोम को ग्रहन || (२२-२४)

भावार्थ: (यह दृश्य देख कर) सिद्ध और ज्ञानी समझे कि रामचंद्र भगवान् व्याकुल हो रहे हैं जैसे राहु और केतु चन्द्रमा का ग्रहण कर रहे हों|

इस भयावह काल बुद्धदेव जो संवर्धक चतुरानन |
सम किए रोहिणी प्रिय पत्नी चंद्र अनुचित प्रधर्षन ||
यह संयोग था अनर्थकारी हेतु प्रजापति पुर जन || (२२-२५)

भावार्थ: ब्रह्मा के संवर्धक बुद्धदेव ने इस भयावह काल में चंद्रदेव की प्रिय पत्नी रोहिणी पर (खगोल दृष्टि से) अनुचित आक्रमण कर दिया| यह (नक्षत्र) संयोग प्रजापति की प्रजा के लिए अनर्थकारी था|

खौलने लगा सागर तीव्र निकल रही उसमें ऊष्मन् |
कूदा सहस्रमुख रावण जैसे चाहे छूना द्युवन् || (२२-२६)

भावार्थ: सागर तीव्रता से खौलने लगा| उसमें से भाप निकलने लगी| सहस्रमुख रावण ऐसे कूदा जैसे सूर्य को छूना चाहता हो|

हुई लुप्त कांति सूर्य सम हुआ कोयला जलता गहन |
दिखने लगे जन तन बिन शीश सहित धूमकेतु गगन || (२२-२७)

भावार्थ: सूर्य की कांति लुप्त हो गई जैसे जलती हुई लकड़ी कोयल हो गई हो| आकाश में प्राणियों के शरीर बिना शीश के और धूमकेतु (धुंए की पताका) दिखाई देने लगे|

कर रहे थे घोर उग्र भयानक कोलाहल नक्षत्र गगन |
जैसे आया भूकंप अथवा हो रहा आपसी घर्षन || (२२-२८)

भावार्थ: आकाश में नक्षत्र घोर उग्र कोलाहल कर रहे थे जैसे कि कोई भूकंप आया हो या वह आपस में घर्षण कर रहे हों|

देख दुःसाहस रावण चढ़ीं भृकुटि श्री राम भगवन |
हुए नेत्र लाल क्रोध से जैसे जलाएं अभी रिपुगन || (२२-२९)

भावार्थ: रावण का दुःसाहस देख श्री राम भगवान की भृकुटि चढ़ गईं| उनके नेत्र क्रोध से लाल हो गए जैसे अभी शत्रुओं को जला देंगे|

देख क्रोधित मुख हरि हुए व्यथित भयभीत सब जन |
डोलने लगा नभ हुआ कम्पित सागर और भुवन || (२२-३०)

भावार्थ: भगवान् के क्रोधित मुख को देखकर सभी प्राणी भयभीत और व्याकुल हो गए| आकाश डोलने लगा| समुद्र और पृथ्वी में कम्पन होने लगा|

जल उठे वृक्ष हो रहे तप्त सिंह बाघ आदि पशु वन |
हो रहे भयभीत शैल सम सागर उठीं ज्वाला दहन || (२२-३१)

भावार्थ: वन में वृक्ष जल उठे, सिंह बाघ आदि पशु जल रहे थे| पर्वत भयभीत थे, उनमें समुद्र के समान अग्नि की ज्वाला उठीं|

चलाए जो बाण प्रभु हेतु वध दुष्ट लंकेश दशानन |
चढ़ाए धनुष वही बलशाली प्रतापी बाण भगवन ||
करते फुफकार सम सर्प चले वह ओर सहस्त्रानन || (२२-३२)

भावार्थ: जो बलशाली और प्रतापी बाण प्रभु ने लंका में दुष्ट रावण के वध के लिए चलाए थे, वही भगवान् ने धनुष पर चढ़ाए| सर्प के समान फुफकारते हुए वह सहस्रमुख रावण की ओर चले|

महर्षि अगस्त्य दिए भेंट यह मन्त्रित बाण भगवन |
कर रहे प्रयोग वही बाण प्रभु हेतु वध यह दुर्जन || (२२-३३)

भावार्थ: यह मन्त्रित बाण प्रभु को महर्षि अगस्त्य ने भेंट में दिए थे|वही बाण भगवान् इस दुष्ट का वध करने हेतु प्रयोग कर रहे हैं|

मूलतः किए निर्मित यह बाण सृजक चतुरानन |
दिए शक्ति विशेष इन्हें देव इंद्र कर मन्त्र स्वस्त्ययन ||
पूर्व में किए प्रयोग इंद्र हेतु विजय त्रिभुवन || (२२-३४)

भावार्थ: मूलतः यह बाण सृष्टि निर्माता ब्रह्मदेव ने निर्मित किए थे| इंद्रदेव ने इन्हें मन्त्र वर से विशेष शक्ति दी| पूर्व में इंद्र ने इन्हें तीनों लोकों की विजय प्राप्ति के लिए प्रयोग किया|

थे यह अद्भुत शक्त बाण जिनके पंख चलें सम पवन |
फल में जल रही ज्वाला सम अग्नि रवि तन सम गगन ||
थे अति भारी समान पर्वत मेरु मंदराचल समानयन || (२२-३५)

भावार्थ: यह अद्भुत शक्तिशाली बाण थे जिनके पंख (पीछे का भाग) पवन के समान चलते थे| उनके फल (अगर भाग) में अग्नि और सूर्य के समान ज्वाला जल रही थी| उनका तन (मध्य भाग) आकाश के समान था| उनका भार मेरु और मंदराचल पर्वत दोनों को मिलाकर था, अति भारी थे|

थे आरूढ़ मध्य संधि सरंक्षक श्रुत लोकपाल भुवन |
लिए हस्त गदा यमराज कुबेर और पाश वरुन || (२२-३६)

भावार्थ: संधि मध्य में विश्व के सरंक्षक प्रसिद्ध लोकपाल आरूढ़ थे| हाथों में यमराज और कुबेर गदा एवं वरुण पाश (अस्त्र) लिए थे|

हो रहे बाण दीप्तिमत समान कोटि प्रतिदिवन् |
थे श्रेष्ठ सभी विश्व निष्पन्न पुच्छ पंख समान स्वर्न || (२२-३७)

भावार्थ: वह बाण करोड़ों सूर्य के समान दीप्तिमान हो रहे थे| उनके पुच्छ पंख (पिछले भाग) स्वर्ण के समान थे जो विश्व की किसी भी उत्पत्ति से श्रेष्ठ थे|

समान प्रलय चंहु ओर थी धूम संग काल परिज्वन् |
था प्रकाश इतना अधिक कर रहा चकाचौंध नयन ||
कर रहे वेग से यह बाण नष्ट रिपु और उनके वाहन || (२२-३८)

भावार्थ: प्रलय समान चारों ओर कालाग्नि के साथ धुंआ था| प्रकाश इतना अधिक था कि नेत्र चकाचौंध हो रहे थे| यह बाण तीव्रता से शत्रु और उनके वाहनों को नष्ट कर रहे थे|

यह अद्भुत विस्मित मन्त्रित बाण कर रहे रिपु हनन |
युक्त रक्त मांस अंग रिपु लग रहे भयंकर भयधन || (२२-३९)

भावार्थ: यह अद्भुत, आश्चर्यजनक, मन्त्रित बाण शत्रुओं का वध कर रहे थे| शत्रुओं के रक्त, मांस और अंगो से युक्त यह भयंकर भय देने वाले लग रहे थे|

थे यह समान काल कर रहे कोलाहल कर्ण छेदन |
करते त्रासित शत्रु जिनके पंख समान विषानन || (२२-४०)

भावार्थ: यह काल के समान कर्ण को भेदने वाला कोलाहल कर रहे थे| इनके पंख (पिछला भाग) जो सर्प के समान थे, शत्रुओं को त्रासित कर रहे थे|

युक्त सामर्थ्य कर सकें विनाश खग पशु वीर जन |
असुर आदि रण क्षेत्र करें नृत्य सम तांडव भीषन || (२२-४१)

भावार्थ: पशु, पक्षी, वीर, असुर आदि का युद्ध क्षेत्र में विनाश करने की सामर्थ्य से युक्त यह भीषण तांडव की भांति नृत्य कर रहे थे|

युक्त शक्ति यह बाण थे समर्थ करें रिपु कीर्ति हरन |
कर मंत्रित बार बार चढ़ाएं धनुष यह बाण भगवन || (२२-४२)

भावार्थ: यह बाण शत्रु की कीर्ति का हरण करने वाली शक्ति से युक्त थे| प्रभु इन्हें मंत्रित कर बार बार धनुष पर चढ़ाते हैं|

चढ़ाए प्रत्यंचा धनुष अनुसार वर्णित वेद भगवन |
चल रहे बाण द्रुति गति हेतु करें वध सहस्त्रानन || (२२-४३)

भावार्थ: प्रभु वेद के (नियमों के) अनुसार धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा रहे थे| रावण का वध करने बाण अति तीव्र गति से चल रहे थे|

थे अद्भुत बाण जलते जो समान युक्त धूम परिज्वन् |
फिर चल पड़ते अति वेग हेतु वध रावण पाथ पवन || (२२-४४)

भावार्थ: अद्भुत बाण पहले धुंए के साथ अग्नि समान जलते थे फिर पवन मार्ग से रावण का वध करने अति वेग से चल पड़ते थे।

आ रहे उस ओर वज्र सम बाण देखा सहस्त्रानन |
समझ मरण निकट किया वह कोलाहल कर्कश निस्वन || (२२-४५)

भावार्थ: रावण ने जब देखा कि की वज्र के समान बाण उसकी ओर आ रहे हैं, तब मृत्यु को समीप समझ उसने कर्कश स्वर में कोलाहल किया।

बोला दर्द से शब्द हूँ पकड़ बाण बाम हस्त रावन |
फिर फंसा जंघा किए प्रयास करे नष्ट प्राणहरन || (२२-४६)

भावार्थ: दर्द से 'हूँ' शब्द बोलते हुए बाम हस्त से उसने बाण पकड़ा। फिर जंघा में फंसा कर उस मारक (बाण) को नष्ट करने का प्रयास करने लगा।

हुए स्तब्ध प्रभु श्री राम देख किया नष्ट बाण रावन |
हो क्रुद्ध तब लिया तीक्ष्ण बाण घायल सहस्त्रानन || (२२-४७)
कर प्रयोग बल सम्पूर्ण छोड़ा उसे ओर वक्ष भगवन |
था प्रहार घोर किया प्रवेश मध्य वक्ष वह भगवन || (२२-४८)

भावार्थ: रावण द्वारा बाण को नष्ट होते देख प्रभु श्री राम स्तब्ध हो गए। तब क्रोधित हो घायल सहस्रमुख ने तीक्ष्ण बाण लिया। सम्पूर्ण बल से उसने उसे भगवान् के वक्ष की ओर छोड़ा। उसका प्रहार अति घोर था। उसने प्रभु के मध्य वक्ष में प्रवेश किया।

किया प्रवेश पाताल लोक कर भेद वक्ष रघुनन्दन |
हो मूर्छित गिर पड़े तल विमान पुष्पक तब भगवन || (२२-४९)
करने लगे हाहाकार जीव गिरे जब प्रभु हो अचेतन |
सहित शैल वन नद सागर आदि हुई कम्पित भुवन ||
हा राम हा राम निकले शब्द मुख सुर और ऋषिगन || (२२-५०)
हो अपार प्रसन्न करने लगा नृत्य दुष्ट सहत्रानन |
गिरने लगे उल्कापात नभ आई प्रलय समझे सब जन || (२२-५१)

भावार्थ: राम के वक्ष को भेद कर बाण पाताल लोक में प्रवेश कर गया| तब भगवान् मूर्छित हो कर पुष्पक विमान के तल पर गिर पड़े| प्रभु को अचेत देखकर सभी प्राणी हाहाकार करने लगे| पर्वत, वन नदी और समुद्र आदि सहित पृथ्वी कम्पित हो गई| देवताओं और ऋषिगण के मुख से 'हा राम, हा राम' शब्द निकलने लगे| दुष्ट सहस्रमुख रावण अपार प्रसन्नता से नाचने लगा| आकाश से उल्कापात गिरने लगे| सबने समझा कि प्रलय आ गई|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रामचंद्र का मूर्छित होना' नाम द्वाविंशति सर्ग समाप्त|

त्रयोविंशति सर्ग
जानकी द्वारा सहस्रमुख रावण का वध

देख राम अचेत हुए भयभीत व्याकुल सब ऋषिगन |
करते हुए हाहाकार करने लगे वह शान्ति पठन || (२३-१)

भावार्थ: श्री राम को मूर्छित देख ऋषिगण भयभीत और व्याकुल हो गए| हाहाकार करते हुए वह शान्ति पाठ करने लगे|

देख जानकी शांत हुए विस्मित सुर और ऋषिगन |
वशिष्ठ आदि सब ऋषि हो दुःखी कहने लगे वचन || (२३-२)

भावार्थ: जानकी को शांत देख सभी देव और ऋषिगणों को आश्चर्य हुआ| दुःखी हो वशिष्ठ आदि ऋषि कहने लगे|

क्यों सुनाई सीते तुमने कथा सहस्रमुख रावन |
भोगना पड़ रहा फल घोर इस हेतु राम भगवन || (२३-३)

भावार्थ: हे सीते, तुमने यह सहत्रानन रावण की कथा क्यों सुनाई| इसी कारण भगवान् राम को घोर फल भोगना पड़ रहा है|

कहाँ गए सब कपि ऋक्ष सैन्यबल और मन्त्रीगन |
करें क्या हम अब इस हाल पड़े जब मूर्छित रघुनंदन || (२३-४)

भावार्थ: सब वानर, रीछ, सेना और मंत्रीगण कहाँ गए? जब रघुनंदन अचेतन अवस्था में हैं तो इस हाल में अब हम क्या करें?

देख अचेत तल विमान पुष्पक पति श्री राम भगवन |
सुन कठोर वचन मुख गुरु वशिष्ठ और ऋषिगन || (२३-५)
कर आलिंगन मूर्छित पति पड़े युक्त बाण धन्वन |
लग रहे थे प्रभु जैसे सोए हुए निंद्रा अति गहन || (२३-६)

देख सहस्त्रानन हो प्रसन्न कर रहा नृत्य क्षेत्र रन |
कर रहा अभिमान स्व-बल शौर्य हुई विजय अल्प क्षन ||
उठीं जानकी करतीं अट्टहास युक्त कर्कश नद भयधन || (२३-७)

भावार्थ: पति श्री राम भगवान् को पुष्पक विमान के तल पर अचेत देख, गुरु वशिष्ठ और ऋषिगणों के कठोर वचन सुन, उन्होंने मूर्छित पति का आलिंगन किया जो धनुष बाण लिए (मूर्छित) पड़े थे| ऐसा लग रहा था कि वह अत्यंत गहन निद्रा में सोए हैं| सहस्त्रमुख रावण को प्रसन्नता में युद्ध क्षेत्र में नृत्य करते, अपने बल, शौर्य और अल्प कालीन विजय पर अभिमान करते देख जानकी कर्कश स्वर में भयभीत करने वाले स्वर में अट्टहास कर उठीं|

कर त्याग सौम्य अमत्त रूप साम्राज्ञी अवध भुवन |
लीं रूप उग्र भयंकर समान क्षुधित दैत्य क्रुद्ध नयन || (२३-८)

भावार्थ: अवध राज्य की साम्राज्ञी का सौम्य और मद-हीन रूप त्याग उन्होंने भूखी दैत्य समान भयंकर उग्र रूप ले लिया जिनके नेत्र क्रोधित थे |

स्थूल जंघा हिंसक स्वर पहने थीं हार कपाल गर्दन |
कंकण अस्थि चलतीं अति वेग गति तत्पर रिपु हनन || (२३-९)
विकृत दीर्घ मुख चतुर्भुज पहने उज्ज्वल आभूषन |
करतीं महा घोर कोलाहल उतरीं वह क्षेत्र रन || (२३-१०)

भावार्थ: विशाल जंघा, हिंसक स्वर, गले में कपाल की माला, हाथों में अस्थिमाल, भयानक, अति वेग से चलती हुई, शत्रु का वध करने के लिए तत्पर, विकृत और विशाल मुख, चार भुजा वाली, आकर्षक आभूषण पहने, अत्यंत भयानक कोलाहल करती हुई, वह युद्ध क्षेत्र में उतरीं|

मंडित जटाजूट लपलपाती जिह्व युक्त विशाल कच तन |
समान सागर प्रलय काल रूप थीं घन पाश धारन || (२३-११)

भावार्थ: सिर पर जटा मुकुट, लपलपाती जीभ, शरीर पर बड़े बाल, प्रलय सागर समान काल रूप, घंटों की माला पहने थीं|

करों में खर्पर खड्ग अनगिनत अस्त्र समर्थ रिपु हनन |
समान खग बाज उतर पुष्पक झपटीं ओर रथ रावन || (२३-१२)

भावार्थ: हाथों में खर्पर, तलवार और शत्रु का वध करने में समर्थ अन्य अस्त्र थे| बाज पक्षी के समान वह पुष्पक विमान से उतर रावण के रथ की ओर झपटीं|

किया प्रहार निज खड्ग अति वेग सिय रूद्र निरूपन |
हुआ बिन सिर हुए खंडित तुरंत सहस्त्र शीष रावन || (२३-१३)

भावार्थ: रूद्र रूप जानकी ने अत्यंत वेग से अपनी तलवार से प्रहार किया| तुरंत ही रावण बिना सिर का हो गया| उसके सहस्त्र शीष तुरंत कट गए|

फिर भिड़ गईं माँ जानकी अन्य असुर युद्धिवन |
तोड़े तन कर प्रहार स्व-नख मिले धूल वह भुवन || (२३-१४)

भावार्थ: फिर माँ जानकी अन्य असुर योद्धाओं से भिड़ गईं| अपने नाखूनों से उनके शरीर को तोड़ दिया जिससे वह पृथ्वी में धूल में मिला गए|

किए उदर खंडित कुछ कर प्रहार तीव्र नख उनके तन |
हो क्रोधित जानकी स्व-खड्ग काटीं रिपु हस्त चरन || (२३-१५)

भावार्थ: कुछ के शरीर पर तीक्ष्ण नाखूनों से प्रहार कर उनके पेट फाड़ दिए| क्रोधित हो जानकी ने अपनी कृपाण से शत्रुओं के हाथ, पैर अपनी तलवार से काट दिए|

कर दिए चूर्ण समान तिल अति क्षुद्र असुर रिपु तन |
कर चरणाघात निकालीं आंत शरीर अनेक रिपुगन || (२३-१६)

भावार्थ: असुर शत्रुओं के तन अति लघु तिल के समान चूर्ण कर दिए| चरणों के आघात से अनेक शत्रुओं के शरीर से आंतें निकाल दीं|

कर रहीं माँ प्रहार चंहु ओर सैन्यबल रिपु रावन |
उड़े नभ कई हेतु श्वास सिय चल रही सम वेग पवन || (२३-१७)

भावार्थ: शत्रु रावण की सेना पर माँ चारों ओर से प्रहार कर रहीं थीं| कुछ उनकी श्वास, जो तीव्र वायु के समान चल रही थी, से आकाश में उड़ गए|

थीं जानकी रूप सम काली था काल प्रलय रिपुगन |
मिलाती धूल उन्हें फिर रहीं कर अट्टहास क्षेत्र रन || (२३-१८)

भावार्थ: काली समान रूप में जानकी शत्रुओं के लिए प्रलय काल थीं| उन्हें धूल में मिलाती हुई युद्ध क्षेत्र में अट्टहास करती घूम रहीं थीं|

पकड़ केश किन्हीं के स्व-बाहु कर रहीं अलग शीष तन |
खींच संग रथ अश्व गज फेंक रहीं कुछ जलाशय लवन || (२३-१९)

भावार्थ: अपनी भुजाओं से किन्हीं के केश पकड़ कर उनके शीष को शरीर से अलग कर रहीं थीं| कुछ को उनके रथ, अश्व और हाथी सहित खींच कर समुद्र में फेंक रही थी|

गला घोंट अनेक रिपु कर रहीं माँ उनका हनन |
कर रहा हाहाकार रिपु सैन्य न कर सकें प्रहार सहन || (२३-२०)

भावार्थ: अनेक शत्रुओं का गला घोंट कर माँ उनका वध कर रहीं थीं| उनके प्रहार को सहन न करने के कारण शत्रु सेना में हाहाकार था|

कूद पड़तीं स्कंध किन्हीं सहसा करतीं सिर विच्छेद तन |
करतीं अट्टहास भरतीं हुंकार कर रहीं वह रिपु हनन || (२३-२१)

भावार्थ: अचानक कंधे पर किसी के कूद कर शिर को शरीर से विच्छेद कर देतीं| अट्टहास करतीं हुई, हुंकार भरती हुई, शत्रुओं का वह वध कर रहीं थीं|

कर चूर्ण बदन कुछ समान पशु कर रहीं वध दुर्जन |
केवल जानकी दिख रहीं सब ओर करतीं रिपु हनन || (२३-२२)

भावार्थ: पशुओं के समान कुछ के शरीर को चूर्ण कर दुष्टों का वध कर रहीं थीं| सब ओर केवल जानकी ही शत्रुओं का वध करती दिख रहीं थीं|

कर वध बना हार मुंड रिपु पहन कंठ सम आभूषन |
लिए सहस्त्र शीष रावण घूम रहीं थीं वह क्षेत्र रन || (२३-२३)

भावार्थ: शत्रुओं का वध कर उनकी सिरों की माला कंठ में आभूषण समान पहन, रावण के सहस्त्र सिरों को लिए वह युद्ध क्षेत्र में घूम रहीं थीं|

हुए प्रगट रोम जानकी अनगिनत बेताल सङ्घट्टन |
खेल रहे वह मुंड असुर करते अट्टहास अति भयावन || (२३-२४)

भावार्थ: जानकी के बालों से अनगिनत बेताल, भूतादि प्रकट हो गए| वह अति डरावनी हंसी करते हुए असुरों के सिरों से खेल रहे थे|

थे वह भयानक जंतु युक्त विभिन्न आकर विकृत तन |
कर रहे वह मदद जानकी करने संहार असुर दुर्जन || (२३-२५)

भावार्थ: यह भयानक जंतु विभिन्न प्रकार और विकृत शरीर के थे| वह दुष्ट असुरों का वध करने में जानकी की मदद कर रहे थे|

कहूँ मैं नाम कुछ शङ्खिनी सुनो ध्यान से ब्राह्मन |
थीं जो उपस्थित क्षेत्र रण करतीं शुभ सदा भूजन ||
देतीं आशीष रहतीं यह सदा साथ हर भक्त भगवन || (२३-२६)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, इन कुछ नारि देवदूतों के नाम, जो युद्ध क्षेत्र में उपस्थित थीं और सदा प्राणियों का भला करतीं हैं, मैं कहता हूँ, ध्यान से सुनो| यह प्रभु भक्तों को आशीर्वाद देतीं हुईं उनके साथ रहतीं हैं|

हैं कुछ नाम हरिनि दे रहीं साथ जानकी महात्मन |
प्रभावती पालिता गोनसी बहुला विशाल-लोचन || (२३-२७)
श्रीमती बहुपत्रिका अप्सुजाता और ध्रुवरत्न |
गोपाली वृहदाम्बालिका मालतिका भंयकरिन || (२३-२८)

भावार्थ: हे महात्मा, जो जानकी का साथ दे रहीं थीं, उन कुछ देवदूतियों के नाम हैं, प्रभावती, पालिता, गोनसी, बहुला, विशाल-लोचन, श्रीमती, बहुपत्रिका, अप्सुजाता, ध्रुवरत्न, गोपाली, वृहदाम्बालिका, मालतिका, भंयकरिन|

सुदामा वसुदामा विशोका एकचूड़ा नन्दिन |
चक्रनेमि चटीत्मा खेलें संग रिपु मुंड विछिन्न || (२३-२९)

भावार्थ: सुदामा, वसुदामा, विशोका, एकचूड़ा, नन्दिन, चक्रनेमि, चटीत्मा शत्रुओं के कटे हुए शीश के साथ खेल रहीं थीं|

देवी उत्तेजनी तया सेना शोभना कमल-नयन |
थीं साथ में शत्रुन्जया शलभ खरी और शोभन || (२३-३०)

भावार्थ: साथ में देवी उत्तेजनी, तया, सेना, शोभना, कमल-नयन, शत्रुन्जया, शलभ, खरी और शोभन थीं|

माधवी शुभ्रवस्त्रा उज्जवला जटा तीर्थसेन |
गीतप्रिया कल्याणी कद्रूरोमा अमिताशन || (२३-३१)
भोगवती सुभ्रू कनकावती महादेवी मेघस्वन |
वेगवती विद्युज्जिह्वया भारती और अग्नि-नयन || (२३-३२)

भावार्थ: माधवी, शुभ्रवस्त्रा, उज्जवला, जटा, तीर्थसेन, गीतप्रिया, कल्याणी, कद्रूरोमा, अमिताशन,भोगवती, सुभ्रू, कनकावती, महादेवी मेघस्वन, वेगवती, विद्युज्जिह्वया, भारती और अग्नि-नयन|

पद्मावती गन्धरा बहुयोजना कमला सुनयन |
सन्नालिका महाकाला महाबला प्रिय भगवन || (२३-३३)
बहुदामा सुप्रभा नृत्यप्रिया प्रिय यशस्विन |
परामंदा शतोलूख मलमेखरा थीं इदन्तन || (२३-३४)

भावार्थ: पद्मावती, गन्धरा, बहुयोजना, कमला सुनयन, सन्नालिका, महाकाला,भगवद्प्रिय महाबला, बहुदामा, सुप्रभा, नृत्यप्रिया, प्रिय यशस्विन, परामंदा, शतोलूख, मलमेखरा उपस्थित थीं|

शतघंटा शतानंदा गन्धरा सिय प्रिय भवतारिन |
वपुष्मती चन्द्रसीता भद्रकाली सठामला शोभन || (२३-३५)
झंकारिका निष्कुटिका रामा प्रिय चतुरवासिन |
सुमला वृद्धिकामा जयाप्रिया मती-सुस्तन || (२३-३६)

भावार्थ: शतघंटा, शतानंदा, गन्धरा, जानकी प्रिय भवतारिन, वपुष्मती, चन्द्रसीता, भद्रकाली, सुंदरी सठामला, झंकारिका, निष्कुटिका, रामा, प्रिय चतुरवासिन, सुमला ,वृद्धिकामा, जयाप्रिया, मती-सुस्तन|

धनदा सुप्रसादा भवदा जनेश्वरी परप्रयोजन |
ऐडी समेडी भेडी वेताल-जननी सेवक मुरुगन || (२३-३७)
कंदुती कंदुका वेदमित्रा केतकी चला चित्रसेन |
अचला सुदेविका लंबास्या नारायणी परिजन || (२३-३८)

भावार्थ: सब का हित करने वाली धनदा, सुप्रसादा, भवदा, जनेश्वरी, ऐडी, समेडी, भेडी, कारतकीय सेवक वेताल-जननी, कंदुती, कंदुका, वेदमित्रा, केतकी, चला, चित्रसेन, अचला, सुदेविका, नारायणी सेविका लंबास्या|

कुक्कुटिका श्रंखलिका संकुलिखा सम बाण वर्पन् |
हडा कंदालिका काकलिका शतोदरी कुंभिकन || (२३-३९)
उत्क्राथनी जवेला पूतना महावेगा गति सम पवन |
कंकिनी मनोजवा कटकिनी प्रघसा देवमाँ मुरुगन || (२३-४०)

भावार्थ: कुक्कुटिका, श्रंखलिका, बाण स्वरूपी संकुलिखा, हडा, कंदालिका, काकलिका, शतोदरी, कुंभिकन, उत्क्राथनी, जवेला, पूतना, वायु सम गति वाली महावेगा, कंकिनी, मनोजवा, कटकिनी, कार्तिकेय की देव माता प्रघसा|

खेसया अतिद्दढ़ीमा तुंडी मंदोदरी क्रोशन |
तड़ित्प्रभा कोटरा मेघवाहिनी भक्त मुरुगन || (२३-४१)

भावार्थ: खेसया, अतिद्दढ़ीमा, तुंडी, मंदोदरी, क्रोशन, तड़ित्प्रभा, कोटरा, कार्तिकेय भक्त मेघवाहिनी|

सुभगा लाम्बिनी बहुचूड़ा विकत्थनी पिंग-नयन |
लंबा ऊर्ध्ववेणीधरा लोहमेखला स्कन्द परिजन || (२३-४२)
पृथुवक्रा जरायु मधुकुम्भा मातृ सम मुरुगन |
यक्षणिका मधुलिहा मत्सरिका भक्त जर्जरानन || (२३-४३)
ख्याता दहपहा खण्डखण्डा परिचारक मुरुगन |
धमधमा पृथुश्रेणी मणिकुट्टिका और पूषन || (२३-४४)

भावार्थ: सुभगा, लाम्बिनी, बहुचूड़ा, विकत्थनी, पिंग-नयन, लंबा, ऊर्ध्ववेणीधरा, कार्तिकेय परिजन लोहमेखला, पृथुवक्रा, जरायु, कार्त्केय की धात्री मधुकुम्भा, यक्षणिका, मधुलिहा, मत्सरिका, तपस्विनी जर्जरान, ख्याता, दहपहा, कार्तिकेय की सेविका खण्डखण्डा, धमधमा पृथुश्रेणी मणिकुट्टिका और पूषन|

अम्लोचा निम्लोचा अप्सराएं सहायक ऋषभ भगवन |
पलोधरा वेणुवीणाधरा परिचारिका पुत्र जतिन || (२३-४५)
शशोलुकमुखी खरजंघा महाजरा योग स्वामिन |
शिशुरामुखी हृष्टा विभीषणा कार्तिकेय परिजन || (२३-४६)

दीर्घजिह्वया जटालिका अनुचरी गंगासिरुवन |
बलोतक्टा कामचारी कालाहिका अति पावन || (२३-४७)
मालीका मुकुटा मुकुटेश्वरी दिव्या देवाङ्गन |
महाकाया हविष्पान्डा पिण्डिका कुल्लाकरन || (२३-४८)
एकत्वचा सुकूर्मा कर्णिका सुरकर्णी चतुष्करन |
कर्णप्रावरणा चतुष्पथ निकेता महिषानन || (२३-४९)
गोकर्णी खरकर्णी महाकर्णी भगदा भेरीस्वन |
शंखकुम्भश्रवा महाबला और देवी महास्वन || (२३-५०)

भावार्थ: ऋषभ भगवान् की सेविका अप्सराएं अम्लोचा और निम्लोचा, पलोधरा, महादेव के पुत्र की सेविका वेणुवीणाधरा, शशोलुकमुखी, खरजंघा, योग स्वामिनी महाजरा, शिशुरामुखी, हृष्टा, कार्तिकेय की सेविका विभीषणा, दीर्घजिह्वया, मुरुगन की सेविका जटालिका, बलोतक्टा, कामचारी, अति पावन कालाहिका, मालीका, मुकुटा, दिव्य देवी मुकुटेश्वरी, महाकाया, हविष्पान्डा, पिण्डिका, कुल्लाकरन, एकत्वचा, सुकूर्मा, कर्णिका, सुरकर्णी, चतुष्करन, कर्णप्रावरणा, चतुष्पथ, निकेता, महिषानन, गोकर्णी, खरकर्णी, महाकर्णी, भगदा, भेरीस्वन, शंखकुम्भश्रवा, महाबला और देवी महास्वन |

गणा सुगणा कामदा कन्यका रता अति शोभन |
चतुष्पथ भूतितीर्था अन्यगोचरा प्रिय मुरुगन || (२३-५१)
पशुदा विभुदा महायशा अनुचरी अरुमुगन |
सुखदा पयोदा गोमहिपदा विशिरा चतुर्भुजन || (२३-५२)
सुविशाला प्रतिष्ठा सुप्रतिष्ठा मन्थिनी सुलोचन |
रोचमाना नीकर्णी मुखकर्णी अनुचरी मुरुगन || (२३-५३)
एकमुखी मेघरवा मेघवामा द्विरोचन आदि हरिन |
दे रहीं साथ माँ जानकी हेतु वध रिपु क्षेत्र रन || (२३-५४)

भावार्थ: गणा, सुगणा, कामदा, कन्यका, अति सुंदरी रता, चतुष्पथ, भूतितीर्था, कार्तिकेय प्रिय अन्यगोचरा, पशुदा, विभुदा, कार्तिकेय सेविका महायशा, सुखदा, पयोदा, गोमहिपदा, विशिरा, चतुर्भुजन, सुविशाला, प्रतिष्ठा, सुप्रतिष्ठा, मन्थिनी,सुलोचन, रोचमाना, नीकर्णी, कार्तिकेय सेविका मुखकर्णी, एकमुखी,

मेघरवा, मेघवामा, द्विरोचन आदि देवदूतियाँ माँ जानकी का युद्ध क्षेत्र में शत्रुओं का वध करने हेतु साथ दे रहीं थीं|

असंख्य दूती कर रहीं क्रीड़ा संग रिपु युद्धिवन |
है कठिन कर सकूं द्विज मैं उनके रूप का वर्णन ||
किसी के दीर्घ वक्ष स्थल और किसी के दन्त महन ||
किसी की दीर्घ नासिका लग रही अति भयावन || (२३-५५)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, असंख्य (देव) दूतियाँ शत्रुओं के योद्धाओं के साथ खेल कर रहीं थी| मैं उन सब के रूप का वर्णन कर सकूं, यह कठिन है| किसी की चौड़ी छाती थी, किसी के दांत विकराल थे, किसी की बड़ी नाक भयानक लग रही थी|

थीं कुछ सरस मधुर यौवन मति हर लें सबका मन |
कामरूप स्वलंकृत यशस्विन् प्रिय नारि नारायन || (२३-५६)

भावार्थ: कुछ सब के हृदय को मोहने वाली नारायणी की प्रिय सरस, मधुर, युवती, कामरूपी, आभूषणों से युक्त, सुप्रभ थीं|

थीं कुछ तनु गात्र लगतीं बिन मांस गोरा बदन |
कुछ स्वर्ण वर्ण कुछ कृष्ण सम मेघ धूम्र छादन || (२३-५७)

भावार्थ: कुछ पतली जैसे मांस ही न हो, ऐसे गोरे तन की थीं| कुछ का रंग सोने के समान (चमकीला) और कुछ का धुएं से ढके मेघ के समान काला था|

था कुछ का तन लाल वर्ण कुछ के केश ग्रथित गहन |
पहनीं कुछ श्वेत वस्त्र युक्त मेखला पीत नयन || (२३-५८)

भावार्थ: कुछ के शरीर लाल वर्ण के थे| कुछ गहन बालों का गुत्था बनाए थीं| कुछ पीले नेत्र वाली थीं जिन्होंने श्वेत वस्त्र मेखला (कङ्कण, कटिबन्ध और चोली) सहित पहने थे|

कुछ के दीर्घ उदर प्रकृष्ट कर्ण ओष्ठ अद्भुत महन |
थे कुछ के समान हिरण वृहद ताम्र वर्ण नयन || (२३-५९)

भावार्थ: कुछ के पेट बड़े, कुछ के कान बड़े, कुछ के होंठ अद्भुत वृहद थे| कुछ की ताम्र वर्ण हिरण के समान बड़ी आँखें थीं|

देख उन्हें स्थल युद्ध हो रहे भयभीत शत्रुओं के मन |
माया से ले रूप मनचाहा फिर रहीं क्षेत्र सम पवन || (२३-६०)

भावार्थ: उन्हें युद्ध क्षेत्र में देखकर शत्रुओं के हृदय भयभीत हो रहे थे| वह मायावी मनचाहा रूप ले स्थल में वायु समान विचर रहीं थीं|

काट रिपु शीश किए एकत्रित माँ सम गिरि मूर्धन् |
कटे रिपु मुंड से कर रहीं क्रीड़ा सम कंदुक चरन || (२३-६१)

भावार्थ: शत्रुओं के शीशों को काटकर माँ ने पर्वत के शिखर के समान एकत्रित किया है| उन कटे शीशों को पैरों से ठोकर मारकर वह (फुटबॉल समान) क्रीड़ा कर रहीं हैं|

बना हार मुंड पहन कंठ कर रहीं नृत्य क्षेत्र रन |
युक्त गीध लोमश काक लग रहा स्थल भयावन || (२३-६२)

भावार्थ: शीशों की माला बनाकर गले में पहने वह युद्ध क्षेत्र में नृत्य कर रहीं थीं| क्षेत्र गिद्ध, लोमड़ी, काक से युक्त भयानक लग रहा था|

थी युद्ध स्थली शमशान भयावह भरी रक्त परिज्मन् |
कर रहीं नृत्य सीता सम रूप महाबला रक्तवाहिन || (२३-६३)

भावार्थ: युद्ध स्थली सब ओर रक्त रंजित भयानक शमशान थी| महा शक्तिशाली काली के समान सीता नृत्य कर रहीं थीं|

डोल रही भू सम नाव जैसे आया नदी प्रभञ्जन |
हो रहे चलाचल पर्वत और आया सागर प्रकम्पन || (२३-६४)

भावार्थ: पृथ्वी नाव के समान डोल रही थी जैसे नदी में चक्रवात आया हो| पर्वत अस्थिर हो रहे थे और सागर कम्पित हो रहा था|

हो भयभीत गिरने लगे सुर विमान गगन से भुवन |
भटक गए विधि पथ अश्व रथ श्री सूर्यदेव भगवन || (२३-६५)

भावार्थ: भयभीत हो देवताओं के विमान आकाश से पृथ्वी पर गिरने लगे| श्री सूर्यदेव भगवान् के रथ के अश्व निर्धारित मार्ग से भटक गए|

नहीं कर पार रही थी पृथ्वी भार जानकी सहन |
धंस रही थी पाताल लोक हो पीड़ित प्रहार चरन || (२३-६६)

भावार्थ: जानकी के भार को पृथ्वी सहन नहीं कर पा रही थी| उनके पग प्रहार से वह पाताल लोक में धंस रही थी|

सुन भयंकर अट्टहास सिय और देख नृत्य परिजन |
रुदित रिपु चंहु ओर कहें आई प्रलय निश्चित मरन || (२३-६७)

भावार्थ: सीता का भयंकर अट्टहास सुन और संगियों का नृत्य देख चारों ओर रोते हुए शत्रु कह रहे थे कि प्रलय आ गई, मरण निश्चित है|

देख धरा धंस रही पाताल हुए अति भयभीत देवगन |
पुकारने लगे शंकर करें रक्षा आएं तुरंत क्षेत्र रन ||
देख दशा दीन सुर आए तब स्थल रण संहारक जतिन || (२३-६८)

भावार्थ: पृथ्वी पाताल लोक में धंस रही है, यह देख देवगण भयभीत हो गए| वह महादेव को पुकारने लगे कि वह तुरंत युद्ध स्थली में आ रक्षा करें| देवताओं की दीन दशा देख संहारक महादेव तब रण क्षेत्र में आए|

लेट गए समान शव तले पग क्रुद्ध जानकी भगवन |
किया सहन भार उग्र जानकी हो गई तब स्थिर भुवन || (२३-६९)

भावार्थ: क्रोधित जानकी के पग तले शव के समान भगवान् लेट गए| उग्र जानकी का भार सहन किया तब पृथ्वी स्थिर हो गई|

कर एकाग्र स्वयं और करते अति भार सीता सहन |
करें माँ शीघ्र वध दुष्ट सहस्रमुख मना रहे यह मन || (२३-७०)

भावार्थ: स्वयं को एकाग्र कर और सीता का अति भार सहन करते हुए मन में कामना कर रहे थे कि माँ शीघ्र ही दुष्ट सहस्रमुख रावण का वध करें|

यद्यपि हुई स्थिर धरा पर थे अस्थिर प्रशस्त भुवन |
थे अस्थिर हेतु द्रुति श्वास सिय और स्वर चरन || (२३-७१)

भावार्थ: यद्यपि पृथ्वी स्थिर हो गई थी परन्तु उच्च लोक अस्थिर थे| सीता की शीघ्र श्वास और पग स्वर के कारण वह अस्थिर थे|

देख नृत्य भू सुता जानकी करने लगे विचार स्व-मन |
जय माँ होता प्रतीत हो अब निश्चित प्रलय भुवन ||
हो क्रुद्ध तब सीता कीं वध रावण सहित सब परिजन || (२३-७२)

भावार्थ: पृथ्वी पुत्री जानकी का नृत्य देख अपने मन में (देवता) विचार करने लगे, माँ आपकी जय हो| अब पृथ्वी पर प्रलय आना निश्चित है| तब क्रुद्ध होकर सीता ने रावण का उसके परिवार सहित वध कर दिया|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'जानकी द्वारा सहस्रमुख रावण का वध' नाम त्रयोविंशति सर्ग समाप्त|

चतुर्विंशति सर्ग
देवताओं का राम को आश्वासन देना

पश्चात वध सहस्रमुख थीं जानकी अभी भी क्रोधिन् |
देख निकट सृष्टि अंत हेतु जानकी क्रोध और उष्मन् ||
पहुंचे निकट सम काली सिय सब सुर संग चतुरानन || (२४-१)

भावार्थ: सहस्रमुख (रावण) के वध के पश्चात अभी भी जानकी क्रोधित थीं| जानकी के क्रोध और उग्रता के कारण सृष्टि का अंत निकट देख सभी देव, ब्रह्मा जी सहित, सीता के निकट गए जो काली सामान लग रहीं थीं|

करने लगे प्रयास हों शांत सीता आएं स्व-निरूपन |
करबद्ध बार बार करें विनती हों माँ तुरंत प्रसन्न || (२४-२)

भावार्थ: सीता को शांत करने के लिए वह प्रयास करने लगे ताकि वह अपने मूल (सौम्य) रूप में आएं| करबद्ध बार बार विनती करने लगे कि माँ तुरंत प्रसन्न हों|

करने लगे स्तुति बहु भाँति देव हे नाशक द्विषन |
आप निःसंदेह ऊर्जा बल शक्य मूर्तिमत वर्पन् || (२४-३)

भावार्थ: देव बहु भाँति स्तुति करने लगे, ' हे शत्रु विनाशिनी, आप निःसंदेह, ऊर्जा, शक्ति और सामर्थ की मूर्ति रूप हैं'|

अनंत अपरिमित अवतरित रूप नारि राम भगवन |
हैं आप ही शक्ति हो रहीं प्रकाशित समान द्युवन् ||
निर्मल बुद्धिमत ब्रह्माण्ड देवी है शत शत नमन || (२४-४)

भावार्थ: अनंत, अपरिमित, राम भगवान् की पत्नी के रूप में अवतरित आप ही शक्ति हैं जो सूर्य के समान प्रकाशित हो रहीं हैं| निर्मल, बुद्धिमान समस्त सौर मंडल की स्वामिनी, शत शत नमन है|

शक्ति वैष्णवी लीं रूद्र रूप हेतु रक्षा सुर भूजन |
हो क्रोधित सचल अति वेग कीं वध रण सब दुर्जन ||
परारूप निकट राम कीं आप क्रीड़ा संग वैरिन् || (२४-५)

भावार्थ: (हे) वैष्णवी शक्ति, देवताओं और प्राणियों की रक्षा हेतु आपने रूद्र रूप लिया| क्रोधित हो युद्ध में अति वेग से चलती हुई आपने सभी असुरों का वध किया| परारूप (अमानवीय रूप) में राम के समीप आपने शत्रुओं के साथ क्रीड़ा की|

हैं आप दिव्य सूक्ष्म अलौकिक अनंत-लौकिक महन |
करतीं कार्य ईश्वरीय कर अनुसरण निर्देश भगवन || (२४-६)

भावार्थ: आप दिव्य, सूक्ष्म, अलौकिक, ब्रह्माण्डीय महान हैं| भगवान् के निर्देश का पालन करते हुए ईश्वरीय कार्य करती हैं|

हैं स्थित स्वरुप चार शक्ति अंतर्गत माँ वर्पन् |
नासमझ समझें उन्हें सरल पत्नी राम भगवन || (२४-७)

भावार्थ: बलशाली माँ के अंतर्गत चार शक्ति स्वरूप स्थित हैं| नासमझ प्राणी उन्हें राम भगवान् की साधारण पत्नी समझते हैं|

शान्ति विद्या प्रतिष्ठा और निवृत्ति हैं चार वर्पन् |
यह चार चरित्र करें विशेषित सृष्टि सृजक भगवन || (२४-८)

भावार्थ: शान्ति, विद्या, प्रतिष्ठा और निवृत्ति चार रूप सृष्टि करता भगवान् के चार चरित्र हैं जो उन्हें विशेष बनाते हैं|

कहें सनातन ग्रन्थ यह शक्ति स्व-आत्म आनंद भगवन |
हैं यह अनादि अनंत संसिद्धि अतुल ऐश्वर्य महन || (२४-९)

भावार्थ: सनातन ग्रन्थ इन शक्तियों को भगवान् का स्व-आत्म आनंद कहते हैं| यह अनादि, अनंत, सिद्धि स्वरूप, अतुल, ऐश्वर्य और महान हैं|

हैं राम ईश्वर परमात्मा स्वामी सुर असुर भूजन |
केवल माँ सीता समर्थ करा सकें उनके दर्शन || (२४-१०)

भावार्थ: राम ईश्वर, परमात्मा, सुर, असुर और प्राणियों के स्वामी हैं| केवल माँ सीता ही समर्थ हैं जो उनके दर्शन करा सकती हैं|

हेतु शक्ति सीता करते हरि राम जग सृजन पालन |
है यह शक्ति विलक्षण चमत्कारिक समर्थ परिणमन || (२४-११)

भावार्थ: सीता की शक्ति के कारण भगवान् राम सृष्टि का सृजन और पालन करते हैं| यह शक्ति विलक्षण, चमत्कारिक और रूप परिवर्तन में समर्थ है|

करती यह शक्ति प्रकाशित सदैव विश्व रूप जतिन |
हे माँ हो आप ही कारण होतीं अन्य शक्ति उत्पन्न || (२४-१२)

भावार्थ: यह शक्ति महादेव के विश्व रूप को सदैव प्रकाशित करती है| हे माँ, अन्य शक्तियों की उत्पत्ति का हेतु भी आप ही हैं|

ज्ञानशक्ति   क्रियाशक्ति   प्राणशक्ति हैं शक्ति त्रियन |
यह शक्तियां और बलवत हैं स्थित आपके स्वस्त्ययन || (२४-१३)

भावार्थ: ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति और प्राणशक्ति, यह तीन शक्तियां हैं| यह शक्तियां और शक्तिधारी आपके आशीर्वाद से स्थित हैं|

है सत्य केवल एक शक्ति और शक्तिमान हैं जतिन |
है नहीं कोई विवाद इस तथ्य मध्य तत्वदर्शी जन || (२४-१४)

भावार्थ: वास्तविकता में केवल एक ही शक्ति और शक्तिमान महादेव हैं| इस तथ्य पर तत्वदर्शी प्राणियों में कोई विवाद नहीं है|

हैं जानकी रुप सब शक्ति और बलवत राम भगवन |
है वर्णित यह पुराण कहें सब तत्वदर्शी ऋषिगन || (२४-१५)

भावार्थ: जानकी सब शक्तियों का रूप हैं और भगवान् राम शक्तिमान हैं, ऐसा पुराणों में वर्णित है, यह सब तत्वदर्शी ऋषिगण कहते हैं|

हैं भोग्या जानकी पतिव्रता नारि राम भगवन |
और हैं भोक्ता भगवान राम रघुवंश विवर्द्धन || (२४-१६)

भावार्थ: भगवान् राम की पतिव्रता पत्नी जानकी भोग्या हैं और रघुवंश कुल के यशस्वी भगवान् राम भोक्ता हैं|

हैं राम सत्ता सीता मति मानो उचित बिन चिन्तन |
हैं यह सर्वगत सूक्ष्म अचल ध्रुव और एक वर्पन् || (२४-१७)

भावार्थ: श्री राम सत्ता और सीता बुद्धि हैं, ऐसा बिना विचार के मानो| यह सर्वगत, सूक्ष्म, अचल, ध्रुव और एकरूप हैं|

हे देवी समर्थ योगी कर सकें आपके दिव्य दर्शन |
है आपका स्वरुप अनंत अजर ब्रह्म परे अवगमन || (२४-१८)

भावार्थ: हे देवी, आपके दिव्य दर्शन समर्थ योगी कर सकते हैं| आपका स्वरुप अनंत, अजर, ब्रह्म और समझ से परे है|

पा सकें परम पद आपका केवल योगी सिद्धिजन |
हो परम धात्री आप हेतु आनंद सागर इच्छुक जन || (२४-१९)

भावार्थ: केवल योगी और सिद्धि प्राप्त किए प्राणी आपका परम पद पा सकते हैं| आप आनंद सागर के इच्छुक प्राणियों की परम माता हैं|

करतीं दूर सब कष्ट जग आप कृपा से श्री भगवन |
हो शांत माँ न करो संहार अब और निर्दोष भूजन || (२४-२०)

भावार्थ: आप श्री भगवान् की कृपा से संसार के सब कष्ट दूर करतीं हैं| हे माँ, शांत हो जाओ| अब और निर्दोष प्राणियों का संहार न करो|

है प्रसन्न विश्व किया वध आपने रावण सहित परिजन |
क्यों कर रहीं विनाश अब जग किया जिसका संरक्षन || (२४-२१)

भावार्थ: संसार प्रसन्न है कि आपने रावण का उसके सहयोगियों सहित आपने वध किया| जिस संसार का संरक्षण किया है, उसे विनाश क्यों कर रहीं हैं?

कमल लोचन सिय सुनीं विनीत वचन चतुरानन |
हो प्रसन्न कर सम्बोधित सुर बोलीं वह मधुर वचन || (२४-२२)

भावार्थ: कमल लोचनी जानकी ने ब्रह्मदेव के विनीत वचन सुने| तब प्रसन्न हो देवताओं को सम्बोधित कर मधुर वचन बोलीं|

हैं सो रहे सम मृत मेरे पति श्री राम कमल लोचन |
हुए आघात हेतु तीव्र बाण दुष्ट सहस्रमुख रावन || (२४-२३)
हूँ स्थिति दुःख नहीं पा रही सोच कल्याण भुवन |
है नहीं क्षम्य करूँ एक ग्रास चर अचर जग भक्षन || (२४-२४)

भावार्थ: मेरे पति कमल लोचन श्री राम मृत्यु समान सो रहे हैं| वह दुष्ट सहस्रमुख रावण के तीव्र बाणों के कारण घायल हैं| इस दुःख की स्थिति में संसार के कल्याण का नहीं सोच पा रही| यह क्षमा करने योग्य नहीं है| मैं इस चर और अचर विश्व को एक ग्रास में भक्षण कर लूंगी|

सुन वचन क्रुद्ध माँ करने लगे हाहाकार देवगन |
हुई चलायमान भू कम्पित नदेश और डोला गगन || (२४-२५)

भावार्थ: क्रोधित माँ के वचन सुन देवता हाहाकार करने लगे| पृथ्वी चलायमान हो गई| सागर कम्पित हो गया| आकाश डोलने लगा|

गए तब सहित सब देव तल विमान पुष्पक चतुरानन |
किए स्पर्श स्व-कर लौटी चेतना श्री राम भगवन || (२४-२६)

भावार्थ: तब सभी देवताओं के साथ ब्रह्मदेव पुष्पक विमान पर गए (जहां श्री राम अचेतन अवस्था में पड़े थे)|अपने हाथ से उन्हें स्पर्श किया| तब भगवान् श्री राम की चेतना लौटी|

उठ बैठे तत्काल तब महाबाहु हरि श्री रघुनन्दन |
ललकार रावण बोले करूँ भेद स्व-बाण तेरा तन || (२४-२७)

भावार्थ: महाबाहु श्री राम भगवान् तत्काल उठ बैठे| रावण को ललकार कर बोले, 'अपने बाण से तेरा शरीर भेद दूंगा|'

देखे शीघ्र तू मुख भयंकर कुटिल भृकुटि देव मरन |
किए ग्रहण धनुष हो क्रुद्ध देखे तब सुर अभिमुखन || (२४-२८)

भावार्थ: तू शीघ्र ही मृत्यु के देव (यमराज) का कुटिल भृकुटि वाला भंयकर मुख देखेगा| क्रोध में अपना धनुष ग्रहण किया| तब देवताओं को अपने सम्मुख देखा|

नहीं देखे कहीं विमान पुष्पक प्रिय जानकी भगवन |
देखे स्वरुप महाकाली करतीं हुई नृत्य क्षेत्र रन || (२४-२९)

भावार्थ: पुष्पक विमान में कहीं भी भगवान् ने प्रिय जानकी को नहीं देखा| महाकाली के स्वरुप को युद्ध क्षेत्र में नृत्य करते देखा|

कटु खड्ग हस्त लपलपाती जिह्वा चतुर्भुज वर्पन् |
कंठ माल मुंड रिपु थीं खड़ी ऊपर महादेव तन || (२४-३०)

भावार्थ: हाथ में तीव्र तलवार, लपलपाती जीभ, चतुर्भुज रूप, गले में शत्रुओं के शीश की माला और महादेव के शरीर के ऊपर खड़ी थीं|

पी रहीं रक्त अति विशाल तन भयंकर भूतवत नयन |
लग रहीं अति क्षुधित कर रहीं ग्रसित समस्त भुवन || (२४-३१)

भावार्थ: अति विशाल शरीर था| नेत्र भूतवत भयंकर (कंकाल समान) थे| रक्त पी रहीं थीं| अत्यंत भूखी लग रहीं थी और समस्त विश्व को ग्रसित कर रहीं थीं|

कर रहीं क्रीड़ा क्षेत्र रण कर प्रयोग विशाल तन |
कर भंयकर स्वर उछालतीं मुंड रावण मध्य पवन || (२४-३२)

भावार्थ: अपने विशाल शरीर से वह रण क्षेत्र में क्रीड़ा कर रहीं थीं| भयंकर स्वर करती हुई रावण के शीशों को वायु के मध्य में उछाल रहीं थीं|

निकाल रहीं नासिका घरघराती अति तीव्र श्वसन |
था अन्धकार सम काल प्रलय थे डरे सब सुर भूजन ||
पहने हुए हार कंठ कटे रिपु मुंड हस्त पद और नयन || (२४-३३)

भावार्थ: नासिका से घरघराती हुई अति वेग से श्वास निकाल रहीं थीं| प्रलय काल के समान अन्धकार था | सभी देवता और प्राणी डरे हुए थे| गले में शत्रुओं के कटे हुए शीश, हाथ, पैर और नेत्रों की माला पहने थीं|

कर रहीं नृत्य सम तांडव संग रिपु कटे शीश तन |
घूरतीं मृत गज अश्व टूटे रथ घूम रहीं क्षेत्र रन || (२४-३४)

भावार्थ: शत्रुओं के शीश हीन शरीरों के साथ तांडव समान नृत्य कर रहीं थीं| मृत हाथी, घोड़े, टूटे हुए रथ को घूरती हुई युद्ध क्षेत्र में घूम रहीं थीं |

था नहीं कोई असुर अनाहत थे सब के कटे शीश तन |
जब तक न हो रक्त शांत कर रहे कबंध नृत्य दारुन || (२४-३५)

भावार्थः ऐसा कोई असुर नहीं था जो ठीक हो| सभी के शीश तन से कटे थे| जब तक रक्त शांत नहीं हो जाता तब तक यह कबंध (बिन शीश तन) भीषण नृत्य कर रहे थे|

कर रहा था नृत्य कबंध दुष्ट सहस्त्र मुख रावन |
लग रहा था युद्ध क्षेत्र सम महा घोर प्रेत पट्टन || (२४-३६)

भावार्थः दुष्ट सहस्त्र मुख रावण का कबंध भी नृत्य कर रहा था| रण क्षेत्र महाघोर प्रेत नगर की भांति लग रहा था|

करती हुईं नृत्य देखा रूप क्रुद्ध सम काली भगवन |
हुए कम्पित गिर पड़े बाण धनुष हस्त श्री रघुनन्दन || (२४-३७)

भावार्थः क्रोधित काली समान रूप भगवान् ने नृत्य करते हुए देखा| कम्पित हो श्री राम के हाथ से धनुष बाण गिर पड़े|

मीच लिए कमल सम नेत्र हुए भयभीत अवध राजन |
देख विस्मित श्री राम कहे मधुर वचन तब चतुरानन || (२४-३८)

भावार्थः भयभीत हो अवध के सम्राट ने कमल समान नेत्र मीच लिए| श्री राम को आश्चर्यचकित देख तब ब्रह्मदेव मधुर वचन बोले|

देखा जब आपको आहत हेतु तीव्र बाण रावन |
कूद विमान जानकी तब करने लगीं रिपु हनन || (२४-३९)

भावार्थः जब आपको रावण के तीव्र बाण से आहत देखा तो जानकी विमान से कूद शत्रुओं का वध करने लगीं|

कीं आमंत्रित देव दूतीयां करने युद्ध संग द्वेषन |
करतीं क्रीड़ा कीं वध सहज रावण संग परिजन || (२४-४०)

भावार्थ: शत्रुओं के साथ युद्ध करने के लिए देव दूतियों को आमंत्रित किया| सरलता से क्रीड़ा करते हुए रावण का उसके सहयोगियों के साथ वध किया|

कर वध असुर हो मग्न कर रहीं नृत्य अब मध्य क्षेत्र रन |
हैं शक्ति यह करते आप संग जिनके जग सृजन पालन ||
धार रूप महादेव काल प्रलय करते आप प्रमर्दन || (२४-४१)

भावार्थ: असुरों का संहार कर अब मग्न हो यह युद्ध क्षेत्र के मध्य में नृत्य कर रहीं हैं| यह शक्ति हैं जिनके साथ आप विश्व का सृजन और पालन करते हैं तथा प्रलय काल में महादेव का रूप धारण कर विनाश करते हैं|

नहीं समर्थ कर सकें कुछ कार्य बिन जानकी भगवन |
दिखला रहीं वह यही करती हुई स्व-शक्ति प्रदर्शन || (२४-४२)

भावार्थ: हे भगवान्, आप जानकी के बिना कोई कार्य करने में समर्थ नहीं हैं| अपनी शक्ति का प्रदर्शन करती हुई वह यही दिखला रहीं हैं|

देख इन्हें रूप सिय हो जाएं आप भय रहित भगवन |
हैं यही निर्गुण सगुण सत असत और रहित त्रिगुन || (२४-४३)

भावार्थ: हे भगवान, इन्हें जानकी के रूप में देख आप भय-रहित हो जाइए| यही निर्गुण, सगुण, सत, असत और त्रिगुणों से रहित हैं|

किए त्याग भय राम सुन यह प्रिय वचन चतुरानन |
आनंददायक रिपु नाशक जग हितकारी भगवन ||
खोल नेत्र किए तब वह रुद्र रूप जानकी अवलोकन || (२४-४४)

भावार्थ: ब्रह्मदेव के प्रिय वचन सुन तब राम ने भय त्याग दिया| आनंद दायक, रिपु नाशक, जग हितकारी भगवान् ने तब नेत्र खोल रुद्र रूप जानकी को देखा|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'देवताओं का राम को आश्वासन देना' नाम चतुर्विंशति सर्ग समाप्त|

पञ्चविंशति सर्ग
रामचंद्र का सहस्त्रनाम से जानकी की स्तुति करना

सुन वचन ब्रह्मदेव खोले धीरे धीरे नयन रघुनन्दन |
थे आश्चर्यचकित पर भय रहित तब श्री राम भगवन || (२५-१)
जड़वत किए प्रणाम झुका शीश भू जानकी यशस्विन् |
करबद्ध करने लगे स्तुति कर परमेश्वरी सम्बोधन ||
हे युक्त गुण भग परम दिव्या करें आप जग संरक्षन || (२५-२)

भावार्थ: ब्रह्मदेव के वचन सुन धीरे धीर तब उन्होंने कमल समान नेत्र खोले| श्री राम आश्चर्यचकित परन्तु भय से रहित थे| जड़वत पृथ्वी पर शीश झुका उन्होंने प्रभावान जानकी को प्रणाम किया| उन्हें परमेश्वरी सम्बोधित करते हुए करबद्ध उनकी स्तुति करने लगे| हे भग (ईश्वरीय) गुणों से युक्त परम दिव्य देवी आप विश्व का संरक्षण करती हैं|

दो परिचय चंद्र खंड से अंकित युक्त विशाल लोचन |
महादेवी विस्मित हैं इच्छुक जानें आपका वर्णन || (२५-३)

भावार्थ: अर्ध चंद्र से अंकित विशाल नेत्रों वाली अपना परिचय दो| हे महादेवी, हम आश्चर्यचकित हैं| आपका वर्णन जानने के इच्छुक हैं|

सुन अभयदायी यतिन श्री रघुनाथ के मधुर वचन |
बोलीं तब परमेश्वरी साधिकार स्वर सुनो भगवन || (२५-४)

भावार्थ: योगियों को अभय देने वाले श्री राम के वचन सुन तब परमेश्वरी साधिकार स्वर में बोलीं, 'हे भगवान् सुनो|'

हूँ मैं अनन्य अविनाशी परम शक्ति संहारक जतिन |
करूँ विनाश अधर्मी देती दर्शन केवल मुमुक्षजन || (२५-५)

भावार्थ: मैं संहारक महादेव की अनन्य, अविनाशी परम शक्ति हूँ| अधर्मियों का विनाश करती हूँ| केवल मुमुक्षजन (मोक्ष प्राप्ति की इच्छा वालों) को दर्शन देती हूँ|

समझो मुझे सार आत्मा स्थित रूप शिवा अंतर्मन |
मैं ही ज्ञान विज्ञान प्रमत बुद्धि कौशल प्रबोधन || (२५-६)

भावार्थ: मुझे अंतर्मन में स्थित कल्याणकारी आत्मिक तत्व समझो| मैं ही ज्ञान, विज्ञान, प्रमत, बुद्धि, कौशल, प्रबोधन हूँ|

हूँ मैं अमर अधिपति अनंत महिमा और मोक्षदायिन |
देखो मेरा रूप ईश्वरीय देती तुमको दिव्य नयन || (२५-७)

भावार्थ: मैं अमर अनंत महिमा वाली और मोक्ष दाता हूँ| मेरा ईश्वरीय रूप देखो| तुम्हें दिव्य नेत्र देती हूँ|

हुईं मौन वह दिव्य निरूपण दे दिव्य नैन रघुनंदन |
देखे रूप राम जानकी परिपूर्ण सम कोटि द्युवन् || (२५-८)

भावार्थ: श्री राम को दिव्य नेत्र देकर तब वह दिव्य रूपा मौन हो गईं| तब राम ने जानकी का रूप देखा जो करोड़ों सूर्य समान परिपूर्ण था (उज्ज्वलित हो रहा था)|

व्याप्त सहस्त्रों समूह ज्वाला अवरोधित दुर्ग दहन |
मंडित जटा केश प्रकाशित शीश करता अंधक नयन || (२५-९)

भावार्थ: सहस्त्रों ज्वाला के समूह समान व्याप्त, अग्नि के घेरे में घिरा हुआ, नेत्रों को चकाचौंध करने वाला, उज्ज्वल शीश केश की जटाओं से मंडित था|

लिए त्रिशूल हस्त लग रहा रूप अति भयानक उद्वेजन |
समकाल लगा सौम्य युक्त अनंत ऐश्वर्य रूप वदन || (२५-१०)

भावार्थ: हाथ में त्रिशूल लिए उनका रूप अत्यंत उग्र भयानक लग रहा था| परन्तु उसी समय उनका मुख सौम्य और अनंत ऐश्वर्य से युक्त लगा|

ललाट स्थित अर्ध चंद्र था प्रतिनिधि शिवा महन |
भव्य रम्य मुख दर्शा रहा रूप श्री नारि नारायन ||
कोटि सोम एकत्रित नहीं सम मुख माँ उज्ज्वलन ||
था दिव्य मुकुट शीश गदा हस्त पग नूपुर आभूषन || (२५-११)

भावार्थ: ललाट पर स्थित अर्ध चंद्र महादेव (कल्याणकारी प्रभु) का प्रतिनिधित्व कर रहा था| मुख की भव्यता और गौरवता भगवान् विष्णु की पत्नी श्री को दर्शा रही थी| करोड़ों चन्द्रमा के समूह भी माँ के मुख की प्रभा की समानता नहीं कर सकते| शीश पर दिव्य मुकुट, हाथ में गदा और पैरों में नूपुर आभूषण पहने थीं|

थी कंठ दिव्यमाल तन पर दिव्य गंध का अनुलेपन |
शंख चक्र अन्य हस्त त्रिनेत्री पहने सिंह चर्म आवरन || (२५-१२)

भावार्थ: गले में दिव्य माला और शरीर पर दिव्य गंध का लेप किए थीं| अन्य हाथों में शंख चक्र थे| त्रिनेत्री थीं| सिंह की खाल का वस्त्र पहने थीं|

स्थित अन्तः बाह्य सरिर सर्वव्यापी महा ओजस्विन |
थीं शांत सर्वाकार सर्वशक्तिमान और सनातन || (२५-१३)

भावार्थ: ब्रह्माण्ड के अंत बाह्य में स्थित, सर्वव्यापक, महा ओजस्वी, शांत, सर्वाकार, सर्वशक्तिमान और सनातन थीं|

पूजित ब्रह्मदेव इंद्र सुर आदि उनके सम पद्म चरन |
देखे राम अनेक मुख युक्त अंग सब शीश मुख नयन || (२५-१४)

भावार्थ: उनके कमल समान पग ब्रह्मा, इंद्र और देवताओं से पूजित थे| राम ने (सीता जी) के अनेक मुख देखे |उनके सभी मुख शीश, मुख और नेत्रों से युक्त थे|

था दर्शन दिव्या समान करें दर्शन ईश्वरीय महन |
देख यह रूप महेश्वरी हुआ हृदय गदगद भगवन || (२५-१५)
हो प्रसन्न युक्त भक्ति हिय देख उनमें ब्रह्म वर्पन् |
कर नियंत्रित स्व-आत्मा करने लगे वह ॐ उच्चारन || (२५-१६)

भावार्थ: दिव्या का दर्शन महान ईश्वर के दर्शन के समान था| महेश्वरी का यह रूप देख भगवान् (श्री राम) का हृदय गदगद हो गया| प्रसन्न हो, हृदय में भक्ति से युक्त, उनमें ब्रह्म रूप देख, अपनी आत्मा को नियंत्रण में कर वह ॐ का उच्चारण करने लगे|

करें स्तुति उनकी कर उच्चारण एक सहस्त्र अष्ट नामन |
सीता उमा परमा शक्ति अनंता निष्कला अमल-पावन || (२५-१७)

भावार्थ: १००८ नाम से उनकी स्तुति करने लगे | सीता (१), उमा (२), परमा (श्रेष्ठ) (३), शक्ति (४), अनंता (५), निष्कला (पूर्ण) (६), पवित्र अमल/ अमला (परम शुद्ध) (७)|

शांता माहेश्वरी शाश्वती परमाक्षरा अचिन्त्यन |
केवला अनंता परमात्मिका सुर-पूजित-शिवात्मन || (२५-१८)

भावार्थ: शांता (८), माहेश्वरी (९), शाश्वती (अनंत) (१०), परमाक्षरा (परम अक्षर ॐ) (११), अचिन्त्यन/ अचिन्त्या (अबोधगम्य, जिन्हें जाना न जा सके) (१२), केवला (सर्वज्ञ) (१३), अनंता (१४), परमात्मिका (पवित्र आत्मा) (१५), सुर-पूजित-शिवात्मन/ शिवात्मा (१६)|

अनादि अव्यया देवी-शुद्धा देवात्मा सर्वगोचरन |
एकानेक सर्वस्थित निर्मल मायाविहीन-हरिजन || (२५-१९)

भावार्थ: अनादि (जिनका न कोई आदि और अंत) (१७), अव्यया (आत्मिक) (१८) देवी-शुद्धा (१९), देवात्मा (२०), सर्वगोचरन/ सर्वगोचरा (२१), एकानेक (२२), सर्वस्थित (२३), निर्मल (२४), हरि भक्त मायाविहीन (२५)|

महामाहेश्वरी शक्त महादेवी काष्ठा निरंजन |
सर्वातरस्था चिछक्ति रति-लालसा-लुब्ध-मोहन || (२५-२०)

भावार्थ: महामाहेश्वरी (२६), शक्त (शक्ति देवी) (२७), महादेवी (२८), काष्ठा (वन देवी) (२९), निरंजन/ निरंजना (पवित्र) (३०), सर्वातरस्था (सर्व भूत) (३१), चिछक्ति (चित्त शक्ति अर्थात मनोबल शक्ति) (३२), आनंद-लुब्ध-रति-लालसा (रति समान आनंद देने वाली) (३३)|

जानकी असुर-विनासिनी मारक-सहस्रमुख-रावन |
राम-मनहर-वक्ष-विहारिणी सुख-दायिनी-मिथिलाजन || (२५-२१)

भावार्थ: जानकी (३४), असुर-विनासिनी (३५), मारक-सहस्रमुख-रावण (३६), राम-मनहर-वक्ष-विहारिणी (३७), मिथिलाजन- सुख-दायिनी (३८)|

उमा-रूपा सर्वात्मिका विद्या शान्ति ज्योति-वर्पन् |
अयुताक्षरी सर्व-प्रतिष्ठा निवृत्ति अमृत-दायिन || (२५-२२)

भावार्थ: उमा-रूपा (३९), सर्वात्मिका (सर्व व्यापी) (४०), विद्या (४१), शान्ति (४२), ज्योति-स्वरूपा (४३), अयुताक्षरी (अनगिनत अक्षर वाली अर्थात जिनकी कोई सीमा न हो) (४४), सर्व-प्रतिष्ठा (४५), निवृत्ति (मुक्ति दाता) (४६), अमृत-दाता (४७)|

व्योममूर्ति व्योममयी व्योमाधारा अच्युतन |
लता आदि-अनंत-रहिता योषा-सुंदरी-त्रिभुवन ||
असुर-रिपु-कुलाकुला मायावी-कारणात्मन || (२५-२३)

भावार्थ: व्योममूर्ति (आकाश के सामान वृहद) (४८), व्योममयी (स्वयं आकाश) (४९), व्योमाधारा (आकाश जिनका आधार) (५०), अच्युतन/ अच्युता (अविनाशी) (५१), लता (नृत्य हस्ता अर्थात किनके हस्त नृत्य उपयुक्त हैं) (५२), आदि-अनंत-रहिता (५३), सुंदरी-त्रिभुवन-योषा (तीनों लोकों में अति सुंदरी) (५४), असुर-रिपु-कुलाकुला (शत्रुओं और असुरों को व्याकुल करने वाली) (५५), मायावी-कारणात्मन/ कारणात्मा (माया की हेतु) (५६)|

ब्रह्मा-वरक-दशानन-नाभि-अमृत-आश्रय-दायिन |
प्रथमज-नन्द   नारायण-प्राणेश्वर प्रिया-रघुनन्दन ||
मातामही   नियंत्रक-मृत्यु-दाता-महिषवाहन || (२५-२४)

भावार्थ: ब्रह्मा-वरक-दशानन-नाभि-अमृत-आश्रय-दायिन (ब्रह्मदेव के वर से लंकापति रावण की नाभि में अमृत का आश्रय देने वाली) (५७), प्रथमज-नन्द (आदि जन्मी) (५८), नारायण-प्राणेश्वर (५९), प्रिया-रघुनन्दन (६०), मातामही (६१), नियंत्रक-मृत्यु-दाता-महिषवाहन (यम) (६२)|

प्राणेश्वरी महिमा सर्वशक्ति प्राणदाता-भुवन |
प्रधान पुरुषेश्वरी कला काष्ठा चंद्र-ज्योत्सन || (२५-२५)

भावार्थ: प्राणेश्वरी (६३), महिमा (६४), सर्वशक्ति (६५), प्राणदाता-भुवन (६६), प्रधान (६७), पुरुषेश्वरी (६८), कला (६९), काष्ठा (७०), चंद्र-ज्योत्सन/ चंद्र ज्योत्सना (७१)|

नियंत्रक-सर्व-कार्य   अनादि सर्व-भूतेश्वर-स्वामिन |
ईश्वरी अव्यक्तगुण महानन्दा ब्रह्माण्ड-सर्व-सनातन || (२५-२६)

भावार्थ: नियंत्रक-सर्व-कार्य (७२), अनादि (७३), सर्व-भूतेश्वर-स्वामिन (७४), ईश्वरी (७५), अव्यक्तगुण (जिनका वर्णन न किया जा सके) (७६), महानन्दा (महान आनंद देने वाली) (७७), ब्रह्माण्ड-सर्व-सनातन (७८)|

योग-स्थित-योगेश्वर-स्वामिनी उज्जवल-जन्मित-गगन |
चितान्त-स्थित-कालिका महेशी वृषवाहनी शवासन || (२५-२७)

भावार्थ: योग-स्थित-योगेश्वर-स्वामिनी (७९), उज्जवल-जन्मित-गगन (८०), चितान्त-स्थित-कालिका (चेतन में स्थित काली स्वरुप देवी) (८१), महेशी (महिष वाहिनी) (८२), वृषवाहनी (८३), शवासन (८४)|

बालिका तरुणी वृद्धा जरातुरा माता-चिरंतन |
महामाया सुदुष्पुर देवीका मूल-प्रकृति-जनन || (२५-२८)

भावार्थ: बालिका (८५), तरुणी (८६), वृद्धा (८७), जरातुरा (वृद्ध आयु से परे) (८८), माता-चिरंतन (पुरातन माँ) (८९), महामाया (९०), सुदुष्पुर (दूर देश में रहने वाली, अर्थात स्वर्ग में रहने वाली) (९१), देवीका (देवी स्वरुप) (९२), मूल-प्रकृति-जनन (मूल प्रकृति की जननी) (९३)|

संसार-योनि सकला सर्व-शक्ति-उत्पत्तित सार-भुवन |
परे-कपट-दुर्वाला दुरालोका दुरासद-सनातन || (२५-२९)

भावार्थ: संसार-योनि (९४), सकला (सर्वव्यापी) (९५), सर्व-शक्ति-उत्पत्तित (सर्व शक्ति से उत्पन्न) (९६), सार-भुवन ((संसार तत्व) (९७), परे-कपट-दुर्वाला (कपट विहीन दुर्वाला देवी) (९८), दुरालोका (कठिन दर्शन) (९९), दुरासद-सनातन (अनंत और पुरातन) (१००)|

प्राणशक्ति प्राणविद्या परम-कला महायोगिन |
महाविभूति दुर्धर्षा प्रकृति-मूल-उत्पत्तित-गुन || (२५-३०)

भावार्थ: प्राणशक्ति (१०१), प्राणविद्या (१०२), परम-कला (१०३), महायोगिन (१०४), महाविभूति (१०५), दुर्धर्षा (अटल) (१०६), प्रकृति-मूल-उत्पत्तित-गुन/ गुण (मूल प्रकृति से उत्पन्न गुण) (१०७)|

अनादि-अनंत-ऐश्वर्या विराट-पुरुष-परमात्मन |
महाबली सृष्टि-पालक-संहारक अव्यक्ता अकलंकन || (२५-३१)

भावार्थ: अनादि-अनंत-ऐश्वर्या (न समाप्त होने वाले ऐश्वर्य से युक्त) (१०८), विराट-पुरुष-परमात्मन/ परमात्मा(१०९), महाबली (११०), सृष्टि-पालक-संहारक (१११), अव्यक्ता (११२), अकलंकन (कलंक हीन) (११३)|

दिव्य-शब्द-उत्पन्ना दिव्य-ॐ-शब्दमयी नाद-नामन |
नाद-मूर्ति परे-प्रधान-पुरुष पुरुषात्मिकन || (२५-३२)

भावार्थ: दिव्य-शब्द-उत्पन्ना (दिव्य शब्द ॐ से उत्पन्न) (११४), दिव्य-ॐ-शब्दमयी (स्वयं दिव्य शब्द ॐ) (११५) , नाद-नामन (ॐ नामक) (११६), नाद-मूर्ति (ॐ स्वरुप) (११७), परे-प्रधान-पुरुष (पुरुषोत्तमा) (११८), पुरुषात्मिकन (चेतन पुरुष स्वरुप) (११९) |

पुराणी चिन्मयी उत्कृष्ट-आदि-पुरुष-निरूपन |
भूतान्तरात्मा प्रकृति-माँ-उत्पन्न-उपम-चेतन || (२५-३३)

भावार्थ: पुराणी (सनातनी) (१२०), चिन्मयी (चेतन स्वरुप) (१२१), उत्कृष्ट-आदि-पुरुष-निरूपन/ निरूपण (१२२), भूतान्तरात्मा (सभी प्राणियों की आत्मा में वास करने वाली) (१२३), प्रकृति-माँ-उत्पन्न-उपम-चेतन (१२४)|

परे-जन्म परे-मरण परे-वृद्धायु सर्व-शक्ति-संपन्न |
व्यापिनी देवी-अनवच्छिन्न प्रधान-सुप्रेविशिन || (२५-३४)

भावार्थ: परे-जन्म (१२५), परे-मरण (१२६), परे-वृद्धायु (१२७) ,सर्व-शक्ति-संपन्न (१२८), व्यापिनी (१२९), देवी-अनवच्छन्न (अखंडित देवी) (१३०), प्रधान-सुप्रेविशिन (भगवान् के कक्ष में प्रवेश करने योग्य) (१३१)|

क्षेत्र-ज्ञानी शक्ति-धारिणी अव्यक्त शुभ-लक्षन |
शुद्ध अनादि माया-भिन्न त्रितत्वा धर्म-गुण-संपन्न || (२५-३५)

भावार्थ: क्षेत्र-ज्ञानी (समस्त ज्ञान विज्ञान ज्ञाता) (१३२), शक्ति-धारिणी (१३३), अव्यक्त (१३४), शुभ-लक्षन/लक्षण (१३५), शुद्ध (१३६), अनादि (१३७), माया-भिन्न (माया से पृथक) (१३८), त्रितत्वा (तीनों तत्व - सत, रजस, तमस की ज्ञाता) (१३९), धर्म-गुण-संपन्न (१४०)|

अद्भुत-मायावी विश्व-उत्पन्ना तामसी-जग-सहभागिन |
ध्रुव पुरुषार्थी अदृष्टा कृष्ण-वर्ण रक्ता शुक्र-भावन || (२५-३६)

भावार्थ: अद्भुत-मायावी (१४१), विश्व-उत्पन्ना (१४२), तामसी-जग-सहभागिन (संसार में लिप्त होने के कारण तामसी) (१४३), ध्रुव (१४४), पुरुषार्थी (१४५), अदृष्टा (१४६), कृष्ण-वर्ण (१४७), रक्ता (रक्त जननी) (१४८), शुक्र-भावन (वीर्य देने वाली) (१४९)|

कार्य-जननी ब्रह्म-आश्रय-भूत प्रथम-उत्पन्न |
स्वकार्या ब्राह्मी प्रगट महती ज्ञान-निरूपन || (२५-३७)

भावार्थ: कार्य-जननी (१५०), ब्रह्म-आश्रय-भूत (ब्रह्म आश्रित) (१५१), प्रथम-उत्पन्न (१५२), स्वकार्या (१५३), ब्राह्मी (१५४), प्रगट (१५५), महती (महान देवी) (१५६), ज्ञान-निरूपन/निरूपण(ज्ञान-स्वरूपा) (१५७)|

ऐश्वर्य धर्मात्मा ब्रह्म-मूर्ति हृदय-निवसन् |
वैरागी जय-दाता शीघ्र-विजय-दात्री जय-सहगमन ||
युद्ध-विजेता-जैत्री जय-लक्ष्मी-नारि-नारायन || (२५-३८)

भाववार्थ: ऐश्वर्य (१५८), धर्मात्मा (१५९), ब्रह्म-मूर्ति (१६०), हृदय-निवसन् (१६१), वैरागी (१६२), जय-दाता (१६३), शीघ्र-विजय-दात्री (१६४), जय-सहगमन (१६५), युद्ध-विजेता-जैत्री (१६६), जय-लक्ष्मी-नारि-नारायन (१६७)|

सुखदायक शुभदायक शुभा जल-योनि संक्षोभ-नाशन |
स्वयंभूति मानसी तत्वसम्भवा-दात्री-आश्वासन || (२५-३९)

भावार्थ: सुखदायक (१६८), शुभदायक (१६९), शुभा (१७०), जल-योनि (१७१), संक्षोभ-नाशन (१७२), स्वयंभूति (१७३), मानसी (१७४), तत्वसम्भवा-दात्री-आश्वासन (आश्वासन देने वाली तत्वसम्भवा देवी) (१७५)|

ईश्वराणी शर्वाणी अर्धनारीश्वर-रूप-जतिन |
भवानी रुद्राणी अम्बिका महालक्ष्मी-दात्री-धन || (२५-४०)

भावार्थ: ईश्वराणी (१७६), शर्वाणी (१७७), अर्धनारीश्वर-रूप-जतिन (महादेव का स्वरुप अर्धनारीश्वर) (१७८), भवानी (१७९), रुद्राणी (१८०), अम्बिका (१८१), महालक्ष्मी-दात्री-धन (१८२)|

माहेश्वरी स्व-प्रगटा देवी-भुक्ति-मुक्ति-फल-दायिन |
सर्वेश्वरी नित्या मुदिता कोमलांगी-युक्त-स्वर्न || (२५-४१)

भावार्थ: माहेश्वरी (१८३), स्व-प्रगटा (१८४), देवी-भुक्ति-मुक्ति-फल-दायिन (१८५), सर्वेश्वरी (१८६), नित्या (१८७), मुदिता (१८८), कोमलांगी-युक्त-स्वर्न/ स्वर्ण (स्वर्ण से युक्त कोमल अंग) (१८९)|

महादेव-सेविका निमित्त-इंद्र-उपेंद्र-चतुरानन |
पतिव्रता-श्री-रघुनन्दन स्थित-ईश्वर-अर्धासन || (२५-४२)

भावार्थ: महादेव-सेविका (१९०), निमित्त-इंद्र-उपेंद्र-चतुरानन (इंद्र, उपेंद्र, ब्रह्मदेव की पसंद) (१९१), पतिव्रता-श्री-रघुनन्दन (१९२), स्थित-ईश्वर-अर्धासन (१९३)|

सर्व-मंगल-कामिनी सुता-हिमालय-धरणीधरन |
पार्वती दात्री-परमानंद सक्षम-महासागर-शोषन || (२५-४३)

भावार्थ: सर्व-मंगल-कामिनी (१९४), सुता-हिमालय-धरणीधरन (१९५), पार्वती (१९६), दात्री-परमानंद (१९७), सक्षम-महासागर-शोषन/ शोषण (१९८)|

योग-दायक ज्ञानमूर्ति-विकासक-देवी-विचक्षन |
योग्या कमला भृगु-सुता-श्री उत्तम-गुणवत्तन ||
सावित्री अनंत-हिय-वासी लक्ष्मी-नारि-नारायन || (२५-४४)

भावार्थ: योग-दायक (१९९), ज्ञानमूर्ति-विकासक-देवी-विचक्षन/ विचक्षण (ज्ञान मूर्ति विकास करने वाली बुद्धिमान देवी) (२००), योग्या (२०१), कमला (२०२), भृगु-सुता-श्री (२०३), उत्तम-गुणवत्तन (२०४), सावित्री (२०५), अनंत-हिय-वासी (२०६), लक्ष्मी-नारि-नारायन/ नारायण (२०७)|

स्थित-कमल शुभ्र योगनिद्रा सरस्वती सुदर्शन |
सर्व-विद्या जग-ज्येष्ठा सुमंगल-कारक-सुर-भूजन || (२५-४५)

भावार्थ: स्थित-कमल (२०८), शुभ्र (२०९), योगनिद्रा (२१०), सरस्वती (२११), सुदर्शन (२१२), सर्व-विद्या (२१३), जग-ज्येष्ठा (२१४), सुमंगल-कारक-सुर-भूजन (२१५)|

वासवी वर-दात्री वाच्या सक्षम-सर्वार्थ-साधन |
कीर्ति वागीश्वरी महाविद्या सर्वविद्या सुशोभन || (२५-४६)

भावार्थ: वासवी (दिव्य रात्रि स्वरुप) (२१६), वर-दात्री (२१७), वाच्या (विद्या देवी) (२१८), सक्षम-सर्वार्थ-साधन (२१९), कीर्ति (२२०), वागीश्वरी (विद्या और वाणी की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती) (२२१), महाविद्या (२२२), सर्वविद्या (२२३), सुशोभन (२२४)|

गुह्यविद्या आत्मविद्या सर्वात्मा स्वाहा सर्वभावन |
विश्वम्भरी स्वधा मेधा धृति श्रुति सिद्धि-दायन || (२५-४७)

भावार्थ: गुह्यविद्या (२२५), आत्मविद्या (२२६), सर्वात्मा (२२७), स्वाहा (२२८), सर्वभावन (२२९), विश्वम्भरी (विश्व स्वामिनी) (२३०), स्वधा (पितरों को समर्पित किया जाने वाला अन्न या आहुति) (२३१), मेधा (बुद्धिवान) (२३२), धृति (धैर्यवान) (२३३), श्रुति (ईश्वर की वाणी/ सनातन ग्रन्थ) (२३४), सिद्धि-दायन (२३५)|

नाभि सुनाभि सुकृति माधवी देवी-नरवाहिन |
पूज्या विभावरी सौम्या भगिनी भोग-फल-दायिन || (२५-४८)

भावार्थ: नाभि (२३६), सुनाभि (२३७), सुकृति (२३८), माधवी (२३९), देवी-नरवाहिन (निर्वाह करने वाली देवी) (२४०), पूज्या (२४१), विभावरी (वरुण देव नगर वासिनी) (२४२), सौम्या (कोमल, मृदु, सुंदर और शुभ) (२४३), भगिनी (२४४), भोग-फल-दायिन (भोगों/ कर्मों का फल देने वाली) (२४५)|

शोभा वंशकरी लीला मानिनी रम्या परमेष्ठिन |
त्रैलोक्यसुंदरी कामचारिणी अति-शोभन || (२५-४९)

भावार्थ: शोभा (२४६), वंशकरी (शक्ति देवी) (२४७), लीला (२४८), मानिनी (२४९), रम्या (सुखद) (२५०), परमेष्ठिन (परम इष्ट) (२५१), त्रैलोक्यसुंदरी (२५२), कामचारिणी (मंदर पर्वत वासिनी देवी) (२५३), अति-शोभन (२५४)|

देवी-स्थित-मध्य-महानुभाव मारक-महामहिष-दुर्जन |
पद्ममाला धारणी-मुखमुकुट-विलक्षण पाप-हरन || (२५-५०)

भावार्थ: देवी-स्थित-मध्य-महानुभाव (२५५), मारक-महामहिष-दुर्जन (२५६), पद्ममाला (२५७), धारणी-मुखमुकुट-विलक्षण (२५८), पाप-हरण (२५९)|

धारिणी-रञ्जित-परिधान सरोवर-दिव्य-हंस-वासिन |
कान्ता व्योमी भूषित-दिव्य-आभूषण जग-विस्तारन || (२५-५१)

भावार्थ: धारिणी-रञ्जित-परिधान (२६०), सरोवर-दिव्य-हंस-वासिन (दिव्य हंस के सरोवर में वास करने वाली) (२६१), कान्ता (२६२), व्योमी (आकाश वासी) (२६३), भूषित-दिव्य-आभूषण (२६४), जग-विस्तारन (संसार का विस्तार करने वाली) (२६५)|

नियंत्रण-कर्ता मन्त्र-श्रेष्ठतर उपम-मयूर-आरोहिन |
नंदिनी भद्रकाली कौमारी उदिति-आदित्यवर्न || (२५-५२)

भावार्थ: नियंत्रण-कर्ता (२६६), मन्त्र-श्रेष्ठतर (२६७), उपम-मयूर-आरोहिन (सर्वश्रेष्ठ मयूर पर सवार) (२६८), नंदिनी (आनंदित करने वाली) (२६९), भद्रकाली (२७०), कौमारी (२७१), उदिति-आदित्यवर्न (उगते सूर्य के समान वर्ण) (२७२)|

गौरी महाकाली पूजित-सुरगण स्थित-वृष-आसन |
माँ-अदिति निर्यता रौद्री पद्मगर्भा विवाहन || (२५-५३)

भावार्थ: गौरी (२७३), महाकाली (२७४), पूजित-सुरगण (२७५), स्थित-वृष-आसन (२७६), माँ-अदिति (२७७), निर्यता (जिसके विस्तार की सीमा नहीं) (२७८), रौद्री (२७९), पद्मगर्भा (२८०), विवाहन (विवाह पद्धति निर्धारण करने वाली देवी) (२८१)|

विरूपाक्षी महासुर-मर्दिनी जिह्वा-ओष्ठ-स्वदन |
वर-दायिनी कामधरण विभावरी रहित-आलोचन || (२५-५४)

भावार्थ: विरूपाक्षी (त्रिनेत्र देवी) (२८२), महासुर-मर्दिनी (२८३), जिह्वा-ओष्ठ-स्वदन (जीभ और ओठों को चाटने वाली अर्थात महाकाली स्वरूपा) (२८४), वर-दायिनी (२८५), कामधरण (इच्छा पूर्ण करने वाले देवी) (२८६), विभावरी (पीत वर्ण) (२८७), रहित-आलोचन (आलोचना से रहित) (२८८)|

अद्भुत-मुकुट-धारिणी कौशिकी भक्त-रिद्धि-वर्धन |
कर्षिणी कृष्ण-वर्ण-सम-रात्रि सुर-दुःख-नाशन || (२५-५५)

भावार्थ: अद्भुत-मुकुट-धारिणी (२८९), कौशिकी (२९०), भक्त-रिद्धि-वर्धन (२९१), कर्षिणी (मनमोहक) (२९२), कृष्ण-वर्ण-सम-रात्रि (२९३), सुर-दुःख-नाशन (२९४)|

विरूपा सुरूपा अति-बलशाली-भीमा मोक्ष-दायिन |
भक्त-दुःख-नाशनी प्रतापी-भव्या माया-विनाशन || (२५-५६)

भावार्थ: विरूपा (सुडौल देवी) (२९५), सुरूपा (२९६), अति-बलशाली-भीमा (२९७), मोक्ष-दायिन (२९८), भक्त-दुःख-नाशनी (२९९), प्रतापी भव्या (३००), माया-विनाशन (३०१)|

निर्गुणा नित्य-महन-विभवा निःसारा-हीन-प्रपञ्चन |
निरपत्रपा यशस्विनी सामगीति जन्म-मरण-मोचन || (२५-५७)

भावार्थ: निर्गुणा (३०२), नित्य-महन-विभवा (नित्य संभावना देने वाली देवी) (३०३), निःसारा-हीन-प्रपञ्चन (हीनता और प्रपंच विनासिनी) (३०४), निरपत्रपा (निर-

अहंकारी) (३०५), यशस्विनी (३०६), सामगीति (साम वेद मन्त्र गायिका) (३०७), जन्म-मरण-मोचन (जन्म -मरण के चक्र से छुटकारा देने वाली) (३०८)|

दीक्षा विद्याधरी दीप्ता महेंद्र-शक्ति-विनिपातिन |
सर्व-विद्या-दायिनी सर्व-शक्ति-देव शक्ति-भूजन || (२५-५८)

भावार्थ: दीक्षा (३०९), विद्याधरी (३१०), दीप्ता (३११), महेंद्र-शक्ति-विनिपातिन (इंद्रदेव को शक्ति देने वाली) (३१२), सर्व-विद्या-दायिनी (३१३), सर्व-शक्ति-देव (३१४), शक्ति-भूजन (३१५)|

प्रिया-सर्वेश्वर औषध-तार्क्षी निराधारा अकलंकन |
नित्य-सिद्ध-देवी निरामया सागर-गर्भ-निवासिन || (२५-५९)

भावार्थ: प्रिया-सर्वेश्वर (३१६), औषध-तार्क्षी (तार्क्षी नामक पौधे से बनी औषधि) (३१७), निराधारा (३१८), अकलंकन (३१९), नित्य-सिद्ध-देवी (३२०), निरामया (माया रहित) (३२१), सागर-गर्भ-निवासिन (३२२)|

कामधेनु वेद-गर्भा प्रमत-धीमती भक्त-मोह-नाशन |
निःसंकल्पा विनया विनय-प्रदा देवी-निः-आतंकन || (२५-६०)

भावार्थ: कामधेनु (३२३), वेद-गर्भा (३२४), प्रमत-धीमती (बुद्धिमान देवी) (३२५), भक्त-मोह-नाशन (३२६), निःसंकल्पा (३२७), विनया (३२८), विनय-प्रदा (३२९), देवी-निः-आतंकन (भय दूर करने वाली देवी) (३३०)|

देवदेवी सगुणा धारणी-सहस्त्र-ज्वाला-अवतंसन |
मनोन्मनी उर्वी गुर्वी गुरु श्रेष्ठ षड-गुण-आत्मिकन || (२५-६१)

भावार्थ: देवदेवी (३३१), सगुणा (३३२), धारणी-सहस्त्र-ज्वाला-अवतंसन (एक सहस्त्र ज्वालाकी माला धारणी) (३३३), मनोन्मनी (मस्तिष्क से परे मष्तिस्क) (३३४), उर्वी (धरा) (३३५), गुर्वी (स्त्रियों को गर्भ दायिनी) (३३६), गुरु (३३७), श्रेष्ठ

(३३८), षड-गुण-आत्मिकन (छै गुण समाहिता- सत्य, दान, अनालस्य, अनसूया, क्षमा और घृति) (३३९)|

देवी-भव्या जननी-अष्ट-वसु-रक्षक-श्री-नारायन |
महाभगवती भगिनी-इंद्र-उपेंद्र भक्त-परायन || (२५-६२)

भावार्थ: देवी-भव्या (३४०), जननी-अष्ट-वसु-रक्षक-श्री-नारायन (३४१), महाभगवती (३४२), भगिनी-इंद्र-उपेंद्र (३४३), भक्त-परायन/ परायण (३४४)|

ज्ञान ज्ञेया जरातीता दक्षिणा गति-सुर-असुर-भूजन |
वेदांत-विषयक-निपुण वामा सर्व-भूत-पूजित दहन || (२५-६३)

भावार्थ: ज्ञान (३४५), ज्ञेया (जानने योग्य) (३४६), जरातीता (परे-आयु) (३४७), दक्षिणा (दक्षिण में स्थित) (३४८), गति-सुर-असुर-भूजन (सुर, असुर और प्राणियों की अंतिम गति) (३४९), वेदांत-विषयक-निपुण (३५०), वामा (वाम में स्थित) (३५१), सर्व-भूत-पूजित (३५२), दहन (अग्नि) (३५३)|

योगमाया-मूर्ति विभावज्ञा कर्ता-ब्रह्माण्ड-सृजन |
महामोहा महीयसी मति सत्या ब्रह्म-वृक्ष-पावन || (२५-६४)

भावार्थ: योगमाया-मूर्ति (३५४), विभावज्ञा (सर्व-ज्ञाता) (३५५), कर्ता-ब्रह्माण्ड-सृजन (३५६), महामोहा (३५७), महीयसी (महादेवी) (३५८), मति (३५९), सत्या (३६०), ब्रह्म-वृक्ष-पावन (३६१)|

महाशक्ति ख्याति प्रतिज्ञा अंकुर-जग-बीज-प्रभवन |
चित्त-चेतना महामति शांता महा-योगेंद्र-शायिन || (२५-६५)

भावार्थ: महाशक्ति (३६२), ख्याति (३६३), प्रतिज्ञा (३६४), अंकुर-जग-बीज-प्रभवन (संसार के बीज के अंकुर की उत्पत्ति) (३६५), चित्त-चेतना (३६६), महामति (३६७), शांता (३६८), महा-योगेंद्र-शायिन (महा योगेंद्र निद्रा में स्थित) (३६९)|

रूप-विकृति शांकरी शास्त्री गन्धर्वा यक्ष-अर्चितन |
वैश्वानरी महाशाला गृह-प्रिया प्रवर-देवसेन || (२५-६६)

भावार्थ: रूप-विकृति (३७०), शांकरी (३७१), शास्त्री (३७२), गन्धर्वा (३७३), यक्ष-अर्चितन (यक्षों से पूजित) (३७४), वैश्वानरी (अग्निकोण) (३७५), महाशाला (स्वामिन साकेत) (३७६), गृह-प्रिया (३७७), प्रवर-देवसेन (देवों की सेना प्रमुख) (३७८)|

महारात्रि शची शिवानंदा दुःस्वप्ननाशिनी पूज्यन |
अपूज्या जगद्धात्री दुरत्यय-दुर्विज्ञेयस्वरूपन || (२५-६७)

भावार्थ: महारात्रि (३७९), शची (३८०), शिवानंदा (३८१), दुःस्वप्ननाशिनी (३८२), पूज्यन (३८३), अपूज्या (ब्रह्माण्ड में विरोधाभास)(३८४), जगद्धात्री (३८५), दुरत्यय-दुर्विज्ञेयस्वरूपन (समझने में कठिन दुर्विज्ञेयस्वरूपा) (३८६)|

गुहाम्बिका गुहोतपत्ति महापीठा सुता-पवन |
यज्ञ-हव्य-वाहान्तरा मार्गी हव्य-वाह-समुद्भवन || (२५-६८)

भावार्थ: गुहाम्बिका (गुफा में रहने वाली देवी) (३८७), गुहोतपत्ति (गुफा में उत्पन्न) (३८८), महापीठा (३८९), सुता-पवन (३९०), यज्ञ-हव्य-वाहान्तरा (यज्ञ-हव्य के बाहर और अंदर) (३९१), मार्गी (३९२), हव्य-वाह-समुद्भवन (समुद्र के समान हव्य) (३९३)|

वृद्धायु-नियंत्रक बुद्धि जगद्योनि-गर्भ-जग-प्रसवन |
जगतांत जनित्री बुद्धिमती पुरुषांतरवासिन || (२५-६९)

भावार्थ: वृद्धायु-नियंत्रक (३९४), बुद्धि (३९५), जगद्योनि-गर्भ-जग-प्रसवन (जग को अपने गर्भ से उत्पन्न करने वाली जगद्योनि) (३९६), जगतांत (३९७), जनित्री (३९८), बुद्धिमती (३९९), पुरुषांतरवासिन (प्रभु के अंतर में वास करने वाली) (४००)|

तपस्विनी समाधिस्था त्रिनेत्रा स्थित-स्वर्ण माँ-मन |
सम्पूर्ण-इन्द्रिय-नियंत्रक स्थित-हिय-सर्व-भूजन || (२५-७०)

भावार्थ: तपस्विनी (४०१), समाधिस्था (४०२), त्रिनेत्रा (४०३), स्थित-स्वर्ण (४०४), माँ-मन (४०५), सम्पूर्ण-इन्द्रिय-नियंत्रक (४०६), स्थित-हिय-सर्व-भूजन (४०७)|

जग-तारिणी विद्या मनोलया वृहती ब्रह्मवादिन |
ब्रह्माणी ब्रह्मभूता कालिका-रूपी-भयावन || (२५-७१)

भावार्थ: जग-तारिणी (४०८), विद्या (४०९), मनोलया (आत्म-विकास करने वाली देवी) (४१०), वृहती (महान) (४११), ब्रह्मवादिन (४१२), ब्रह्माणी (४१३), ब्रह्मभूता (४१४), कालिका-रूपी-भयावन (४१५)|

हिरण्यमयी महारात्रि जग-परिवर्तक सुमालिन |
भव-सागर-तारिणी प्रभा सुरूपा-अति-शोभन || (२५-७२)

भावार्थ: हिरण्यमयी (४१६), महारात्रि (४१७), जग-परिवर्तक (४१८), सुमालिन (४१९), भव-सागर-तारिणी (४२०), प्रभा (४२१), सुरूपा-अति-शोभन (४२२)|

सर्वसहा सर्व-द्दश्य-साक्षिणी तपिनी दुःख-उन्मूलन |
तापिनी विश्व-रूपा देवी-भोगदा धरा-धारिन || (२५-७३)

भावार्थ: सर्वसहा (सर्व साक्षी) (४२३), सर्व-द्दश्य-साक्षिणी (४२४), तपिनी (४२५), दुःख-उन्मूलन (४२६), तापिनी (४२७), विश्व-रूपा (४२८), देवी-भोगदा (४२९), धरा-धारिन (४३०)|

सुसौम्या चन्द्रवंदना शुद्धि तांडव-नृत्य-आसक्तन |
सत्त्वशुद्धकारिणी जग-त्रि-पीड़ा-विनाश-कारिन || (२५-७४)

भावार्थ: सुसौम्या (४३१), चन्द्रवंदना (४३२), शुद्धि (४३३), तांडव-नृत्य-आसक्तन (४३४), सत्त्वशुद्धकारिणी (सत्यवादी एवं सब को शुद्ध करने वाली) (४३५), जग-त्रि-पीड़ा-विनाश-कारिन (संसार की तीन पीड़ाएं, अधिभौतिक, अधिदैविक, अधिदैहिक का विनाश करने वाली) (४३६)|

अमृताश्रया जगत-मूर्ति त्रिमूर्ति जगत्प्रियन |
निराश्रया निराहारा निरंकुश-रणोद्भवन || (२५-७५)

भावार्थ: अमृताश्रया (४३७), जगत-मूर्ति (४३८), त्रिमूर्ति (४३९), जगत्प्रियन (४४०), निराश्रया (४४१), निराहारा (४४२), निरंकुश-रणोद्भवन (रण क्षेत्र में निरंकुश) (४४३) |

चक्रहस्ता विचित्रांगी स्त्रिग्वणी पद्म-धारिन |
परा-ज्ञानी-पर-विधान पूर्वज-सर्व-पुरुष-महन || (२५-७६)

भावार्थ: चक्रहस्ता (४४४), विचित्रांगी (४४५), स्त्रिग्वणी (संस्कृत काव्य) (४४६), पद्म-धारिन (४४७), परा-ज्ञानी-पर-विधान (४४८), पूर्वज-सर्व-पुरुष-महन (सब महान पुरुषों की पूर्वज) (४४९)|

विश्वेश्वर-प्रिया विद्यामयी अविद्या विद्युत्-सम-रसन |
श्रम-रहिता सुता-धारी-सहस्त्र-कर्ण सहस्त्र-नयन || (२५-७७)

भावार्थ: विश्वेश्वर-प्रिया (४५०), विद्यामयी (४५१), अविद्या (अज्ञान की ज्ञाता) (४५२), विद्युत्-सम-रसन (विद्युत् समान जिह्वा) (४५३), श्रम-रहिता (४५४), सुता-धारी-सहस्त्र-कर्ण (विराट पुरुष जिनके सहस्त्र कर्ण हैं, उनकी पुत्री) (४५५), सहस्त्र-नयन (४५६) |

समान-सहस्त्र-रश्मि पद्मस्था महेश्वरपदाश्रयन |
सद्मना व्याप्ता तैजसी पद्मरोधिका ज्वालिन || (२५-७८)

भावार्थ: समान-सहस्त्र-रश्मि (४५७), पद्मस्था (४५८), महेश्वरपदाश्रयन (४५९), सद्मना (कल्याणकारी चित्त वाली) (४६०), व्याप्ता (४६१) तैजसी (४६२), पद्मरोधिका (४६३), ज्वालिन (४६४)|

महादेवाश्रया देवी-मान्या महादेवमनोरम-मन |
व्योमलक्ष्मी सिंहरथा अमितप्रभा-प्रमत-चेकितन || (२५-७९)

भावार्थ: महादेवाश्रया (४६५), देवी-मान्या (४६६), महादेवमनोरम-मन (महादेव के मन की प्रसन्नता) (४६७), व्योमलक्ष्मी (स्वर्ग की श्री) (४६८), सिंहरथा (सिंह रथ पर सवार) (४६९), अमितप्रभा-प्रमत-चेकितन (अति बुद्धिमान प्रभाशाली) (४७०)|

आरूढ़-विमान नलिनी शोक-नाशिनी विश्व-स्वामिन |
विशोका पद्म-वासिनी देवी-कुण्डलिनी-अभिषेचन || (२५-८०)

भावार्थ: आरूढ़-विमान (पुष्पक विमान पर आरूढ़) (४७१), नलिनी (४७२), शोक-नाशिनी (४७३), विश्व-स्वामिन (४७४), विशोका (४७५), पद्म-वासिनी (४७६), देवी-कुण्डलिनी-अभिषेचन (कुण्डलिनी जाग्रत करने वाली देवी) (४७७)|

अनाहिता शतानंदा वाग्देवता कीर्ति-सत-भूजन |
ब्रह्मकला कलातीता कलावती स्थित-आशय-जन || (२५-८१)

भावार्थ: अनाहिता (मित्र) (४७८), शतानंदा (४७९), वाग्देवता (वाणी की देवी) (४८०), कीर्ति-सत-भूजन (सत्पुरुषों की कीर्ति) (४८१), ब्रह्मकला (४८२), कलातीता (चित्त स्वरूपा) (४८३), कलावती (कला पूर्ण) (४८४), स्थित-आशय-जन (प्राणियों के मनोभाव में स्थित) (४८५)|

ब्रह्मऋषि ब्रह्महृदया ब्रह्मा शिव-प्रिय नारायन |
व्योमशक्ति क्रियाशक्ति जनशक्ति परम-गति-दायन || (२५-८२)

भावार्थ: ब्रह्मऋषि (४८६), ब्रह्महृदया (४८७), ब्रह्मा (४८८), शिव-प्रिय (४८९), नारायन/ नारायण (४९०), व्योमशक्ति (४९१), क्रियाशक्ति (४९२), जनशक्ति (४९३), परम-गति-दायन (४९४)|

क्षोभिका रौद्रिका भेद्या रहित-भेद-अभेद अभिन्न |
पूजित-भिन्न-संस्थाना कुल-वंशिनी वंश-हारिन् || (२५-८३)

भावार्थ: क्षोभिका (हलचल मचाने वाली) (४९५), रौद्रिका (रौद्र रूप) (४९६), भेद्या (दृश्यरतिक) (४९७), रहित-भेद-अभेद (४९८), अभिन्न (४९९), पूजित-भिन्न-संस्थाना (५००), कुल-वंशिनी (५०१), वंश-हारिन् (वंश को बढ़ाने वाली) (५०२)|

गुह्यशक्ति गुणातीता सर्वदा सर्वतोमुखन |
शिव-भगिनी भगवत्पत्नी सकला देवी-काल-कारिन || (२५-८४)

भावार्थ: गुह्यशक्ति (५०३), गुणातीता (५०४), सर्वदा (५०५), सर्वतोमुखन (५०६), शिव-भगिनी (५०७), भगवत्पत्नी (५०८), सकला (५०९), देवी-काल-कारिन (प्रलय की देवी) (५१०)|

सर्वज्ञ सर्व-मंगल गुहाबलि प्रक्रिया गुह्य-वेत्तन |
योगमाता गंधा विश्वेश्वरेश्वरी-पूजित-भूजन || (२५-८५)

भावार्थ: सर्वज्ञ (५११), सर्व-मंगल (५१२), गुहाबलि (एकांत गुफा में रहने वाली) (५१३), प्रक्रिया (योग क्रिया) (५१४), गुह्य-वेत्तन (गुप्त ज्ञान ज्ञाता) (५१५), योगमाता (५१६) गंधा (सुगन्धित) (५१७), विश्वेश्वरेश्वरी-पूजित-भूजन (प्राणियों से पूजित विश्व की स्वामिन) (५१८)|

कपिला कपिलाकान्ता कनकाभा भोक्त्री पुण्यन |
कलान्तरा पुरंदर-पुरस्सरा पुष्करिणी-वार्ययन || (२५-८६)

भावार्थ: कपिला (इच्छा पूर्ण करने वाली गौमाता) (५१९), कपिलाकान्ता (कपिला गौमाता समान कांति वाली) (५२०), कनकाभा (स्वर्ण समान आभा) (५२१), भोक्त्री (आनंदित) (५२२), पुण्यन (पवित्र) (५२३), कलान्तरा (समय अंतराल) (५२४), पुरंदर-पुरस्सरा (सर्वेंद्र (५२५)), पुष्करिणी-वार्ययन (पुष्करिणी सरोवर) (५२६)|

पोषणी परम-ऐश्वर्य-भूतिदा विभूति-विभूषन |
सर्वोच्च-परमात्म-विग्रहा देवी-पञ्च-ब्रह्म-उत्पन्न || (२५-८७)

भावार्थ: पोषणी (पालनहारी) (५२७), परम-ऐश्वर्य-भूतिदा (परम ऐश्वर्य देने वाली) (५२८), विभूति-विभूषन/ विभूषण (५२९), सर्वोच्च-परमात्म-विग्रहा (सर्वोच्च परमात्म-तत्व) (५३०), देवी-पञ्च-ब्रह्म-उत्पन्न (५३१)|

सम-उमा-लक्ष्मी-नर्मोदया भानुमति योगि-ज्ञेयन |
श्री-मनोजवा वाणी-वशिनी देवी-योग-निरूपन || (२५-८८)

भावार्थ: सम-उमा-लक्ष्मी-नर्मोदया (५३२), भानुमति (सूर्य समान) (५३३), योगि-ज्ञेयन (योग से जानी जाने वाली) (५३४), श्री-मनोजवा (विष्णु पत्नी श्री) (५३५), वाणी-वशिनी (वाणी की देवी) (५३६), देवी-योग-निरूपन (योग मूर्ति देवी) (५३७)|

सुमंत्रा मंत्रिणी पूर्णा आनंद-दायिनी-ह्लादिन |
मनोहारी मनोरक्षी तापसी वेद-रूपा क्लेशनाशिन || (२५-८९)

भावार्थ: सुमंत्रा (मन्त्र ज्ञाता) (५३८), मंत्रिणी (५३९), पूर्णा (५४०), आनंद-दायिनी-ह्लादिन (५४१), मनोहारी (५४२), मनोरक्षी (मन-नियंत्रक) (५४३), तापसी (५४४), वेद-रूपा (५४५), क्लेशनाशिन (५४६)|

वेद-शक्ति वेद-माता माला कर्ता-वेद-विद्या-उज्जवन |
योगेश्वर-ईश्वरी महाशक्ति मनोमयी-नियंत्रक-मन || (२५-९०)

भावार्थ: वेद-शक्ति (५४७), वेद-माता (५४८), माला (५४९), कर्ता-वेद-विद्या-उज्जवन (५५०), योगेश्वर-ईश्वरी (५५१), महाशक्ति (५५२), मनोमयी-नियंत्रक-मन (५५३)|

विश्वास्था विद्युन्माला विहायसी वीरमुक्ति-दायन |
तरुण-पीवरी सुगन्धित-सुरभि वन्द्या-देव-प्ररोचन || (२५-९१)

भावार्थ: विश्वास्था (विश्व की आस्था) (५५४), विद्युन्माला (विद्युत् समूह) (५५५), विहायसी (मधुर मुस्कान वाली) (५५६), वीरमुक्ति -दायन (वीरों को मुक्ति देने वाली)

(५५७), तरुण-पीवरी (५५८), सुगन्धित-सुरभि (५५९), वन्द्या-देव-प्ररोचन (देवताओं से अर्चित वन्द्या) (५६०)|

नंदिनी नंदवल्लभा परमानंदा पर-अपर-भेद-वेदन |
भारती काम्या कामेश्वर-ईश्वरी सर्व-काल-इदन्तन || (२५-९२)

भावार्थ: नंदिनी (प्रसन्नता देने वाली) (५६१), नंदवल्लभा (सच्चिदानंद की प्रियतम) (५६२), परमानंदा (५६३), पर-अपर-भेद-वेदन (पर-अपर भेद ज्ञाता) (५६४), भारती (वाणी देवी) (५६५), काम्या (आकर्षित) (५६६), कामेश्वर-ईश्वरी (५६७), सर्व-काल-इदन्तन (सदैव विद्यमान) (५६८)|

अचिन्त्या अचिन्त्य-महिमा दुर्लेखा युक्त-रत्न-धन |
कनकप्रभा कूष्माण्डी सुगंधा दिव्य-गंध-परिगमन || (२५-९३)

भावार्थ: अचिन्त्या (जानने में असंभव) (५६९), अचिन्त्य-महिमा (अकल्पनीय महिमा) (५७०), दुर्लेखा (उद्धारक) (५७१), युक्त-रत्न-धन (५७२), कनकप्रभा (स्वर्ण समान आभा) (५७३), कूष्माण्डी (कद्दू मिष्टान) (५७४), सुगंधा (५७५), दिव्य-गंध-परिगमन (दिव्य गंध प्रसारक) (५७६)|

त्रिविक्रम-पद-उत्पत्ति धनुष्पाणि सुदुर्लभा-भूजन |
शिरोहया धनाध्यक्षा धात्री-धन्या पिंगल-लोचन || (२५-९४)

भावार्थ: त्रिविक्रम-पद-उत्पत्ति (भगवान् वामन के पद से उत्पन्न) (५७७), धनुष्पाणि (धनुष धारिणी) (५७८), सुदुर्लभा-भूजन (प्राणियों को दुर्लभ (५७९)), शिरोहया (लज्जाशील) (५८०), धनाध्यक्षा (५८१), धात्री-धन्या (माता धन्या) (५८२), पिंगल-लोचन (पीत नेत्र) (५८३)|

भ्रान्ति प्रभावती दीप्ति आद्या पंकजायत-लोचन |
उत्पन्न-हृदय-कमल सृष्टि-परम-परामाता प्रिय-रन || (२५-९५)

भावार्थः भ्रान्ति (माया जनक) (५८४) , प्रभावती (५८५), दीप्ति (५८६), आद्या (आदि देवी) (५८७), पंकजायत-लोचन (कमल समान नेत्र) (५८८) उत्पन्न-हृदय-कमल (५८९) सृष्टि-परम-परामाता (५९०), प्रिय-रन (युद्ध प्रेमी) (५९१)|

सत्क्रिया गिरिजा नित्यशुद्धा दुर्गा पुष्प-अविघ्न |
कात्यानी चंडी शान्ति-विग्रहा चर्चिका-अघ-छेदन || (२५-९६)

भावार्थः सत्क्रिया (सत-कर्म करने वाली) (५९२), गिरिजा (५९३), नित्यशुद्धा (५९४), दुर्गा (५९५), पुष्प-अविघ्न (सदैव पुष्प रूपी) (५९६), कात्यानी (५९७), चंडी (५९८), शान्ति-विग्रहा (शान्ति रूप) (५९९), चर्चिका-अघ-छेदन (पाप विनाशिनी चर्चिका) (६००) |

रजनी जग-मन्त्र-प्रवर्तिका शारदा हिरण्यवर्न |
मंदर-गिरि-निवासिनी कंठ-शोभित-स्वर्ण-मालिन || (२५-९७)

भावार्थः रजनी (कृष्ण वर्ण) (६०१), जग-मन्त्र-प्रवर्तिका (विश्व दिव्य मंत्रदाता) (६०२), शारदा (विद्या देवी)(६०३), हिरण्यवर्न (हिरण के सामान वर्ण) (६०४), मंदर-गिरि-निवासिनी (६०५), कंठ-शोभित-स्वर्ण-मालिन (६०६)|

रत्नमाला अमूल्य-रत्नगर्भा विश्व-प्रमाथिनी भुवन |
नित्यतुष्टा अमृतोद्भवा पद्मनिभा आरूढ़-पद्मासन || (२५-९८)

भावार्थः रत्नमाला (६०७), अमूल्य-रत्नगर्भा (अमूल्य रत्नों की उत्पत्ति करता) (६०८), विश्व-प्रमाथिनी (विश्व जननी) (६०९), भुवन (पृथ्वी) (६१०), नित्यतुष्टा (६११), अमृतोद्भवा (अमृत जननी) (६१२), पद्मनिभा (लक्ष्मी) (६१३), आरूढ़-पद्मासन (६१४)|

धुन्वती दुष्प्रकंपा महेंद्र-भगिनी माता-द्युवन् |
दृषद्वती माया वरेण्या वरदर्पिता-युक्त-सगुणन ||(२५-९९)

भावार्थ: धुन्वती (संकल्प की दृढ़ देवी) (६१५), दुष्प्रकंपा (दुष्टों को कम्पन देने वाली) (६१६), महेंद्र-भगिनी (इंद्र की बहन) (६१७), माता-ध्रुवन् (सूर्यदेव की माता अदिति) (६१८), दृषद्वती (सूर्य का प्रकाश) (६१९), माया (६२०), वरेण्या (परम देवी) (६२१), वरदर्पिता-युक्त-सगुणन (सगुणों से युक्त यशस्विनी) (६२२)|

कल्याणी कमला रामा देवी-रूप-पञ्च-भूत-वरन |
वाच्या वरेश्वरी नंद्या दुर्जया दुरतिक्रमा-अखिन्न || (२५-१००)

भावार्थ: कल्याणी (६२३), कमला (६२४), रामा (६२५), देवी-रूप-पञ्च-भूत-वरन (पांच भूत - वायु, आकाश, जल, अग्नि और पृथ्वी, रूपी देवी) (६२६), वाच्या (वाक देवी) (६२७), वरेश्वरी (वर देने वाली देवी) (६२८), नंद्या (इच्छा पूर्ण करने वाली नंदिनी गौमाता) (६२९) दुर्जया (अजेय) (६३०), दुरतिक्रमा-अखिन्न (कभी न थकने वाली देवी) (६३१)|

कालरात्रि महावेगा हितकारी-प्रिय-वीरभद्र-भगवन |
भद्रकाली देवी-भक्त-आनंद-दायक जननी-भुवन || (२५-१०१)

भावार्थ: कालरात्रि (६३२), महावेगा (६३३), हितकारी-प्रिय-वीरभद्र-भगवन (६३४), भद्रकाली (६३५), देवी-भक्त-आनंद-दायक (६३६), जननी-भुवन (६३७)|

कराला पिंगलाकारा नामवेदा महनदा तपस्विन |
यशोदा परिदान-परिवर्तन-यथाध्वपरिवर्तिन || (२५-१०२)

भावार्थ: कराला (भयंकर) (६३८), पिंगलाकारा (गेहुआं वर्ण) (६३९), नामवेदा (वेदों से सम्मानित) (६४०), महनदा (दिव्य नदी) (६४१), तपस्विन (६४२), यशोदा (६४३), परिदान-परिवर्तन-यथाध्वपरिवर्तिन (परिवर्तन लाने वाली देवी यथाध्वपरिवर्तिन) (६४४)|

शंखिनी पद्मिनी सांख्या सांख्ययोग-कर्ता-उपायन |
चैत्री संवत्सरा रुद्रा इन्द्रजा जगत-सम्पूरन || (२५-१०३)

भावार्थ: शंखिनी (दिव्य श्रख समान स्वर) (६४५), पद्मिनी (कमल समान सुन्दर) (६४६), सांख्या (सांख्ययोगी) (६४७), सांख्ययोग-कर्ता-उपायन (सांख्ययोग को प्रारम्भ करने वाली सांख्या) (६४८), चैत्री (वर्ष का प्रथम मास) (६४९), संवत्सरा (वर्ष) (६५०), रुद्रा (रूद्र भगवान् की संगिनी) (६५१), इन्द्रजा (इंद्र से उत्पन्न) (६५२), जगत-सम्पूरन (सम्पूर्ण जगत) (६५३)|

शुम्भारि कम्बुग्रीवा खेचरी-निवासिनी-गगन |
कलिप्रिय खरध्वजा खरारूढ़ा पराध्या परमालिन || (२५-१०४)

भावार्थ: शुम्भारि (शुम्भ असुर वध कर्ता) (६५४), खेचरी-निवासिनी-गगन (आकाश निवासिनी) (६५५), कम्बुग्रीवा (शंख सक़मान कंठ) (६५६), कलिप्रिय (युद्ध प्रेमी) (६५७), खरध्वजा (खर का ध्वज धारण करने वाली) (६५८), खरारूढ़ा (खर पर आरूढ़) (६५९), पराध्या (स्वतंत्र) (६६०), परमालिन (पवित्र) (६६१)|

ऐश्वर्य-रत्न-निधि देवी-विरक्त आरूढ़-गरुड़ासन |
जयन्ती हृद्गुहा रम्या सत्त्ववेगा सर्व-गण-महन || (२५-१०५)

भावार्थ: ऐश्वर्य-रत्न-निधि (६६२), देवी-विरक्त (६६३), आरूढ़-गरुड़ासन (६६४), जयन्ती (६६५), हृद्गुहा (भक्तों के गुहा स्वरुप हृदय में समाहित) (६६६), रम्या (६६७), सत्त्ववेगा (सत्य की संगिनी) (६६८), सर्व-गण-महन (सर्व कृतियों में श्रेष्ठ) (६६९)|

संकल्पसिद्धा स्थित-सदा-साम्य प्रमत-विज्ञान-वेदन |
कलिकल्मषहन्त्री गुह्य-उपनिषद्-रूपिणी अतिशयिन् || (२५-१०६)

भावार्थ: संकल्पसिद्धा (६७०), स्थित-सदा-साम्य (सदा सम अवस्था में स्थित (६७१)), प्रमत-विज्ञान-वेदन (विज्ञान ज्ञान प्रमत) (६७२), कलिकल्मषहन्त्री (पाप विनाशिनी) (६७३), गुह्य-उपनिषद्-रूपिणी (गुप्त उपनिषद रूपिणी) (६७४),अतिशयिन् (उत्तम) (६७५)|

नित्यदृष्टि व्याप्ति स्मृति क्रियावती-कर्ता-कर्मन् |
पुष्टि तुष्टि विश्वा ईश्वरी-अमरत्व-प्राप्त-सुर-पावन ||
भुक्ति मुक्ति शिवा-रूपिणी अमृत-शाश्वत-वर्पन् || (२५-१०७)

भावार्थ: नित्यदृष्टि (अंतर्दृष्टि देवी) (६७६), व्याप्ति (सर्व व्यापक) (६७७), स्मृति (६७८), क्रियावती-कर्ता-कर्मन् (कर्म कर्ता क्रियावती) (६७९), पुष्टि (बलशाली) (६८०), तुष्टि (सदैव संतुष्ट) (६८१), विश्वा (विश्व मूर्ति) (६८२), ईश्वरी-अमरत्व-प्राप्त-सुर-पावन (पवित्र अमरत्व प्राप्त देवताओं की स्वामिन) (६८३), भुक्ति (जग आनंद भोक्त्री) (६८४), मुक्ति (निर्वाण दात्री) (६८५), शिवा-रूपिणी (६८६), अमृत-शाश्वत-वर्पन् (पुण्यवत अमृत रूपिणी) (६८७)|

लोहिता सर्वमाता भीषणा अनन्तशयना वनमालिन |
आदि-अंत-हीन-अनाद्या   हेतु-उद्भव-नर-नारायन || (२५-१०८)

भावार्थ: लोहिता (मंगल गृह समान लाल वर्ण) (६८८), सर्वमाता (६८९), भीषणा (भयंकर) (६९०), अनन्तशयना (योगनिद्रा) (६९१), वनमालिन (वनमाली अर्थात भगवान् की संगिनी) (६९२), आदि-अंत-हीन-अनाद्या (६९३), हेतु-उद्भव-नर-नारायन/ नारायण (६९४)|

नृसिंही दैत्यमन्थिनी अम्बिका शंख-चक्र-गदा-धारिन |
जननी-बाहुबली-संकर्षणसमुत्पत्ति   पातसंश्रयन || (२५-१०९)

भावार्थ: नृसिंही (नृसिंह अवतार की शक्ति) (६९५), दैत्यमन्थिनी (असुर मर्दिनी) (६९६), अम्बिका (६९७), शंख-चक्र-गदा-धारिन (६९८), जननी-बाहुबली-संकर्षणसमुत्पत्ति (अत्यंत बलशाली संकर्षण की जननी) (६९९), पातसंश्रयन (भक्तों के समीप रहने वाली) (७००)|

महाज्वाला   महामूर्ति   सुमुर्ति   वर-प्रदायिन |
सुप्रभा-रम्य-गौरी धर्म-काम-अर्थ-मोक्ष दायिन || (२५-११०)

भावार्थ: महाज्वाला (७०१), महामूर्ति (७०२), सुमुर्ति (७०३), वर-प्रदायिन (७०४), सुप्रभा-रम्य-गौरी (उज्जवलित आनंदमयी गौरी) (७०५), धर्म-काम-अर्थ-मोक्ष दायिन (७०६)|

स्थित-मध्य-भृकुटि-अपूर्वा प्रथम-नारि-पत्नी-भगवन |
बली महाविभूति-दात्री मध्या आसना-कमलनयन || (२५-१११)

भावार्थ: स्थित-मध्य-भृकुटि-अपूर्वा (७०७), प्रथम-नारि-पत्नी-भगवन (७०८), बली (७०९), महाविभूति-दात्री (७१०), मध्या (सम दृष्टि देवी) (७११), आसना-कमलनयन (कमल-नेत्र समान योग आसन में बैठी हुई) (७१२)|

अष्टादशभुजाधारी कान्ति-सम-नील-वनशोभन |
नाट्या सर्व-शक्ति समारूढ़ा धर्म-अधर्म-विपुन || (२५-११२)

भावार्थ: अष्टादशभुजाधारी (१८ भुजा वाली) (७१३), कान्ति-सम-नील-वनशोभन (नील कमल के समान कान्ति) (७१४), नाट्या (नाट्य निपुण) (७१५), सर्व-शक्ति, समारूढ़ा (समभाव) (७१६), धर्म-अधर्म-विपुन (धर्म-अधर्म से परे) (७१७)|

निरत-ज्ञान-वैराग्य निरन्द्रिया विचित्रगहन |
निरालोका धीरा साकेत-शाश्वत-धाम-निवासिन || (२५-११३)

भावार्थ: निरत-ज्ञान-वैराग्य (७१८), निरन्द्रिया (इन्द्रियों से अप्रभावित) (७१९), विचित्रगहन (विचित्र आभूषण धारी) (७२०), निरालोका (अदृष्या) (७२१), धीरा (धैर्य वाली) (७२२), साकेत-शाश्वत-धाम-निवासिन (शाश्वत साकेत धाम वासी) (७२३)|

स्थानेश्वरी निरानंदा श्रेष्ठ-त्रिशूल-धारी-पावन |
सम्पूर्ण-सुर-मूर्ति देव-स्वरूपा पर-देव-निरूपन || (२५-११४)

भावार्थ: स्थानेश्वरी (सृष्टि स्वामिनी) (७२४), निरानंदा (सदैव आनंद में मग्न) (७२५), श्रेष्ठ-त्रिशूल-धारी-पावन (७२६), सम्पूर्ण-सुर-मूर्ति (७२७), देव-स्वरूपा (७२८), पर-देव-निरूपन/ निरूपण (७२९)|

गणात्मिका सुता-पर्वतराज निशुम्भ-हन्ता अवर्णन |
वर्ण-रहिता बीज-सम्भवा देवी-निर्वाण-दायिन || (२५-११५)

भावार्थ: गणात्मिका (भक्तों की आत्मा) (७३०), सुता-पर्वतराज (७३१), निशुम्भ-हन्ता (निशुम्भ असुर की मारक) (७३२), अवर्णन (अवर्णित) (७३३) वर्ण-रहिता (सम-द्रष्टा) (७३४), बीज-सम्भवा (नव जीवन हेतु बीज) (७३५), देवी-निर्वाण-दायिन (मोक्ष देने वाली देवी) (७३६)|

अनंतवर्णा स्थित-अनन्य शंकरी रक्षक देवी-शांत-मन |
अगोत्रा गोमती गुह्यरूपा गुणान्तरा-विलक्षन || (२५-११६)

भावार्थ: अनंतवर्णा (अनंत रंग युक्त) (७३७), स्थित-अनन्य (सम्पूर्ण स्थिति) (७३८), शंकरी (७३९), रक्षक (७४०), देवी-शांत-मन (७४१), अगोत्रा (वंश-रहित) (७४२), गोमती (७४३), गुह्यरूपा (७४४), गुणान्तरा-विलक्षन/ विलक्षण (विलक्षण गुणों से युक्त) (७४५)|

गौ-श्री गौ-दुग्ध-घृत-प्रिया गौरी गणेश-पूज्यन |
सत्यमात्रा सत्यसंधा त्रिसंध्या संधि-रहित-निरंजन || (२५-११७)

भावार्थ: गौ-श्री (गौ माता) (७४६), गौ-दुग्ध-घृत-प्रिया (७४७), गौरी (७४८), गणेश-पूज्यन (गणेश की पूज्या) (७४९), सत्यमात्रा (निरपेक्ष सत्य) (७५०), सत्यसंधा (सत-मूर्ति) (७५१), त्रिसंध्या (तीनों समय, सुबह, दोपहर, सांय काल पूजित) (७५२), संधि-रहित-निरंजन (निःसंदेह पूर्ण संधि-रहित पवित्र देवी) (७५३)|

सर्व-वादाश्रया अनंता सांख्य-योग-द्वारा-उत्पन्न |
सांख्य-युक्त अप्रमेय शून्या शुद्ध-कुल-जनन || (२५-११८)

भावार्थ: सर्व-वादाश्रया (सर्व दर्शन ज्ञान ज्ञाता) (७५४), अनंता (७५५), सांख्य-योग-द्वारा-उत्पन्न (७५६), सांख्य-युक्त (७५७), अप्रमेय (७५८), शून्या (७५९), शुद्ध-कुल-जनन (शुद्ध कुल में जन्मित) (७६०)|

शंभुवामा कांति-समान-सोम विन्दुनाद-उत्पन्न |
सङ्गवर्जित भेदरहित मनोहरा श्री-मधुसूदन || (२५-११९)

भावार्थ: शंभुवामा (भगवान् के वाम भाग में स्थित) (७६१), कांति-समान-सोम (७६२), विन्दुनाद-उत्पन्न (दिव्य नाद से उत्पन्न) (७६३), सङ्गवर्जित (एकांत पसंद) (७६४), भेदरहित (सम भावा) (७६५), मनोहरा (७६६), श्री-मधुसूदन (मधुसूदन भगवान् की श्री) (७६७)|

महाश्री श्री-उत्पत्ति-केंद्र परे-तम धन-दायिन |
त्रितत्वमाता त्रिविधा-देवी सुसूक्ष्मपद-निवासिन || (२५-१२०)

भावार्थ: महाश्री (धन-धान्य की महा देवी) (७६८), श्री-उत्पत्ति-केंद्र (धन-धान्य का उत्पत्ति केंद्र) (७६९), परे-तम (अंधकार से दूर) (७७०), धन-दायिन (७७१), त्रितत्वमाता (पृथ्वी, जल, आकाश, तीन मुख्य तत्वों की माता) (७७२), त्रिविधा-देवी (तीनों अवस्थाएं - जाग्रत, स्वप्न और सुप्त की देवी) (७७३), सुसूक्ष्मपद-निवासिन (अति सूक्ष्म रूप में वास करने वाली) (७७४)|

शान्त्यातीता मलातीता निर्विकारा निराश्रयन |
उपाधि-शिवाख्या चित्रनिलया शिव-ज्ञान-निरुपन || (२५-१२१)

भावार्थ: शान्त्यातीता (आंतरिक शांत) (७७५), मलातीता (दोषों से रहित) (७७६), निर्विकारा (७७७), निराश्रयन (स्वतंत्र) (७७८), उपाधि-शिवाख्या (शिवा की उपाधि से युक्त) (७७९), चित्रनिलया (बहुविध विश्वरूप) (७८०), शिव-ज्ञान-निरुपन (शिव ज्ञान रूप) (७८१)|

दैत्य-दानव-निर्मात्री काश्यपी कालकर्णिकन |
शास्त्र-जन्म-दात्री क्रियामूर्ति चार-वर्ग-दर्शिन् || (२५-१२२)

भावार्थ: दैत्य-दानव-निर्मात्री (७८२), काश्यपी (दिव्य कश्यप नारि) (७८३), कालकर्णिकन (काल - जन्म, मरण निर्धारक) (७८४), शास्त्र-जन्म-दात्री (७८५),

क्रियामूर्ति (सर्व कार्य करने वाली) (७८६), चार-वर्ग-दर्शिन् (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चार वर्गों को दिखाने वाली) (७८७)|

नवोद्भूता कौमिदी लिंग-धारिणी नारि-नारायन |
कामुकी ललिता तारा पर-अपर-विभूति-दायिन || (२५-१२३)

भावार्थः नवोद्भूता (सदैव नव-रूप) (७८८), कौमिदी (संस्कृत व्याकरण ज्ञान) (७८९), लिंग-धारिणी (प्रकृति माँ) (७९०), नारि-नारायन/ नारायण (लक्ष्मी) (७९१), कामुकी (इच्छा मूर्ति) (७९२), ललिता (अति सुन्दर) (७९३), तारा (७९४), पर-अपर-विभूति-दायिन (लौकिक एवं पारलौकिक ऐश्वर्य दात्री) (७९५)|

महामहिमा वडवा सुभद्रा देवकी वामलोचन |
सीता ज्ञाता-वेद-वेदांग-सम्पूर्ण-ग्रन्थ-सनातन || (२५-१२४)

भावार्थः महामहिमा (७९६), वडवा (वन-अग्नि) (७९७), सुभद्रा (७९८), देवकी (७९९), वामलोचन (क्रोधित नेत्र वाली) (८००), सीता (८०१), ज्ञाता-वेद-वेदांग-सम्पूर्ण-ग्रन्थ-सनातन (८०२)|

मनस्विनी मन्युमाता महाकाली-सम-क्रोधित वदन |
मृत्यु-रहित पुरुहूता पुरुलुपता अमृत-सम-रसन || (२५-१२५)

भावार्थः मनस्विनी (मनु समान बुद्धिमान) (८०३), मन्युमाता (मनु की माता) (८०४), महाकाली-सम-क्रोधित वदन (महाकाली के समान मुख पर क्रोध) (८०५), मृत्यु-रहित (अमर) (८०६), पुरुहूता (देवताओं की ईश्वरी) (८०७), पुरुलुपता (अदृश्यनीय) (८०८), अमृत-सम-रसन (अमृत के समान जिह्वा) (८०९)|

भिन्न-विषय-विचारिणी प्रिया-रजत रुचिकर-स्वर्न |
अशोच्या युक्त-विविध-स्वर्ण-आभूषण-सम्पूर्ण-तन ||
उज्जवलित-समान-रजत युक्त-स्वर्ण-समान-धामन || (२५-१२६)

भावार्थ: भिन्न-विषय-विचारिणी (भिन्न विषयों की ज्ञाता) (८१०), प्रिया-रजत (चांदी प्रिय) (८११), रुचिकर-स्वर्न (स्वर्ण पसंद करने वाली) (८१२), अशोच्या (चिंता-रहित) (८१३), युक्त-विविध-स्वर्ण-आभूषण-सम्पूर्ण-तन (८१४), उज्जवलित-समान-रजत (८१५), युक्त-स्वर्ण-समान-धामन (स्वर्ण के समान आभा से युक्त) ८१६)|

विशेष-वैभव-युक्त महानिद्रा यज्ञ-फल-दायिन |
दुर्ज्ञेया समुद्भव-देवी सत श्रेष्ठ-मध्य-युद्धिवन || (२५-१२७)

भावार्थ: विशेष-वैभव-युक्त (८१७), महानिद्रा (८१८), यज्ञ-फल-दायिन (८१९), दुर्ज्ञेया (समझने में कठिन) (८२०), समुद्भव-देवी (ऊर्जा, शक्ति, पराक्रम, जीवन आदि की देवी) (८२१), सत (सत्या) (८२२), श्रेष्ठ-मध्य-युद्धिवन (योद्धाओं में श्रेष्ठ) (८२३)|

दीर्घिका कुकुद्यमिनी शान्तिदा-शान्ति-वर्धिन |
विद्या श्री-शक्ति-मूल देवी-शक्ति-चक्र-प्रवर्त्तन || (२५-१२८)

भावार्थ: दीर्घिका (दीर्घ काल तक प्रभाव रखने वाली) (८२४), कुकुद्यमिनी (आकर्षित, प्रसिद्ध, प्रिय, पावन देवी) (८२५), शान्तिदा-शान्ति-वर्धिन (शान्ति बढ़ा अति शान्ति देनी वाली देवी) (८२६), विद्या (८२७), श्री-शक्ति-मूल (लक्ष्मी की शक्ति का केन्द्र) (८२८), देवी-शक्ति-चक्र-प्रवर्त्तन (शक्ति चक्र प्रवर्त्तन करने वाली देवी) (८२९)|

त्रिशक्तिजननी जन्या रहित-षड-उर्मि-सम-आचरन |
कर्ता-कर्म स्वाहा संहार-रूप-देवी-युगांत-दलन || (२५-१२९)

भावार्थ: त्रिशक्तिजननी (तीन शक्तियां - इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति और कर्मशक्ति की जननी) (८३०), जन्या (सब की माता) (८३१), रहित-षड-उर्मि-सम-आचरण (षड भय से रहित देवी - जन्मने का भय, जीविका अर्जित करने का भय, भ्रमित होने का भय, विकास का भय, क्षय होने का भय और मृत्यु भय) (८३२), कर्ता-कर्म (८३३),

स्वाहा (अग्नि देव समान) (८३४), संहार-रूप-देवी-युगांत-दलन (युग का अंत करने वाली संहार रूप) (८३५)|

जगजननी विषम-लिंग-काम-वृद्धिन कर्ता-सङ्कर्षन |
शीश-स्वर्ण-मुकुट-धारिणी वैष्णवी-नारि-नारायन ||
सुर-ऐन्द्रीशक्ति परमेश्वरी नमस्कृत-त्रिभुवन || (२५-१३०)

भावार्थ: जगजननी (८३६), विषम-लिंग-काम-वृद्धिन (रति देवी) (८३७), कर्ता-सङ्कर्षन (आकर्षित करने वाली) (८३८), शीश-स्वर्ण-मुकुट-धारिणी (८३९), वैष्णवी-नारि-नारायण (८४०),सुर-ऐन्द्रीशक्ति (देवताओं की इन्द्रियों का बल (८४१), परमेश्वरी (८४२), नमस्कृत-त्रिभुवन (८४३)|

प्रद्युम्न-प्रिया दान्ता युक्त-युग्म-दृष्टि त्रिलोचन |
महोउत्कटा प्रचंडा सम-चण्ड-विक्रमा हंसगामिन || (२५-१३१)

भावार्थ: प्रद्युम्न-प्रिया (प्राणियों को रति-कृति प्रदान करने वाली) (८४४), दान्ता (दया और आशीष की देवी) (८४५), युक्त-युग्म-दृष्टि (पुरुष और नारी, दोनों को समान दृष्टि से देखने वाली) (८४६), त्रिलोचन (८४७), महोउत्कटा (भक्तों की इच्छा पूर्ण करने वाली देवी) (८४८), प्रचंडा (८४९), सम-चण्ड-विक्रमा (८५०), हंसगामिन (हंस की गति से चलने वाली) (८५१)|

वृषावेशा विंध्य-पर्वत-वासिनी आकार-सम-गगन |
हिमालय-निलया मेरु-पर्वत-स्थित कैलाश-वासिन || (२५-१३२)

भावार्थ: वृषावेशा (वृष समान शक्ति) (८५२), विंध्य-पर्वत-वासिनी (८५३), आकार-सम-गगन (८५४), हिमालय-निलया (८५५), मेरु-पर्वत-स्थित (८५६), कैलाश-वासिन (८५७)|

चाणूर-मारक काम-रूपिणी तनया-नीति-निपुन |
वेदविद्या-व्रतरता धर्मशीला ग्रहणा-अग्नि-भोजन || (२५-१३३)

भावार्थ: चाणूर-मारक (८५८), काम-रूपिणी (८५९), तनया-नीति-निपुन (नीति में निपुण तरुणा) (८६०), वेदविद्या-व्रतरता (वेद विद्या पढ़ने में रत) (८६१), धर्मशीला (८६२), ग्रहणा-अग्नि-भोजन (८६३)|

अयोध्या-वासिनी महा-काल-जननी वीर-युद्धिवन |
विद्याधर-क्रिया सिद्धा निर्गुण-विद्याधर-निरूपन || (२५-१३४)

भावार्थ: अयोध्या-वासिनी (८६४), महा-काल-जननी (८६५), वीर-युद्धिवन (८६६), विद्याधर-क्रिया (विद्याधर दैव्य देव सामान कार्य करने वाली) (८६७), सिद्धा (८६८), निर्गुण-विद्याधर-निरूपन (निर्गुण विद्याधर दैव्य देव समान रूपिणी) (८६९)|

संतुष्टि-दायिनी वहन्ती सम-खिला-चावल-पावन |
भूजन-पोषणी मातृका कामदेव-जननी-दिव्यन ||
जल-उत्पन्ना-देवी-लक्ष्मी-निरूपण प्रिया-वाहन || (२५-१३५)

भावार्थ: संतुष्टि-दायिनी (८७०), वहन्ती (सहिष्णु) (८७१), सम-खिला-चावल-पावन (खिले चावल के समान पवित्र) (८७२), भूजन-पोषणी (८७३), मातृका (दिव्य माँ) (८७४), कामदेव-जननी-दिव्यन (कामदेव की दिव्य जननी) (८७५), जल-उत्पन्ना-देवी-लक्ष्मी-निरूपण (जल से उत्पन्न लक्ष्मी देवी रूपिणी) (८७६), प्रिया-वाहन (८७७)|

करीषिणी स्वधा वाणी सेविता तत्पर-वीणा-वाद्यन |
सेविका सेवा वैदिक-देवी गरुत्मती-प्रमत-गहन ||(२५-१३६)

भावार्थ: करीषिणी (अग्नि प्रज्ज्वलित कर्ता) (८७८), स्वधा (यज्ञ प्रसाद) (८७९), वाणी (८८०), सेविता (सुर और प्राणियों द्वारा सेवित) (८८१), तत्पर-वीणा-वाद्यन (वीणा वाद्य को तत्पर) (८८२), सेविका (सब की सेविका अर्थात इच्छापूर्ण करने वाली देवी) (८८३), सेवा (सेवा करने का उदाहरण) (८८४), वैदिक-देवी (८८५), गरुत्मती-प्रमत-गहन (गहन बुद्धिमान गरुत्मती) (८८६)|

अरुंधती हिरण्याक्षी मणिदा श्री-वसु-दायिन |
वसुमती वसोर्धारा विभिन्न-वसु-जननी भुवन || (२५-१३७)

भावार्थ: अरुंधती (८८७), हिरण्याक्षी (हिरण के समान नेत्र (८८८), मणिदा (रत्नों की स्वामिनी) (८८९), श्री-वसु-दायिन (धन और मान देने वाली) (८९०), वसुमती (वसु समान) (८९१), वसोर्धारा (जिनमें वसु विचरित करते हैं) (८९२), विभिन्न-वसु-जननी (विभिन्न वसुओं की जननी) (८९३), भुवन (पृथ्वी) (८९४)|

वरारोहा संयोग-विराटपुरुष-प्रकृत्ति-उत्पन्न |
युक्त-श्रेष्ठ-गुण अलंकृत-श्रीफली-अधिकरन ||
श्रीमती-श्रीशा श्रीनिवासा प्रिया-नारायन || (१३८)

भावार्थ: वरारोहा (सुमुखि) (८९५), संयोग-विराटपुरुष-प्रकृत्ति-उत्पन्न (विराटपुरुष और प्रकृति के संयोग से जन्मित) (८९६), युक्त-श्रेष्ठ-गुण (८९७), अलंकृत-श्रीफली-अधिकरन (श्रीफली उपाधि से सुशोभित) (८९८), श्रीमती-श्रीशा (श्रीमती नारायणी) (८९९), श्रीनिवासा (श्री का निवास) (९००), प्रिया-नारायन (नारायण की प्रिया) (९०१)|

श्रीधरी श्रीकरी कंपा अक्षुधित देवी-श्री-धारन |
ईशवीरणी अनंत-दृष्टि धात्रीशा धनद-वृषन् || (२५-१३९)

भावार्थ: श्रीधरी (धन-धारिणी) (९०२), श्रीकरी (धन-दायिनी) (९०३), कंपा (सगुण युक्त) (९०४), अक्षुधित (क्षुधा हीन) (९०५), देवी-श्री-धारन (श्री धारण करने वाली देवी) (९०६), ईशवीरणी (अत्यंत शक्तिशाली देवी) (९०७), अनंत-दृष्टि (अन्तर्यामी) (९०८), धात्रीशा (पोषक) (९०९), धनद-वृषन् (कुबेर की स्वामिन) (९१०)|

महादैत्य-निषूदक सिंह-आरूढ़ सिहं-निरूपन |
सुसेना चंद्र-निलया सुकीर्ति संदेह-रहित-महन || (२५-१४०)

भावार्थ: महादैत्य-निषूदक (महादैत्यों को मारने वाली) (९११), सिंह-आरूढ़ (९१२), सिहं-निरूपन (सिंह रूप) (९१३), सुसेना(सुन्दर/ वीर सेना वाली)(९१४), चंद्र-

निलया (चंद्र-निवासिनी) (११५), सुकीर्ति (११६), संदेह-रहित-महन (संदेह-रहित महान देवी) (११७)|

बलज्ञा बलदा लेलिहाना वामा जिह्वा-अमृत-स्यन्दन |
नित्योदिता स्वयं-ज्योति उत्सुका दाता-अमृत-जीवन || (२५-१४१)

भावार्थ: बलज्ञा (बल की समझ वाली) (११८), बलदा (बल देने वाली) (११९), लेलिहाना (रिपु रक्त युक्त जिह्वा) (१२०), वामा (क्रोधित) (१२१), जिह्वा-अमृत-स्यन्दन (अमृत टपकाने वाली जिह्वा) (१२२), नित्योदिता (शाश्वत) (१२३), स्वयं-ज्योति(१२४), उत्सुका (कल्याण करने को तत्पर) (१२५), दाता-अमृत-जीवन (अमृत/आनंदमय जीवन देने वाली) (१२६)|

वज्रदंष्ट्रा   वज्रजिह्वा   वैदेही   वज्र-समान-तन |
मंगल्या मंगला माला मलहरिणी वर्ण-मलिन || (२५-१४२)

भावार्थ: वज्रदंष्ट्रा (वज्र समान दांत) (१२७), वज्रजिह्वा (वज्र समान जीभ) (१२८), वैदेही (जनक पुत्री) (१२९), वज्र-समान-तन (१३०), मंगल्या(सद्गुण मूर्ति) (१३१), मंगला (कल्याण करने वाली) (१३२), माला (१३३), मलहरिणी (पाप-विनाशिनी) (१३४), वर्ण-मलिन (कृष्ण वर्ण) (१३५)|

गान्धर्वी गारुडी प्रिया-कम्बल-अश्वतर-विशानन |
चांद्री सौदामिनी जनानंदा कुटिल-भृकुटि-आनन || (२५-१४३)

भावार्थ: गान्धर्वी (संगीत देवी) (१३६), गारुडी (गरुड़ पर आरूढ़) (१३७), प्रिया-कम्बल-अश्वतर-विशानन (कंबल पर्वत वासी अश्वतर सर्प सम्राट की प्रिया) (93), चांद्री (चन्द्र समान उज्ज्वलित) (१३९), सौदामिनी (विद्युत् ऊर्जा युक्त) (१४०), जनानंदा (प्राणियों को आनंद देने वाली) (१४१), कुटिल-भृकुटि-आनन (असुरों के लिए कुटिल मुख और भृकुटि वाली) (१४२)|

कर्णिकारका कक्षा युगन्धरा कंस-प्राण-हनन |
युगावर्त्ता हर्ष-वर्धिनी देवी-त्रि-संध्य-निरूपन || (२५-१४४)

भावार्थ: कर्णिकारका (कर्णिकार पौधे के समान वृहत हथेली) (९४३), कक्षा (ब्रह्माण्ड की परिधि) (९४४), युगन्धरा (युग का अंत करने वाली) (९४५), कंस-प्राण-हनन (कंस के प्राण हारने वाली) (९४६), युगावर्त्ता (युग प्रारम्भ करने वाली) (९४७), हर्ष-वर्धिनी (९४८), देवी-त्रि-संध्य-निरूपन (तीनों संध्याएं/ प्रार्थनी की रूपिणी) (९४९)|

प्रत्यक्ष-देवी दिव्यगंधा दिवापरा गता-शक्रासन |
दिव्या शाक्री साध्वी नारी क्रुद्ध-स्थित-शव-आसन || (२५-१४५)

भावार्थ: प्रत्यक्ष-देवी (दिव्य देवी) (९५०), दिव्यगंधा (दिव्य सुगंध युक्त) (९५१), दिवापरा (सूर्य समान प्रकाश देने वाली) (९५२), गता-शक्रासन (इंद्र के आसन पर विराजमान) (९५३), दिव्या (९५४), शाक्री (इंद्र समान शक्ति) (९५५), साध्वी (९५६), नारी (सृष्टि देवी) (९५७), क्रुद्ध-स्थित-शव-आसन (क्रोधित हो शव आसन पर विराजमान) (९५८)|

इष्टा विशिष्टा शिष्टेष्टा शिष्ट-अशिष्ट-नमस्कृतन |
शतरूपा शतावर्त्ता विनीता सुरभि सुरा-महन || (२५-१४६)

भावार्थ: इष्टा (इष्ट देवी) (९५९), विशिष्टा (विशेष देवी) (९६०), शिष्टेष्टा (महात्माओं की देवी) (९६१), शिष्ट-अशिष्ट-नमस्कृतन (शिष्ट और अशिष्ट से पूजित (९६२), शतरूपा (सौ रूपिणी) (९६३), शतावर्त्ता (मूसल समान कठोर) (९६४), विनीता (९६५), सुरभि (इच्छा पूर्ण करने वाले गौ माता सुरभि) (९६६), सुरा-महन (महादेवी) (९६७)|

माता-सुरेंद्र सुद्युम्ना मनोहर सूर्य-लोक-आसन |
सुषुम्ना समीक्षा सत्प्रतिष्ठा निवृत्ति ज्ञान-निपुन || (२५-१४७)

भावार्थ: माता-सुरेंद्र (९६८), सुद्युम्ना (सूर्य समान ज्योति) (९६९), मनोहर (९७०), सूर्य-लोक-आसन (सूर्य लोक में आसन) (९७१), सुषुम्ना (सूर्य का प्रकाश) (९७२), समीक्षा (सब की समालोचना करने वाली) (९७३), सत्प्रतिष्ठा (सम्मानित आसन पर विराजमान) (९७४), निवृत्ति (मोक्ष दायिनी) (९७५), ज्ञान-निपुन (ज्ञान में निपुण) (९७६)|

धर्मशास्त्रार्थकुशला धर्मज्ञा देवी-धर्मवाहन |
धर्म-अधर्म-निर्मात्री शिवप्रदा-धर्मात्मा-जन || (२५-१४८)

भावार्थ: धर्मशास्त्रार्थकुशला (धर्म शास्त्र के अर्थों में निपुण) (९७७), धर्मज्ञा (धर्म ज्ञानी) ९७८), देवी-धर्मवाहन (धर्म पर चलने वाली देवी) (९७९), धर्म-अधर्म-निर्मात्री (९८०), शिवप्रदा-धर्मात्मा-जन (धर्मात्माओं की शुभेच्छु) (९८१)|

धर्मशक्ति धर्ममयी विधर्मा विश्व-धर्मिणी-पावन |
धर्मान्तरा धर्म-मध्या देवी-आदि-धर्म प्रिया-धन || (२५-१४९)

भावार्थ: धर्मशक्ति (दिव्य शक्ति) (९८२), धर्ममयी (दिव्य) (९८३), विधर्मा (विधर्मा-धर्म और अधर्म दोनों की निर्मात्री) (९८४), विश्व-धर्मिणी-पावन (विश्व में धर्म पालन करने वाली पवित्र देवी) (९८५), धर्मान्तरा (धर्म में अंतर न करने वाली, अर्थात समद्रष्टा) (९८६), धर्म-मध्या (धर्म के प्रारम्भ और अंत के मध्य में स्थित) (९८७) देवी-आदि-धर्म (आदि धर्म देवी) (९८८), प्रिया-धन (श्री) (९८९) |

धर्मोपदेशा धर्मात्मा धर्मलभ्या धारिणी-भुवन |
कपाली काल-कलित-मूर्ति शाक्ला-ऋगवेद-निरूपन || (२५-१५०)

भावार्थ: धर्मोपदेशा (९९०), धर्मात्मा (९९१), धर्मलभ्या (धर्म से प्राप्त) (९९२), धारिणी-भुवन (पृथ्वी को धारण करने वाली) (९९३), कपाली (रिपु कपालधारिणी) (९९४) , काल-कलित-मूर्ति (सूक्ष्म दिव्य देवी रूप) (९९५), शाक्ला-ऋगवेद-निरूपन (ऋग्वेद की शाक्ला शाखा रूपी) (९९६)|

पृथक-अन्य-शक्ति सर्वा सर्व-शक्ति-आश्रय-दायिन |
सर्वेश्वरी देवी-सूक्ष्मा धर्मसुसूक्ष्मज्ञानरूपन || (२५-१५१)

भावार्थ: पृथक-अन्य-शक्ति (अन्य शक्तियों से भिन्न) (९९७), सर्वा (परम देवी) (९९८), सर्व-शक्ति-आश्रय-दायिन (सब शक्तियों की आश्रयदाता) (९९९), सर्वेश्वरी (१,०००), देवी-सूक्ष्मा (सूक्ष्म रूप देवी) (१,००१), धर्मसुसूक्ष्मज्ञानरूपन (धर्म के सूक्ष्म ज्ञान की भी ज्ञाता) (१,००२)|

प्रधान-पुरुष-ईशाना अस्तित्व-प्रमाण-महात्मन |
सदाशिवा देव-मूर्ति निराकार गगन-निरूपन ||
हे पुण्या शक्तिशाली करें हम कोटि कोटि नमन || (२५-१५२)

भावार्थ: प्रधान-पुरुष-ईशाना (विराट पुरुष स्वरुप भगवती) (१,००३), अस्तित्व-प्रमाण-महात्मन (महात्माओं के अस्तित्व का प्रमाण) (१,००४), सदाशिवा (सदैव मंगलकारी) (१,००५), देव-मूर्ति (१,००६), निराकार (१,००७), गगन-निरूपन (गगन रूपिणी अर्थात सीमारहित) (१,००८)| हे पुण्या शक्तिशाली, हम कोटि कोटि नमन करते हैं|

कर बद्ध प्रसन्न मन रोमांचित तन श्री रघुनन्दन |
कर स्तुति जानकी किए क्रुद्ध महादेवी प्रसन्न || (२५-१५३)

भावार्थ: कर बद्ध, प्रसन्न मन और रोमांचित तन से श्री रघुनन्दन ने जानकी की स्तुति कर क्रुद्ध महादेवी को प्रसन्न किया|

सुनो हे सुभग ब्राह्मण भारद्वाज मुनि श्रेष्ठ पावन |
करे जो पठन पाठन यह सहस्त्रनाम पाए निर्मोचन || (२५-१५४)

भावार्थ: हे सौभाग्यशाली पवित्र श्रेष्ठ मुनि ब्राह्मण भारद्वाज सुनो| जो भी इस सहस्त्रनाम का पठन पाठन करता है, उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है|

पाए गति शाश्वत ब्रह्म वैश्य क्षत्रिय और ब्राह्मन |
पा सके शूद्र सद्गति धन-धान्य ऐश्वर्य इस भुवन || (२५-१५५)

भावार्थ: वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण को शाश्वत (परम) ब्रह्म गति प्राप्त होती है| शूद्र को पृथ्वी लोक में सद्गति, धन-धान्य और ऐश्वर्य मिलता है|

सहस्त्रनाम माँ जानकी समझो श्रोत आनंद पावन |
करे दूर भय सम महामारी अग्नि और प्रशासन || (२५-१५६)

भावार्थ: माँ जानकी के सहत्रनाम को पवित्र (परम) आनंद का श्रोत समझो| यह महामारी, अग्नि और प्रशासन (राजकीय) समान भय से दूर करता है|

दे शान्ति और करे भय-मुक्त इसका पठन पाठन |
महाघोर व्याधि अनावृष्टि अथवा संकट हेतु द्विषन || (२५-१५७)

भावार्थ: इसका पठन पाठन शान्ति देता है तथा महाघोर व्याधि, अनावृष्टि अथवा शत्रुओं द्वारा संकट से भय-मुक्त करता है|

हैं सीता इष्ट केंद्र इस सहस्त्रनाम स्तोत्र पावन |
हों पूर्ण इच्छा करे जो जन यह स्तोत्र पठन पाठन || (२५-१५८)

भावार्थ: इस पवित्र सहस्त्रनाम स्तोत्र के केंद्र में सीता इष्ट हैं| जो भी प्राणी इस स्तोत्र का पठन पाठन करेगा, उसकी इच्छाएं पूर्ण होंगी|

हैं माँ सीता विद्यमान सदैव सहित श्री रघुनन्दन |
हों नष्ट अघ घोर द्विज करें जब स्तोत्र श्रवण पठन || (२५-१५९)

भावार्थ: हे ब्राह्मण, श्री राम के साथ सदैव माँ सीता विद्यमान हैं| इस स्तोत्र के पढ़ने और सुनने से महापाप नष्ट हो जाते हैं|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'रामचंद्र का सहस्त्रनाम से जानकी की स्तुति करना' नाम पञ्चविंशति सर्ग समाप्त|

षड्विंशति सर्ग
श्री राम विजय वर्णन

कर इस प्रकार स्तुति सहस्त्रनाम जानकी पावन |
करबद्ध करते हुए प्रणाम कहने लगे श्री रघुनंदन || (२६-१)

भावार्थ: इस प्रकार सहस्त्रनाम से पवित्र जानकी की स्तुति कर, हाथ जोड़ प्रणाम कर, श्री रघुनंदन कहने लगे|

हो रहे भयभीत सब देख आपका रूद्र निरूपन |
हो शांत अब परमेश्वरी दिखाओ रूप रम्य-नयन || (२६-२)

भावार्थ: आपके इस रूद्र रूप से सभी भयभीत हो रहे हैं| हे परमेश्वरी, अब शांत हो सौम्य रूप दिखाओ|

कहे जब श्री राम कर सम्बोधन सिय यह मृदुल वचन |
कर शांत रुद्र रू प हो सौम्य तब दिए जानकी दर्शन || (२६-३)

भावार्थ: जब श्री राम ने यह मधुर वचन जनक-पुत्री से कहे, तब जानकी ने रुद्र रूप को शांत कर सौम्य रूप में दर्शन दिए|

था सुन्दर मुख सम कमल पुष्प दीप्तिमत जैसे स्वर्न |
द्वि भुजा सुगंधित तन केश सद्दश नील कमल लोचन || (२६-४)

भावार्थ: कमल के समान अति सुन्दर मुख स्वर्ण जैसी चमक, दो भुजाएं, सुगंधित शरीर, केश नील समान, कमल लोचन थे|

वृहद राजन्य ललाट रंग पाटल कर-पल्लव चरन |
समान श्री था अलिक शोभित लाल सिन्दूर चिह्न || (२५-५)

भावार्थ: ललाट रानियों जैसा चौड़ा था| हथेली और पग गुलाबी रंग के थे| लक्ष्मी के समान मस्तिष्क पर लाल सिन्दूर तिलक शोभित था|

थे सुशोभित रत्न जड़ित आभूषण समस्त उनके तन |
थी पड़ी अति सुन्दर स्वर्ण माल कंठ माँ दिव्य पावन || (२६-६)

भावार्थ: उनका समस्त शरीर रत्न जड़ित आभूषणों से सुशोभित था| दिव्य पवित्र माँ के कंठ में अति सुन्दर स्वर्ण माला पड़ी थी|

युक्त मधुर मुस्कान होंठ थे चमक रहे लाल वर्न |
नूपुर पग तन वस्त्र अम्बर था अत्यंत प्रसन्न वदन ||
अनंत महिमा दिव्य रूप नहीं यश का कोई निर्वहन || (२६-७)

भावार्थ: मधुर मुस्कान के साथ लाल रंग के होंठ चमक रहे थे| पग में नूपुर, शरीर में अम्बर वस्त्र और अत्यंत प्रसन्न मुख था| अनंत महिमा वाले दिव्य रूप के यश का कोई अंत नहीं था|

देखे जब यह रूप सौम्य सीता उत्कृष्ट श्री रघुनन्दन |
त्याग भय सम्बोधित जानकी कहने लगे यह वचन || (२६-८)

भावार्थ: जब उत्कृष्ट श्री राम ने सीता का यह सौम्य रूप देखा तो भय त्याग जानकी को सम्बोधित कर यह वचन बोले|

पाया फल मम जन्म व् तप देख परमेश्वरी निरूपन |
हो शांत हुईं प्रकट अग्रत हमारे हे देवी पावन || (२६-९)

भावार्थ: परमेश्वरी रूप देख मेरे जन्म और तप का फल मिल गया| शांत होकर पवित्र देवी आप हमारे सम्मुख प्रकट हुईं|

हैं आप ही सृष्टि सृजक और विद्यमान त्रिदेव तन |
हैं परागति आप हों विलय जिनमें काल प्रलय जन || (२६-१०)

भावार्थ: आप ही सृष्टि का निर्माण करती हैं| तीनों देव (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) आपके शरीर में विद्यमान हैं (अर्थात आप ही प्रधान हैं)| आप परागति हैं जिनमें प्राणी प्रलय काल में विलय हो जाते हैं|

कहें प्रमत तुम्हें सर्वोच्च अध्यात्म शिवा निरूपन |
हो तुम परे प्रकृति विकृति पूजें सभी सुर भूजन || (२६-११)

भावार्थ: बुद्धिमान तुम्हें सर्वोच्च अध्यात्म शिवा रूप कहते हैं| तुम सभी देवताओं और प्राणियों से पूजित प्रकृति (सकारात्मक ऊर्जा) और विकृति (नकारात्मक ऊर्जा) से परे हो|

हैं विद्यमान आप में शतश विराट पुरुष चतुरानन |
महादेव विद्या अविद्या नियति काल विस्मापन || (२६-१२)

भावार्थ: आप में सैकड़ों विराट पुरुष (विष्णु), ब्रह्मा, महादेव, विद्या, अविद्या, नियति, काल, माया विद्यमान हैं|

हो आप ही परम शक्ति परमेष्ठिनी देवी पावन |
निर्मुक्त सब भेद पर देतीं आश्रय सब भेद भिन्न || (२६-१३)

भावार्थ: आप हे परम शक्ति परमेष्ठिनी (त्रिदेव स्वरुप) पवित्र देवी हो| सब भेदों से निर्मुक्त परन्तु भिन्न भेदों की आश्रयदाता हो|

हे उत्कृष्ट पूजित तपस्विनी हो आप ईश्वर वर्पन् |
युक्त प्रभुत्व आप करें सृष्टि जनन पोषण हनन || (२६-१४)

भावार्थ: हे उत्कृष्ट पूजित तपस्विनी, आप ही ईश्वर रूप हैं| प्रभुत्व पा आप सृष्टि का जनन, पोषण और हनन करतीं हैं|

संगति से आपकी करें प्राप्त आनंद सुर भूजन |
हैं आप ही जो दे सकें यह सुख परे सीमा उल्लसन || (२६-१५)

भावार्थ: आपकी संगति से देवता और प्राणी आनंद प्राप्त करते हैं| आप ही आनंद की सीमा से परे यह सुख दे सकती हैं (अर्थात परमानंद दे सकती हैं)|

हैं आप ही रूप परमाकाश महाज्योति निरंजन |
शिव सर्वगत सूक्ष्म परब्रह्म पावन दिव्य सनातन || (२६-१६)

भावार्थ: आप ही परमाकाश (सीमा रहित), महाज्योति, निरंजन, शिव, सर्वगत, सूक्ष्म, परब्रह्म, पावन, दिव्य, सनातन रूप हैं|

हैं आप ही इंद्र मध्य सुर ब्रह्मा मध्य ब्रह्मवेत्तन |
कपिल मध्य सांख्यज्ञानी और मध्य रुद्र जतिन || (२६-१७)

भावार्थ: आप ही देवों के मध्य इंद्र, ब्रह्मज्ञानियों के मध्य ब्रह्मा, सांख्यज्ञानीयों के मध्य कपिल और रुद्रों के मध्य शंकर हैं|

हैं आप ही उपेंद्र मध्य आदित्य वसुओं में पावन |
गायत्री मध्य छंद और मध्य चतुर्वेद साम वेदन || (२६-१८)

भावार्थ: आप ही आदित्य के मध्य में उपेंद्र, वसुओं में पवित्र, छंद के मध्य में गायत्री और चारों वेदों के मध्य में साम ज्ञान हैं|

हैं विद्या में अध्यात्म गतियों में परमगति निर्मोचन |
सर्व शक्तियों की माया और काल में काल-बलिमन् || (२६-१९)

भावार्थ: विद्या में अध्यात्म, गतियों में परमगति मोक्ष, सर्वशक्तियों की माया और काल में काल-शक्ति हैं|

हैं ओंकार मध्य गुह्य मन्त्र ब्राह्मण मध्य चतुर वर्न |
गृहस्थ मध्य चार आश्रम और देवों में आप जतिन || (२६-२०)

भावार्थ: आप गुप्त मन्त्रों के मध्य में ओंकार (ॐ मन्त्र), चार वर्णों के मध्य में ब्राह्मण, चार आश्रमों के मध्य में गृहस्थ और देवताओं में महादेव हैं|

विद्यमान हृदय सब आप ही पुरुष मध्य भूजन |
हो गुह्य उपनिषद् मध्य सब उपनिषद देवी पावन || (२६-२१)

भावार्थ: सब प्राणियों के हृदय में विद्यमान आप उनमें पुरुष (श्रेष्ठ प्राणी) हैं| हे पवित्र देवी, आप उपनिषदों में गुप्त उपनिषद हैं|

हो आप नृपेश मध्य नृप युगों में सतयुग महन |
हो मार्गों में आदित्य मार्ग देता जो जग जीवन ||
मध्य वाणी आप ही सरस्वती देवी अभिभाषन || (२६-२२)

भावार्थ: सम्राटों में आप उनके ईश्वर, युगों में महान सतयुग, मार्गों में आदित्य मार्ग जिससे विश्व को जीवन मिलता है और वाणी में वक्ता-देवी सरस्वती हैं|

हो श्री मध्य सुन्दर नारि मायावी में नारायन |
सतियों में अरुंधती खगों में गरुड़ हरि वाहन || (२६-२३)

भावार्थ: सुन्दर स्त्रियों में आप श्री, मायावी में नारायण, सतियों में अरुंधती और पक्षियों में प्रभु के वाहन गरुड़ हैं|

मध्य चतुर्वेद सूक्त में आप ही हैं सूक्त परायन |
सामवेद में ज्येष्ठ साम   सावित्री मन्त्र पावन ||
यजुरों में शत रुद्र स्तोत्र समर्पित शंकर भगवन || (२६-२४)

भावार्थ: चारों वेदों के सूक्तों में आप प्रधान सूक्त, सामवेद में ज्येष्ठ साम, मन्त्रों में सावित्री, यजुरों में भगवान् शंकर को समर्पित शत रुद्र स्तोत्र हैं|

हैं आप पर्वतों में मेरु नागों में अनंत विषानन |
हैं आप ही सर्वस्व और समाहित आप में भुवन || (२६-२५)

भावार्थ: आप पर्वतों में मेरु, नागों में अनंत सर्प और सर्वस्व हैं|आप में ही पृथ्वी समाहित है|

हो आप परे सब काल अगोचर दिव्य निर्मल निरंजन |
आदि मध्य अंत रहित देवी करो स्वीकार मेरा नमन || (२६-२६)

भावार्थ: अगोचर, दिव्य, निर्मल, निरंजन, आप सब काल (भूत, वर्तमान, भविष्य) से परे हैं| आदि, मध्य, अंत-हीन (अनंत) देवी मेरा नमन स्वीकार करो|

है स्थित आप में समस्त वेदांत ज्ञान हे सृष्टि जनन |
परम आनंद मूर्ति देवी करता मैं आपको नमन || (२६-२७)

भावार्थ: हे सृष्टि के जन्म दाता, आप में ही समस्त वेदांत ज्ञान स्थित है| परम आनंद मूर्ति देवी मैं आपको नमन करता हूँ|

हैं आप ही केंद्र कहें जिसे अपरिवर्तनीय भूजन |
हे तेजोमय परे जन्म-मृत्यु करो स्वीकार मेरा नमन || (२६-२८)

भावार्थ: जिसे प्राणी अपरिवर्तनीय (अविभक्त) कहते हैं उसका केंद्र आप ही हैं| हे तेजोमय, जन्म-मृत्यु से रहित, मेरा नमन स्वीकार करो|

हे आदि अंत रहित जगत्जननी विश्व आत्मनिरुपन |
परे प्रकृति भोक्त्री सर्वज्ञ धारी विभिन्न वर्पन् ||
कूटस्थ प्रधान पुरुष रूप करूँ मैं आप को नमन || (२६-२९)

भावार्थ: हे आदि अंत रहित, जगत्जननी, विश्व की आत्मा, प्रकृति से परे, भोक्त्री, सर्वज्ञ, विभिन्न रूप धारी, कूटस्थ, प्रधान पुरुष रूप, मैं आप को नमन करता हूँ|

जगाश्रय निधान विश्व सर्वगत रहित जन्म-मरन |
सूक्ष्म रूप शाश्वत अनंत करो स्वीकार मेरा नमन || (२६-३०)

भावार्थ: जग को आश्रय देने वाली, विश्व निधि, सर्वगत, जन्म-मरण से रहित, सूक्ष्म रूप, शाश्वत, अनंत, मेरा नमन स्वीकार करो|

रूप प्रकृति बीज सत रज तम त्रिगुण ऐश्वर्य महन |
प्रमत विज्ञान वैराग्य धर्म रूपवत चौदह भुवन ||
स्थित जल थल नभ करूँ मैं आपको सादर नमन || (२६-३१)

भावार्थ: प्रकृति का स्वरुप, सत, रज और तम त्रिगुण का बीज, महान ऐश्वर्य वाली, विज्ञान, वैराग्य और धर्म की ज्ञाता, चौदहों लोकों की मूर्ति रूप, जल, थल और आकाश में स्थित, मैं आपको सादर नमन करता हूँ|

विचित्र भेद विराट पुरुष एकनाथ अनंत आगार जन |
आदिशक्ति सृष्टि बीज है शून्य बिना आप भुवन ||
वेद रूप देवी सनातन करूँ मैं आपको नमन || (२६-३२)

भावार्थ: विचित्र भेद (विविधता वाली), विराट पुरुष, एकनाथ, अनंत, प्राणियों का आवास, आदिशक्ति, सृष्टि बीज, जिनके बिना विश्व शून्य,
वेद रूप, देवी सनातन, मैं आपको नमन करता हूँ|

करें प्रकाशित जग स्व-तेज आप समान प्रतिदिवन् |
युक्त सहस्त्र शीश न सम कोई बल आपके त्रिभुवन ||
द्वि सहस्त्र भुजा धारी करतीं आप जल पर शयन ||
देवी सनातन करो स्वीकार मेरा बार बार नमन || (२६-३३)

भावार्थ: अपने तेज से सूर्य समान आप संसार को प्रकाशित करतीं हैं| सहस्त्र शीश युक्त आपके समान तीनों लोकों में कोई बलशाली नहीं है| द्वि सहस्त्र भुजा धारी आप जल (समुद्र) में शयन करती हैं| देवी सनातन, मैं आपको बार बार नमन करता हूँ|

हनु युक्त उग्र भयावी दन्त हैं आपके सम प्रसहन |
हैं पूजित आप त्रिकाल समस्त सुर भूजन त्रिभुवन ||
उग्र स्वरुप आपका है समान प्रलय काल दहन ||

नहीं शेष कुछ बाद आपके हैं आप ही हेतु विघटन ||
कर स्मरण यह स्वरुप उग्र करूँ मैं आपको नमन || (२६-३४)

भावार्थ: उग्र भयानक दांतों से युक्त आपका जबड़ा क्रूर पशु समान है| आप तीनों काल में समस्त सुर और प्राणियों से पूजित हैं (तीनों काल का यहां संभवतः अर्थ प्राणियों के बाल, युवा एवं वृद्ध अवस्था से है)| आपका उग्र स्वरुप प्रलय काल में जलती अग्नि के समान है| आपके पश्चात कुछ भी शेष नहीं है (अर्थात आपके बिना तीनों लोकों में कुछ भी नहीं है)| आप ही विनाश का रूप हैं (यहां माँ के शिव रूप का वर्णन है)| आपके इस उग्र स्वरुप का स्मरण करते हुए मैं आपको नमन करता हूँ|

हैं आप ही शेषनाग विद्यमान सागर धर सहस्त्र फन |
अनंत अप्रमेय अशेष भूधारी करूँ मैं आपको नमन || (२६-३५)

भावार्थ: आप ही समुद्र में विद्यमान सहस्त्र फन धारी शेषनाग हैं| अनंत, अप्रमेय (जिन्हें नापा नहीं जा सकता), अशेष (जिनके बिना कुछ नहीं), पृथ्वी को धारण करने वाली (शेष नाग रूप में), मैं आपको नमन करता हूँ|

हे अनंत देवी हैं आप युक्त लौकिक प्रमत द्वि नयन |
ब्रह्म रुप सम रुद्र करें प्रलय काल तांडव व्योमन ||
हो विस्मित स्वरूप विचित्र करूँ मैं आपको नमन || (२६-३६)

भावार्थ: हे अनंत देवी, आप लौकिक एवं बुद्धिमत, दोनों नेत्रों से युक्त हैं| ब्रह्म स्वरूपिणी, आप प्रलय काल में रूद्र के समान स्वर्ग में तांडव करती हैं| आपके विचित्र स्वरूप से आश्चर्यचकित मैं आपको नमन करता हूँ|

शोक-रहित विमल पावन अर्चित सुर असुर भूजन |
हे कोमल विशाल शुभ्र रुप करूँ मैं सादर नमन || (२६-३७)

भावार्थ: हे शोक-रहित, विमल, पावन, सुर, असुर और प्राणियों से पूजित, कोमल, विशाल, दीप्तिमत रुप, मैं सादर नमन करता हूँ|

कर रहे यह नमन खड़े सम्मुख सिय श्री रघुनन्दन |
फिर हुए खड़े पार्श्व भाग जानकी करबद्ध भगवन || (२६-३८)

भावार्थ: इस प्रकार सीता के सम्मुख खड़े श्री राम यह वंदन कर रहे हैं| तत्पश्चात वह हाथ जोड़े सीता के पार्श्व भाग में खड़े हो गए|

सुन वचन जगत्पति हँसते हुए बोलीं सीता यह वचन |
धर ध्यान सुनो मेरे यह प्रमत वचन हे जगत भगवन || (२६-३९)

भावार्थ: जगत्पति के यह वचन सुन हँसते हुए सीता यह वचन बोलीं, 'हे जगत के स्वामी, ध्यान धर कर मेरे यह बुद्धिमत वचन सुनिए|'

किया धारण मैंने यह रुद्र रूप हेतु वध सहस्त्रानन |
करूँ निवास इस रूप उत्तर मानसरोवर भगवन || (२६-४०)

भावार्थ: हे भगवन, यह जो मैंने सहस्त्रमुख रावण का वध करने को रुद्र रूप धारण किया है, इस रूप में मानसरोवर के उत्तर में निवास करूँगी|

हो आप नीलवर्ण पर हुए लाल हेतु घायल क्षेत्र रन |
करूँ मैं अब धारण मिश्रित नील और लाल वर्न ||
लौट अवध करूँ निवास इस नव वर्ण संग भगवन || (२६-४१)

भावार्थ: आप (स्वाभाविक) नील वर्ण के हैं परन्तु रण क्षेत्र में घायल होने से लाल हो गए हैं| मैं अब नीले और लाल रंग के मिश्रित रंग को धारण कर आपके साथ अयोध्या लौट इस नए वर्ण के साथ निवास करूँगी|

हे अवध पति श्री राम मांगिए वरदान हो जो मन्मन् |
सुन वचन सिय करबद्ध किए स्वीकार वर भगवन || (२६-४२)

भावार्थ: 'हे अवध पति श्री राम, आप की जो इच्छा हो वरदान मांगिए|' सीता के यह वचन सुन करबद्ध भगवान् ने उनका वर स्वीकार किया|

हे विप्र भारद्वाज तब मांगने लगे वर रघुनन्दन |
सुभग देवी सीता जो दिखाया अभी तुमने वर्पन् || (२६-४३)
रहे समाहित मेरे हिय सदैव दो यह वर हो प्रसन्न |
हे सुभग मम भाई और मित्र सम विभीषण पुत्र-पवन || (२६-४४)
समस्त सेना हुई जो जर्जित हेतु वध रावण इस रन |
मिल जाएं मुझ फिर से है असहनीय यह वियोजन || (२६-४५)

भावार्थ: हे ब्राह्मण भारद्वाज, तब रघुनंदन वर माँगने लगे| 'हे सौभाग्यवती सीता, जो आपने यह स्वरुप अभी दिखाया, यह मेरे हृदय में सदैव समाहित रहे, प्रसन्न हो ऐसा वर दीजिए| हे सुभग, मेरे भ्राता और विभीषण, हनुमान समान मित्र तथा सेना जो रावण के साथ उसका वध करने हेतु युद्ध में जर्जित हो गई है, वह मुझे फिर से मिल जाएं| उनका वियोग मेरे लिए असहनीय है|'

होने लगी वर्षा पुष्प और बजने लगी दुन्दभी गगन |
हो रही चंहु ओर जय जयकार सीता और रघुनन्दन || (२६-४६)

भावार्थ: तब गगन में दुन्दभी बजने लगी और पुष्प वर्षा होने लगी| चारों ओर सीता और श्री राम की जय जयकार होने लगी|

तब बोलीं हंस जानकी सुनो हे अवधपति रघुनन्दन |
होगा अवश्य ऐसा जो किए इच्छा जगत्पति भगवन ||
तब कर विदा सब देव हुई इच्छा लौटें अब अवध पट्टन || (२६-४७)

भावार्थ: तब हंसते हुए जानकी बोलीं, 'हे अवधपति रघुनन्दन सुनो, ऐसा अवश्य होगा जैसी जगत्पति भगवान् ने इच्छा की|' तत्पश्चात सभी देवताओं को विदा कर (श्री राम की) इच्छा हुई कि अवध नगर लौटें|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'श्री राम विजय वर्णन' नाम षड्विंशति सर्ग समाप्त|

सप्तविंशति सर्ग
श्री राम का अयोध्या में आना

सहित प्रेम भर भुजा सीता चढ़े विमान पुष्पक भगवन |
दिए आज्ञा विमान चलो अवध तब जग पूज्य रघुनन्दन || (२७-१)

भावार्थ: प्रेम सहित भुजा में सीता जी को भरकर भगवान् (श्री राम) पुष्पक विमान पर चढ़े| तब जग पूज्य रघुनन्दन ने विमान को अवध चलने की आज्ञा दी|

सुन आदेश हरि पहुंचा विमान तुरंत अवध पट्टन |
स्वर विमान से हुए हर्षित भरत आदि सब पुरजन ||
दौड़े देखें झलक एक इष्ट अपने युक्त अश्रु नयन ||
कर दंडवत राम जानकी कर रहे सब सादर नमन || (२७-२)

भावार्थ: प्रभु का आदेश सुन विमान तुरंत अवध नगर पहुँच गया| विमान का स्वर सुन सभी भरत आदि (अवध) निवासी प्रसन्न हुए| नेत्रों में अश्रु लिए अपने इष्ट की एक झलक देखने दौड़ पड़े| राम और सीता को सब दंडवत कर सादर नमन कर रहे हैं|

देख सीता संग ऋषि विमान हुए हर्षित उनके मन |
भरे नेत्र आनंद अश्रु कर रहे प्रणाम वह प्रियजन || (२७-३)

भावार्थ: विमान में सीता को ऋषियों के साथ देखकर उनके मन हर्षित हुए| नेत्रों में आनंद अश्रु भरे वह प्रियजन प्रणाम करने लगे|

तब आए राम महल संग सीता ऋषि और पुरजन |
सुनाए कथा कीं कैसे जानकी सहस्रमुख का हनन || (२७-४)

भावार्थ: तब श्री राम सीता जी, ऋषियों और पुर वासिओं के साथ महल में आए और उन्होंने कथा सुनाई कि किस प्रकार सीता जी ने सहस्रमुख का वध किया|

हो विस्मित तब करने लगे धन्य धन्य हे सीता पावन |
जाना अब हमने तत्व माँ सीता स्वयं मुख रघुनन्दन || (२७-५)

भावार्थ: आश्चर्यचकित हो तब पवित्र सीता को सब धन्य धन्य करने लगे| स्वयं भगवान् के मुख से हमने माँ सीता का तत्व अब जाना|

कर विचार कितने सुभग की विनती करबद्ध ऋषिगन |
दीजिए आज्ञा लौटें आश्रम पा आपका स्वस्त्ययन ||
किए विदा तब सादर सभी ऋषिगण श्री राम भगवन || (२७-६)

भावार्थ: हम कितने भाग्यशाली हैं, यह विचार कर ऋषिगण करबद्ध विनती करने लगे| आपके आशीर्वाद से अब हम आश्रम लौटें, आज्ञा दीजिए| तब सभी ऋषिगण को सादर श्री राम भगवान् ने विदा किया|

हो प्रसन्न दिए आशीष ऋषिगण सीता और भगवन |
चल दिए निज आश्रम सब रख हिय पग कमल रघुनन्दन || (२७-७)

भावार्थ: प्रसन्न हो सभी ऋषिगण ने सीता सहित भगवान् को आशीष दिए| हृदय में रघुनन्दन के कमल समान चरणों को धर सब अपने अपने आश्रम चले गए|

लौट भवन मिले सब माता प्रेम से सीता रघुनन्दन |
किया स्थापित राम राज्य तब श्री राम इस भुवन ||
कर निष्कंटक भू किए अनेक यज्ञ हेतु हित सब जन || (२७-८)

भावार्थ: भवन लौट सीता और राम सभी माताओं से प्रेम सहित मिले| इस पृथ्वी पर तब उन्होंने राम-राज्य की स्थापना की| पृथ्वी को निष्कंटक कर सभी के हित के लिए अनेक यज्ञ किए|

नद सरयू तट किए राम यज्ञ दान आदि कर्म महन |
किए राज्य इस प्रकार वर्ष सहस्त्र एकादश भगवन || (२७-९)

भावार्थ: सरयू नदी के तट पर श्री राम ने यज्ञ दान आदि महान कार्य किए| इस प्रकार ११ सहस्त्र वर्ष तक भगवान् ने राज्य किया|

सुर किन्नर गन्धर्व विद्याधर महासर्प और भूजन |
करें सदैव सब प्रणाम गुण निधि श्री राम भगवन || (२७-१०)

भावार्थ: देवता, किन्नर, गंधर्व, विद्याधर, महासर्प और प्राणी, सब सदैव गुणों की निधि भगवान् श्री राम को प्रणाम करते रहते हैं|

महर्षि भारद्वाज किया मैंने यह हेतु जन हित कथन |
हैं रामचरित्र कथा अनेक पर है यह विशेष वर्णन || (२७-११)

भावार्थ: हे महर्षि भारद्वाज, मैंने यह कथा जग-कल्याण हेतु कही|रामचरित्र की कथाएं तो अनेक हैं लेकिन यह विशेष विवरण है|

भय पुनरुक्ति हूँ असमर्थ कर सकूं अधिक विवरन |
कहा तुमसे रहस्य जो था गुप्त अब तक हेतु चतुरानन || (२७-१२)

भावार्थ: पुनरुक्ति (दुहराने) के भय से मैं अधिक विवरण करने में असमर्थ हूँ| मैंने तुमसे वह रहस्य कहा जो ब्रह्मा के कारण अब तक गुप्त था (अर्थात ब्रह्मदेव ने अब तक गुप्त रख रखा था)|

किया मैंने वेद सम्मत अद्भूतोत्तरकांड वर्णन |
हो प्राप्त ब्रह्म करे जो जन इसका श्रवण पठन || (२७-१३)

भावार्थ: मैंने वेद सम्मत अद्भूतोत्तरकांड का वर्णन किया है| जो भी प्राणी इसका श्रवण और पठन करेगा उसे ब्रह्म की प्राप्ति होगी|

करें प्रयास पढ़ सकें एक या दो छंद प्रति दिन |
पढ़ें प्रातः या दोपहर मिले अवश्य उन्हें निर्मोचन || (२७-१४)

भावार्थ: प्रयास करें कि एक या दो छंद प्रतिदिन पढ़ें| प्रातः अथवा दोपहर को पढ़ें, मोक्ष की प्राप्ति अवश्य होगी|

हो प्राप्त पुण्य सम पढ़ें एक सहस्त्र बार रामायन |
मिलता वह पुण्य पढ़ें मात्र एक छंद यह गीतबंधन || (२७-१५)

भावार्थ: जो पुण्य एक सहस्त्र बार रामायण (श्री वाल्मीकि रामायण) को पढ़ने से प्राप्त होता है, वह इस महाकाव्य के मात्र एक छंद पढ़ने से प्राप्त होता है|

नहीं मिला जिन्हें सौभाग्य कर सकें यह काव्य पठन |
समझो उन्हें सम नहीं आ सके बाहर गर्भ वह जन || (२७-१६)

भावार्थ: जिन्हें इस काव्य को पढ़ने का सौभाग्य नहीं मिला, उन्हें उन प्राणियों के समान समझो जो गर्भ से बाहर ही नहीं आ सके (अर्थात उनकी गर्भ में ही मृत्यु हो गई)|

नहीं करना पड़ता प्रवेश पुनः माँ गर्भ उन भूजन |
मिला सौभाग्य जिन्हें इस काव्य का श्रवण पठन ||
चतुर्वेदों से देता अधिक उत्कृष्ट फल इसका पठन || (२७-१७)

भावार्थ: उन प्राणियों को माँ के गर्भ में दोबारा प्रवेश नहीं करना पड़ता जिन्हें इस काव्य का श्रवण या पठन करने का सौभाग्य मिला (अर्थात मोक्ष मिल जाता है)| इसके पढ़ने का फल चारों वेदों के पठन से भी अधिक उत्तम है|

समझो इसे सत्य किया इसका अनुभव स्वयं भगवन |
जब की उपमा फल वेद और यह महाकाव्य पठन || (२७-१८)

भावार्थ: इसे सत्य समझो| इसका स्वयं भगवान् ने अनुभव किया जब उन्होंने इस महाकाव्य के पढ़ने के फल की तुलना वेदों से की|

स्वर्ण नद तट यह कथा कही मैंने प्रथम देवराजन |
जब किए बार बार स्वर्ग अधिपति मुझ से निवेदन ||
कही वही अद्भूतोत्तरकांड कथा तुमसे ब्राह्मन || (२७-१९)

भावार्थ: स्वर्ण नदी के तट पर जब स्वर्ग के सम्राट देवराज इंद्र ने मुझ से बार बार विनती की तब मैंने पहले यह कथा उन्हें सुनाई| हे ब्राह्मण, वही अद्भूतोत्तरकांड कथा तुमसे कही|

था यह महारत्न स्थित हिय सम क्षीर सागर चतुरानन |
किए श्रवण ब्रह्मऋषि नारद यह स्वयं ब्रह्मदेव आनन ||
पाया मैंने यह ज्ञान मुख नारद उत्कृष्ट ब्राह्मन || (२७-२०)

भावार्थ: हे उत्कृष्ट ब्राह्मण, यह महारत्न ब्रह्मदेव के क्षीर सागर समान हृदय में स्थित था| ब्रह्मऋषि नारद ने इसका श्रवण स्वयं ब्रह्मदेव के मुख से किया| मैंने यह ज्ञान नारद के मुख से प्राप्त किया|

है ब्रह्मलोक में अंकित पूर्ण यह अद्भुत रामायन |
कुछ कुछ भू कुछ पाताल और कुछ इंद्र व्योमन || (२७-२१)

भावार्थ: यह अद्भुत रामायण पूर्णतः ब्रह्मलोक में अंकित है| कुछ कुछ पृथ्वी पर, कुछ पाताल में और कुछ इंद्र के स्वर्ग में|

जानें पूर्णतः यह कथा मैं नारद और चतुरानन |
नहीं कोई चौथा जो जाने यह कथा असाधारन || (२७-२२)

भावार्थ: इस कथा को पूर्णतः मैं, नारद और ब्रह्मदेव जानते हैं| कोई चौथा नहीं है जिसे इस असाधारण कथा का ज्ञान हो|

सुनो सूची की जो मैंने तुम्हें अद्भुत कथा वर्णन |
वृतांत जन्म श्री राम तत्पश्चात श्रीमती लक्षन || (२७-२३)

दशानन का दण्डक वन जा ऋषि रुधिर संकलन |
श्री अपराध और ब्रह्मऋषि नारद श्राप वर्णन || (२७-२४)
हेतु नारद श्राप जन्म सीता मंदोदरी गर्भासन |
परशुराम विवाद और उनको विश्वरूप दर्शन || (२७-२५)
ऋष्यमूक पर भिक्षु रूप हनुमान का राम मिलन |
दिए श्री राम पवन-पुत्र को चतुर्भुज रूप दर्शन ||
श्री राम की मित्रता संग सुग्रीव कपि राजन || (२७-२६)

भावार्थ: अब तक जो मैंने तुम्हें अद्भुत वर्णन किया, उसकी सूची सुनो| राम के जन्म का वृतांत और श्रीमती के लक्षण (चरित्र वर्णन)| दशानन (लंका नरेश रावण) का दण्डक वन में ऋषियों का रुधिर एकत्रित करना| श्री (लक्ष्मी) का अपराध और ब्रह्मऋषि का उनको श्राप देने का वर्णन| नारद के श्राप के कारण सीता का मंदोदरी के गर्भ से जन्म| परशुराम का (श्री राम से) विवाद और उनको विश्वरूप दिखाना| ऋष्यमूक पर्वत पर भिक्षु रूप में हनुमान जी का श्री राम से मिलन| हनुमान जी को श्री राम का चतुर्भुज रूप का दर्शन देना | कपि सम्राट सुग्रीव से श्री राम की मित्रता|

सागर शोषण हेतु क्रुद्ध लक्ष्मण तन ताप उत्पन्न |
दशानन हनन और संग सिय राम अवध निवर्तन || (२७-२७)

भावार्थ: क्रुद्ध लक्ष्मण के शरीर से उत्पन्न ताप से समद्र का सूखना, दशानन का मरण और सीता सहित श्री राम का अयोध्या लौटना|

कीं माँ जानकी स्व-मुख सहस्रमुख रावण वर्णन |
तब संग सीता और सेना राम मानसरोवर गमन || (२७-२८)
रण श्री राम संग सहस्रमुख पुष्कर द्वीप वर्णन |
हुए राम घायल और मूर्छित हेतु बाण रावन ||
ले रुद्र ईश्वरी रूप सीता किया रावण हनन || (२७-२९)

भावार्थ: माँ जानकी के मुख से सहस्रमुख रावण का वर्णन सुन राम का सीता और सेना सहित मानसरोवर पर जाना| श्री राम का पुष्कर द्वीप में सहस्रमुख रावण से युद्ध

का वर्णन| रावण के बाण से राम का घायल और मूर्छित हो जाना| सीता का रुद्र ईश्वरी रूप ले रावण का वध करना|

कर वध रावण सहित परिजन श्री राम अवध निवर्तन |
मिले भक्ति सिय राम निःसंदेह करे जो जन यह पठन || (२७-३०)

भावार्थ: रावण का उसके परिवार सहित वध कर श्री राम का अवध में लौटना| जो प्राणी इसका पठन करेगा उसे निःसंदेह सीता राम की भक्ति मिलेगी|

हे विप्र है यह चरित्र राम जानकी अत्यंत पावन |
पाए मोक्ष हों दूर कष्ट हों नष्ट अघ करे जो जन पठन ||
हो प्राप्त फल सम तीर्थ महायज्ञ और विजय रन || (२७-३१)

भावार्थ: हे विप्र, यह राम और जानकी का चरित्र अति पवित्र है| जो प्राणी इसका पठन करता है उसके कष्ट दूर होते हैं, पाप नाश होते हैं और मोक्ष की प्राप्ति होती है| तीर्थ एवं महायज्ञ के सामान फल मिलता है और युद्ध में विजय प्राप्त करता है|

करे जो भूजन भाव अचिन्त्य अवध नृप राम भजन |
है समान करना भजन एक भाव माँ सीता पावन ||
हो मुक्त न ले जन्म कभी गर्भ माता वह भूजन || (२७-३२)

भावार्थ: जो प्राणी अचिन्त्य भाव से अवध नरेश राम का भजन करता है वह माँ सीता के एक भाव से भजन करने के समान है| उसे मुक्ति मिलती है| वह प्राणी माँ के गर्भ से कभी जन्म नहीं लेता|

श्री वाल्मीकि रचित आदिकाव्य रामायण के अद्भुतोत्तर-काण्ड में 'श्री राम का अयोध्या में आना' नाम सप्तविंशति सर्ग समाप्त|

श्री राम आरती

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।
आरती उतारूँ प्यारे तुमको मनाऊ।।
अवध विहारी तेरी आरती उतारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

कनक सिंहासन विराजत जोड़ी।
दशरथ नंदन जनक किशोरी।।
युगुल छबि को सदा निहारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

बाम भाग शोभति जग जननी।
चरण बिराजत है सुत अंजनी।।
उन चरणों को सदा पखारू।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

आरती हनुमंत के मन भाये।
राम कथा नित शिव जी गाये।।
राम कथा हृदय में उतारू।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

चरणों से निकली गंगा प्यारी।
वंदन करती दुनिया सारी।।
उन चरणों में शीश नवाऊँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

सीता जी आरती

आरती श्री जनक दुलारी की।
सीता जी रघुवर प्यारी की॥
आरती श्री जनक दुलारी की।

जगत जननी जग की विस्तारिणी।
नित्य सत्य साकेत विहारिणी॥
परम दयामयी दिनोधारिणी॥
आरती श्री जनक दुलारी की।
सीता जी रघुवर प्यारी की॥

सती श्रोमणि पति हित कारिणी।
पति सेवा वित्त वन वन चारिणी॥
पति हित पति वियोग स्वीकारिणी॥
त्याग धर्म मूर्ति धरी की॥
आरती श्री जनक दुलारी की।
सीता जी रघुवर प्यारी की॥

विमल कीर्ति सब लोकन छाई।
नाम लेत पवन मति आई॥
सुमिरत काटत कष्ट दुख दाई॥
शरणागत जन भय हरी की॥
आरती श्री जनक दुलारी की।
सीता जी रघुवर प्यारी की॥

श्री राम कथा संस्थान उद्देश्य

- श्री राम कथा संस्थान भगवान् स्वामी श्री रामानंद जी महाराज (१४वीं शताब्दी) की शिक्षाओं पर आधारित एक सनातन वैष्णव धार्मिक संस्था है।
- श्री संस्थान का सिद्धांत धर्म, जाति, लिंग एवं नैतिक पृष्ठभूमि के आधार पर भेदभाव रहित है। 'हरि को भजे सो हरि को होई' संस्थान का मूल मन्त्र है।
- श्री संस्थान का मानना है कि शुद्ध हृदय एवं निःस्वार्थ भाव भक्ति ईश्वर को अति प्रिय है। सभी प्रभु-भक्त एक दूसरे के भाई बहन हैं।
- ब्रह्म मनोभाव: भगवान् श्री राम, माता सीता एवं उनके विविध अवतार ही सर्वोच्च ब्रह्म हैं। वह सर्व-व्याप्त एवं विश्व के सरंक्षक हैं।
- आत्मा मनोभाव: आत्मा का अस्तित्व सर्वोच्च ब्रह्म के परमानंद पर निर्भर है। आत्मा को सर्वोच्च ब्रह्म ही निर्देशित एवं प्रबुद्ध करते हैं। श्री राम, माता सीता एवं उनके अवतार ही जीवन का अंतिम उद्देश्य मोक्ष दिलाने में समर्थ हैं।
- माया मनोभाव: माया प्रकृति के तीन गुण - सत, रज और तमस, के प्रभाव से प्राकट्य होती है। माया को सर्वोच्च ब्रह्म ही नियंत्रित करने में समर्थ हैं। सर्वोच्च ब्रह्म पर ध्यान केंद्र करने से माया का विनाश होता है, और जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिल मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- श्री संस्थान इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निरंतर सनातन धार्मिक पत्रिकाएं, पुस्तकें, पुस्तिकाएं, काव्य ग्रन्थ आदि की रचनाएं एवं प्रकाशन करता है। साथ ही, समय समय पर श्री राम एवं अन्य धार्मिक कथाओं के संयोजन का भी प्रयास करता रहता है।

श्री राम कथा संस्थान
३५, मायना रिट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
Web https://shriramkatha.org
Email: srkperth@outlook.com

कवि: डॉ यतेंद्र शर्मा

एक हिन्दू सनातन परिवार में जन्मे डॉ यतेंद्र शर्मा की रूचि बचपन से ही सनातन धर्म ग्रंथों का पठन पाठन एवं श्रवण में रही है। संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा उन्होंने अपने पितामह श्री भगवान् दास जी एवं नरवर संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य श्री सालिग्राम अग्निहोत्री जी से प्राप्त की और पांच वर्ष की आयु में महर्षि पाणिनि रचित संस्कृत व्याकरण कौमुदी को कंठस्थ किया। उन्होंने तकनीकी विश्वविद्यालय ग्राज़ ऑस्ट्रिया से रसायन तकनीकी में पी.अच्.डी की उपाधी विशिष्टता के साथ प्राप्त की। सन १९८९ से डॉ यतेंद्र शर्मा अपने परिवार सहित पर्थ ऑस्ट्रेलिया में निवास कर रहें हैं, तथा पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के खनन उद्योग में कार्य रत हैं।

सन २०१६ में उन्होंने अपने कुछ धार्मिक मित्रों के साथ एक धार्मिक संस्था 'श्री राम कथा संस्थान पर्थ' की स्थापना की। यह संस्था श्री भगवान् स्वामी रामानंद जी महाराज (१४वीं- १५वीं शताब्दी) की शिक्षाओं से प्रभावित है तथा समय समय पर गोस्वामी तुलसी दास जी रचित श्री राम चरित मानस एवं अन्य धार्मिक कथाओं का प्रवचन, सनातन धर्म के महान संतों, ऋषियों, माताओं का चरित्र वर्णन एवं धार्मिक कथाओं के संकलन में अपना योगदान करने का प्रयास करती है।

श्री राम कथा संस्थान पर्थ
३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
Web https://shriramkatha.org
Email: srkperth@outlook.com

श्री राम कथा संस्थान पर्थ

३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५